श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचितः

श्रीसिद्धान्तशिखामणिः

(भोजपुरी भावानुवादेनसह)



शैव भारती शोध प्रतिष्ठान

डी.३५/७७, जंगमवाडीमठ, वाराणसी - २२१००१

शोधप्रकाशन ग्रंथमाला – ७५

श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचितः

श्रीसिद्धान्तशिखामणिः

(भोजपुरी भावानुवादेनसह)

प्रेरकः
काव्य-सर्वदर्शनतीर्थ, वेदान्ताचार्य, विद्यावारिधि, विद्यावाचस्पति
श्रीजगद्गुरु विश्वाराध्य ज्ञानसिंहासनाधीश्वर
श्री १००८ जगद्गुरू डॉ. चंद्रशेखर शिवाचार्य महास्वामीजी
जंगमवाड़ी मठ, श्रीक्षेत्र काशी, वाराणसी

भावानुवादकः
प्रवीण कुमार द्विवेदी
शोध छात्र, विशिष्ट संस्कृत अध्ययन केन्द्र
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली – ११००६७

शैवभारती शोधप्रतिष्ठान
जंगमवाड़ी मठ, वाराणसी – २२१ ००१

प्रकाशक :
शैवभारती शोधप्रतिष्ठान
डी. ३५/७७, जंगमवाडी मठ
वाराणसी - २२१ ००१

प्रथमावृत्ती : २०१५

ISBN : 978-93-82639-15-2

मूल्य : ३००.००

अक्षरसंयोजन
शिवशक्ती कम्प्यूटर प्रोसेस
जंगमवाडी मठ, वाराणसी - २२१ ००१

मुद्रक
मित्तल ऑफसेट
कौशलेशनगर, सुन्दरपुर, वाराणसी

।। ॐ नमः पञ्चजगद्गुरुभ्यः ।।

शैवभारती शोध प्रतिष्ठान के संस्थापक
श्रीकाशीविश्वाराध्य ज्ञानसिंहासनाधीश्वर

श्री १००८ श्री डॉ. चन्द्रशेखर शिवाचार्य महास्वामी जी का



शुभाशीर्वचन

श्रीसिद्धान्तशिखामणि सनातन वीरशैव धर्म का धर्मग्रन्थ है। अट्ठाईस शैवागमों के आधार पर श्रीशिवयोगी ने इसकी रचना की। षट्स्थल सिद्धान्त का १०१ स्थलों में विस्तार से विवेचन इस ग्रन्थ में किया गया है। एकोत्तरशतस्थलों का यह एक अपूर्व ग्रन्थ है। श्रीसिद्धान्तशिखामणि एक दार्शनिक महाकाव्य भी है। अनेक विद्वानों ने इसके महाकाव्यत्व के विषय में विवेचन किया है। श्रीसिद्धान्तशिखामणि ग्रन्थ को पारायण ग्रन्थ के रूप में सभी भाषाओं के अनुवाद के साथ प्रकाशित करने की योजना हमारे मन में आयी। इस विचार को विविध विद्वानों के समक्ष उपस्थापित करने पर बहुत से विद्वानों ने विविध भाषाओं में इसका अनुवाद करने का कार्य स्वीकार किया। अपनी स्वीकृति के अनुसार तिरुपति विश्वविद्यालय के डॉ. के. प्रताप (तेलगु), केरल की श्रीमती अम्बिका अप्पूकुट्टन् (मलयालम), महाराष्ट्र सोलापुर के डॉ. शे. दे. पसारकर (मराठी पद्य), पाण्डिचेरी के डॉ. टी. गणेशन (तमिल), कर्नाटक गुलबर्गा के डॉ. चन्द्रशेखर कपाले (मराठी गद्य), वाराणसी के डॉ. राधेश्याम चतुर्वेदी (हिन्दी), बेंगलुरू के डॉ. एम. शिवकुमार स्वामी (अंग्रेजी), मैसूर के विद्वान् जी. राजशेखरय्या (संस्कृत), वाराणसी के डॉ. प्रभुनाथ

द्विवेदी (अवधी पद्य), वारणसी के डॉ. हरिप्रसाद अधिकारी (नेपाली), अहमदाबाद की श्रीमती करुणा त्रिवेदी (गुजराती), यूक्रेन देश की कुमारी यूलिया क्रोन्चोव (गौरी) (रसियन भाषा) ने अनुवाद कार्य किया है। विशिष्ट संस्कृत अध्ययन, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली के शोध छात्र प्रवीण कुमार द्विवेदीजी से इस अनुवाद के विषय में जब चर्चा हो रही थी तब उन्होंने भोजपुरी भाषा में अनुवाद करने का अपना विचार व्यक्त किया। यह सुन कर हमें अपार हर्ष हुआ और प्रवीण कुमार को भोजपुरी में अनुवाद करने का आशीर्वाद हमने प्रदान किया। उन्होंने शीघ्र ही अनुवाद कार्य प्रारम्भ किया और मात्र दो दिनों के मध्य श्रीसिद्धान्तशिखामणि के तीन परिच्छेदों का भोजपुरी अनुवाद करके हमें दिखाया तथा उसी उत्साह में सम्पूर्ण ग्रन्थ का भोजपुरी अनुवाद करके सिद्ध किया। उसी ग्रन्थ का लोकार्पण करते हुए हमें अपार हर्ष का अनुभव कर रहे हैं। प्रवीण कुमार एक उदयोन्मुख विद्वान् हैं। वीरशैव सिद्धान्त के प्रति इनके मन में अनुराग है इसीलिए इन्होंने शिवाद्वैतमञ्जरी जो वीरशैव सिद्धान्त का शास्त्रार्थ रूपी ग्रन्थ है उसका अनुवाद कार्य हिन्दी में किया है। इसके अतिरिक्त काशी पीठारोहण के रजत जयन्ती महोत्सव के उपलक्ष्य में आयोजित अन्तार्राष्ट्रीय वीरशैवागम संगोष्ठी में उत्तर प्रदेश, बिहार तथा दिल्ली प्रदेश के विद्यमान वीरशैव साहित्य मूल तथा अनुवाद और उसकी लोकोपयोगिता के विषय में अपना शोध पत्र प्रस्तुत करके एक विनूतन कार्य सम्पन्न किया है। हम आशा करते हैं कि भविष्य में भी इनके द्वारा समाजोपयोगी साहित्य की रचना निरन्तर होती रहे। भगवान् विश्वनाथ, श्रीजगद्गुरु विश्वाराध्य से हम प्रार्थना करते हैं कि पं. प्रवीण कुमार द्विवेदी को उत्तम आरोग्य और पूर्ण आयुष्य प्रदान करें। अन्ततः हम इनको मङ्गल आशीर्वाद प्रदान करते हैं।

इत्याशीषः

गुरुपूर्णिमा
वि.सं. २०७०
(१२/०७/२०१४)

भूमिका

भारत में जेतना आर्यभाषा बाड़ी सन ओकनी में भोजपुरी हिन्दी के परमुख उपभाषा के रूप में बिहार के तीन गो बोली मैथिली, मगही आ भोजपुरी में से एगो बाटे । आज मैथिली के संवैधानिक रूप में भाषा के दर्जा मिल गईल बाटे । बाकिर भोजपुरी भी प्रकिया (Process) में लागल बिया । भोजपुरी भाषा उत्तरप्रदेश के नव गो जिला वाराणसी, मीरज़ापुर, गाजीपुर, बलिया, गोरखपुर, देवरिया, जौनपुर, आजमगढ़ आ बस्ती (के कुछ हिस्सा) में बोलल जाले । एही तरह ई भाषा बिहार आ झारखण्ड के भोजपुर, रोहतास, कैमूर, बक्सर, सारन, सिवान, गोपालगंज, महाराजगंज, पूर्वी चंपारन, पश्चिमी चंपारन आ रांची आदि जिला में मातृभाषा के रूप में बोलल जाला । एकरा अलावा बंबई, कलकत्ता आ आसाम के चाय बागानन में रहेवाला लाखन-करोड़न लोग के द्वारा ई बोलल जाले ।

भोजपुरी भाषा के अंतरराष्ट्रीय गौरव भी मिलल बाटे । भारत के बाहर मारीशस, फीजी, सूरिनाम, ब्रिटिश गाईना आ उगाण्डा में भी ई मातृभाषा के रूप में बोलल जाले । ए तरह से एकर क्षेत्र विस्तार लगभग पचास हजार वर्ग मील में फईलल बाटे । एकर बोलेवाला लोग के संख्या जनगणना २००१ के अनुसार ३३०९९४९७ (तीन करोड़ तीस लाख निन्यानबे हजार चार सौ सत्तानबे) बाटे जवन हिन्दी के छोड़के कवनो भी भाषा के बोलेवाला लोग के नईखे ।[१]

एतना बड़हन जन समुदाय के भाषा भईला के बाद भी एकरा खातिर बहुत ही कम परयास हो रहल बाटे । आज भी भोजपुरी भाषा के लगे आपन व्याकरन नईखे । कवनो भी भाषा के विद्वत्-समाज में बईठावे खातिर ओकर व्याकरन के रचना बहुते जरूरी बाटे । साथ ही एकर साहित्य रचना के भी काम में कमी आ गईल बाटे । भोजपुरी भाषा साहित्य के इतिहास में भी गौरव के अनुभव एही से ना कर सकेला काहे से कि ए भाषा के बोले आ समझेवाला त बहुते लोग बा बाकिर एकर साहित्य रचना अऊरी भाषा सन के तुलना में बहुते कम बाटे ।

---

१. वैचारिकी (द्वैमासिक हिन्दी शोध पत्रिका, जनवरी-फरवरी २०१२) डॉ. बाबूलाल शर्मा, भारतीय विद्या मन्दिर शोध प्रतिष्ठान, नई दिल्ली (शोध लेख कन्नड़ और भोजपुरी लोकगीतों में नारीजीवन, लेखक डॉ. जितेन्द्र कुमार सिंह) पृष्ठ संख्या ७६ (हिन्दी भाषा से भोजपुरी में अनुदित ।

संस्कृत भाषा सगरी भाषा सन के महतारी बिया। ई खाली भाषा ही ना बल्कि ज्ञान के खजाना के रूप में ए संसार मे जानल जाले। संस्कृत खाली भारत ही ना सगरो संसार के भाषा रहे। ई देवता लोग के भी भाषा रहे एही से एकरा के देवबानी भी कहल जाला। ए तरह से संस्कृत के ब्रह्माण्ड के भी भाषा कुछ लोग कहेला। संस्कृत भाषा में अनेक तरह के साहित्य के रचना भईल बाटे। ऊ चाहे सनातन साहित्य बा, चाहे बौद्ध आ चाहे जैन।

शिवजी भोला बाबा कहल गईल बानी। ईहाँ के ब्रह्मा, विसनु आ महेश के साथे त्रिदेव के रूप में सुषोभित होवेनी बाकिर (खाली) शिवजी के मानेवाला लोग ईहाँ के सबका ले श्रेष्ठ बतावेला। सबका ले श्रेष्ठ बतलवला के अरथ बाटे कि ईहाँ ले बढ़के केहू नईखे। इहें के सब कुछ करेवाला बानी। शिवजी परब्रह्म बानी। ऊहाँ ले ऊपर केहू नईखे। हाँलाकि शैव (शिवजी के मानेवाला लोग) में भी कई गो भेद बाटे :- कुछ लोग खाली शिवजी के मानेला ऊ शुद्धशैव कहल जाला। कुछ लोग अऊरी देवता लोग के साथे शिवजी के मानेला ओकरा के मिश्र शैव कहल जाला[१]। एही तरह से शैव सम्प्रदाय पूरा भारत में फईलल बाटे।

एही शैव सम्प्रदायन में से वीरशैव संप्रदाय भी एगो बाटे। जवना के लिंगायत सम्प्रदाय भी कहल जाला। ई सम्प्रदाय भारत देश के कर्नाटक राज्य में विशेष रूप से मानल जाला। साथ ही तमिलनाडु, केरल, महाराष्ट्र, गुजरात, आन्ध्रप्रदेश, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, गोवा, दिल्ली, मध्यप्रदेश आदि राज्य में भी विशेष रूप से परभावित करेला। एगो मिलल सूचना के आधार[२] पर खाली महाराष्ट्र राज्य में लिंगायती लोग के संख्या बाटे– कोल्हापुर (८३२९१६), सिंधूदुर्ग (८०९१८), अहमदनगर (१५३६१५), पुणे (६९०४१८), रत्नागिरी (१०१९१२), मुंबई (२९८३१६), मुंबई (ग्रामीण) (७८०९१), ठाणे (२७८३१२), नाशिक (१६०३१२), यवतमाळ (१२६३१२), चंद्रपूर (३०१३२), गडचिरोली (१०८१६), गोंदिया (२८३१२), भंडारा (४६०१२), नागपूर (६३१३२), वर्धा (१५९१२), अमरावती (१४००००), वाशिम (३३९१०), अकोला (९०३१८), बुलढाणा (४७३२०), जलगांव (५२८१०), धुळे (५८६८०), नंदुरवार (२०००२), सांगली (६८०९८०), रत्नागिरी (४८१३२), सातारा (२५१३२०), औरंगाबाद (१४८९१०), जालना (६६१३२), परभणी (१९५८७८) हिंगोली (१२३७१८), नांदेड (८७६३१२), बीड (३०२५१६), सोलापुर (९८०३१२), लातूर (७९८८१०), उस्मानाबाद (४०१५१२)। सगरी महाराष्ट्र में ८९८२८२९ जनसंख्या बाटे।

---

१. शिवजी के सम्प्रदाय के जाने खातिर चन्द्रज्ञानागम जरूर पढ़े के चाही।

२. ई जानकारी बहुते शोध के अपेक्षा रखेले।

सगरी भारत में लगभग लिंगायती लोग (वीरशैव) के संख्या बाटे– कर्नाटक (१५२८२६७६), महाराष्ट्र (८९८२८२९), आन्ध्रप्रदेश (८००००००), तमिलनाडू (५००००००), केरल (२००००००), गुजरात (१००००००), गोवा (१५०००००), दिल्ली (१०००००), उत्तर प्रदेश (१०००००), मध्य प्रदेश (१०००००)।

ई सम्प्रदाय शिवजी के सबका ले श्रेष्ठ मानेला। शिवलिंग आ भसम के हरदम देह पर धारन करेला। ॐ नमः शिवाय के जाप के बहुते मानेला। भले ही ए सम्प्रदाय के उत्तर भारत के कवनो ज्यादा परसिद्धि नईखे मिलल बाकिर ई सम्प्रदाय के मानेवाला भारत के दक्खिन भाग में बहुते जियादा लोग बाटे। ई सम्प्रदाय के विद्वत् समाज में भी बहुते परतिष्ठा बाटे। आम लोग से लेके दरशन जईसन सूक्ष्म विषय के सिद्धान्त ए मत में बाटे। वेदान्त दर्शन के एगारे गो सम्प्रदाय में एकर नाम शक्तिविशिष्टाद्वैतदर्शन बाटे। वेदान्तसूत्र के प्रमुख तीन गो आधार बाटे– उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र आ श्रीमद्भगवद्गीता। ब्रह्मसूत्र पर श्रीपति के द्वारा लिखल भाष्य श्रीकरभाष्य कहल जाला। लगभग सगरी उपनिषद् आ श्रीमद्भगवद्गीता पर ए सम्प्रदाय के विद्वानन के द्वारा भाष्य के रचना कईल गईल बाटे। ए सब भाष्य के रचना से विद्वत् समाज में ए सिद्धान्त के तार्किक ढंग से प्रस्तुत कईल गईल बाटे। वीरशैव मत के पढ़े आ जानेवाला लोग के ए सब ग्रन्थ सन के जरूर अध्ययन करे के चाही।

कामिकागम से वातुलागम तक अट्ठाईस गो आगम के उपदेश शिवजी के द्वारा भईल रहे आ ओकरा अन्तिम भाग में वीरशैव मत के वर्णन बाटे। एही से जेंगा वेद के अन्तिम भाग के वेदान्त कहल जाला ओहींगा आगम के अन्तिम भाग के आगमान्त अर्थात् वीरशैव कहल जाला। ई सगरी आगम सिद्धान्तागम के नाम से परसिद्ध बाड़न काहे से कि ओईमें शैवमत के सिद्धान्त के परिचर्चा कईल गईल बाटे। जेंगा सगरी देह में शिखा (चुटिया) से ऊपर कवनो अंग ना होला ओहींगा सगरी सिद्धान्तागम के अन्तिम भाग भईला के कारन शिर के रतन सरूप ए ग्रन्थ के नाम सिद्धान्तशिखामणि कहल गईल बाटे।[१] सिद्धान्तशिखामणि के रचना करेवाला शिवयोगी शिवाचार्य बानी। ए ग्रन्थ के पहिलका परिच्छेद (श्लोक संख्या १३-२०) में ही ऊहाँ के अपना बारे में बतलवले बानी। ओकरा अनुसार ईहाँ के कुल में पहिलही से केहू शिवयोगी नामके एगो महान् जोगी जनम लिहले रहनी। ऊहाँ के वंश में मुद्देव नाम के आचार्य भईनी, ऊहाँ के एगो लइका सिद्धनाथ नाम के रहले। ऊहाँ के शिवयोगी नामके लईका भईले आ ऊहे शिवयोगी शिवाचार्य ए सिद्धान्तशिखामणि ग्रन्थ के रचना करेवाला बानी। ए वर्णन से ना त ऊहाँ

---

१. सर्वेषां शैवतन्त्राणामुत्तरत्वानिरुत्तरम्।
नाम्ना प्रतीयते लोके यत्सिद्धान्तशिखामणिः ।। (सि.शि. १/३१)

के स्थान के पता चल पावेला आ नाही ऊहाँ के समय के। ईहाँ के स्थान आ समय के विषय में ढेर मतभेद बाटे बाकिर फेनु कई तरह से विचार कईला पर ईहाँ के निवास स्थान कर्नाटक राज्य के बीजापुर जिला के सालोटगी गांव आ ए ग्रन्थ के रचना काल लगभग ८वीं शताब्दी मानल जा सकेला।[१] आगमशास्त्र के चार गो पाद कहल गईल बाटे– विद्या (ज्ञान), क्रिया, योग आ चर्या। आज कवनो भी आगम के पूरा चारु पाद उपलब्ध नईखे। सिद्धान्तशिखामणि में कमोबेश चारु पाद के देखल जा सकेला।

ए ग्रन्थ के पहिला परिच्छेद से तीसरा परिच्छेद में मंगल श्लोक के साथे ग्रन्थकार के वंश के वर्णन कईल गईल बाटे। ओकरा बाद रेणुक आ दारुक जवन भगवान् शिवजी के परमुख गण रहे लो ओलोग के बारे में कथा कहल गईल बाटे। कथा ई बाटे कि एकबार शिवजी कैलास पर्वत पर विराजमान रहनी आ ऊहाँ के सेवा में सगरी देवता लोग लागल रहे लो। एही के बीच में भगवान् शिवजी अपना भक्त रेणुक प्रसाद के रूप में ताम्बूल (पान) देबे खातिर बोलवनी रेणुक भगवान् शिवजी के वचन सुनके घमण्ड से भरल दारुक के लांघ के शिवजी के लगे जाये के कोशिश कईले। भगवान् शिवजी अईसन आचरन देखके रेणुक से कहनी– "अरे मूरूख! शिवभक्त के लांघल बहुते बड़हन अपराध बाटे। अईसन आचरन त मानुस लोग करेला। एही से तु मनुष्य हो जा।" ई बात सुनके रेणुक डेरा गईले आ डेराईल रेणुक भगवान् शिवजी से ई प्रार्थना कईले कि "हे भगवान्! हम भले मनुष्य होई बाकिर हमरा मनुष्ययोनि से जनम ना लेबे के पड़े।" रेणु के प्रार्थना से भगवान् खुश हो गईनी आ कहनी "श्रीशैल पर्वत के उत्तर भाग में त्रिलिङ्ग देश (ए बेरा तेलंगाना) में सोमेश्वर नाम से हमार एगो लिङ्ग बाटे ओही से तहार प्राकट्य होई आ तू वेदवेदान्तसम्मत वीरशैव शास्त्र के भूलोक में स्थापना करब।" अईसन कहिके भगवान् अपना अन्त:पुर में चल गईनी आ रेणुक ए धरती पर अवतार लेहनी। जब सोमेश्वर महादेव से रेणुक के प्राकट्य भईल त तेलंगाना देश के सगरी परानी लोग आश्चर्य से भर गईले। सबका से अपना प्राकट्य के प्रयोजन बतलावला के बाद रेणुकजी आकाशमार्ग से अगस्त्य मुनि के आश्रम में चलि गईनी। अगस्त्य ऋषि आतिथ्य सतकार के क्रम में रेणुकजी के पूजा कईनी आ फेर ऊहाँ के आसन देके अपने दोसरा आसन पर बईठ गईनी। ओकरा बाद अगस्त्य ऋषि आ रेणुकजी में संवाद भईल।

पाँचवा परिच्छेद से लेकर बीसवें परिच्छेद में एही अगस्त्य ऋषि के प्रश्न आ रेणुकजी के उत्तर के वर्णन बाटे। ए वर्णन में अनेक दर्शन के प्रामाण्य के द्वारा वीरशैव शब्द के निर्वचन, वीरशैवशास्त्र के स्थल नाम के छ: तरह के वर्णन, भक्तस्थल के पन्द्रह

---

१. सिद्धान्तशिखामणि, हिन्दी व्याख्या, प्रस्तावना, पृ. V-VII

प्रकार में पिण्ड स्थल के वर्णन, पिण्डज्ञानस्थल वर्णन, संसारहेयस्थल वर्णन, दीक्षालक्षण-गुरुकारुण्यस्थल वर्णन, लिङ्गधारणस्थल वर्णन, भस्मधारणस्थल वर्णन, रुद्राक्षधारणस्थल वर्णन, पञ्चाक्षरीतात्पर्यस्थल वर्णन, षडक्षरीजपमाहात्म्यस्थल वर्णन, जपविधि आ ओकर प्रकार के वर्णन, समन्त्रकशिवपूजन के फल के वर्णन, पञ्चाक्षरीजपफल के वर्णन, भक्ति के भेद के वर्णन, आभ्यन्तर भक्ति के वर्णन, अल्पभक्ति आ ओकर भेद के वर्णन, शिवभक्त के विधेय के वर्णन, भक्ताचार भेद के वर्णन, शिव आ गुरु के अभेद के वर्णन, त्रिविधसम्पत्तिस्थल वर्णन, चतुर्विधसारायस्थल वर्णन, सोपाधिनिरुपाधिसहजदानस्थल वर्णन, माहेश्वरस्थल वर्णन, लिङ्गनिष्ठास्थल वर्णन, पूर्वाश्रयनिरसनस्थल वर्णन, सर्वाद्वैत-निरसनस्थल वर्णन, आह्वाननिरसनस्थल वर्णन, अष्टमूर्तिनिरसनस्थल वर्णन, सर्वगत-निरसनस्थल वर्णन, शिवजगन्मयस्थल वर्णन, भक्तदेहिकलिङ्गस्थल वर्णन, प्रसादिस्थल वर्णन, गुरुमाहात्म्यस्थल वर्णन, लिङ्गमाहात्म्यस्थल वर्णन, जङ्गममाहात्म्यस्थल वर्णन, भक्तमाहात्म्यस्थल वर्णन, शरणमाहात्म्यस्थल वर्णन, प्रसादमाहात्म्यस्थल वर्णन, प्राणलिङ्गीस्थल वर्णन, अङ्गलिङ्गस्थल वर्णन, शरणस्थल वर्णन, तामसनिरसनस्थल वर्णन, निर्देशस्थल वर्णन, शीलसम्पादनस्थल वर्णन, ऐक्यस्थल वर्णन, आचारसम्पत्तिस्थल वर्णन, एकभाजनस्थल वर्णन, सहभोजनस्थन वर्णन, लिङ्गस्थल आ दीक्षागुरुस्थल वर्णन, शिक्षागुरुस्थल वर्णन, ज्ञानगुरुस्थल वर्णन, क्रियालिङ्गस्थल वर्णन, भावलिङ्गस्थल वर्णन, ज्ञानलिङ्गस्थल वर्णन, स्वयंस्थल वर्णन, चरस्थल वर्णन, परस्थल वर्णन, क्रियागमस्थल वर्णन, भावागमस्थल वर्णन, ज्ञानागमस्थल वर्णन, सकायस्थल वर्णन, अकायस्थल वर्णन, परकायस्थल वर्णन, धर्माचारस्थल वर्णन, भावाचारस्थल वर्णन, ज्ञानाचारस्थल वर्णन, प्रसादिस्थल वर्णन (कायानुग्रहस्थल वर्णन), इन्द्रियानुग्रहस्थल वर्णन, प्राणानुग्रहस्थल वर्णन, कायार्पितस्थल वर्णन, करणार्पितस्थल वर्णन, भावार्पितस्थल वर्णन, शिष्यस्थल वर्णन, सुश्रूषुस्थल वर्णन, सेव्यस्थल वर्णन, प्राणलिङ्गस्थलभेद वर्णन (आत्मस्थल वर्णन), अन्तरात्मस्थल वर्णन, परमात्मस्थल वर्णन, निर्देहागमस्थल वर्णन, निर्भावागमस्थल वर्णन, नष्टागमस्थल वर्णन, आदिप्रसादिस्थल वर्णन, अन्त्यप्रसादिस्थल वर्णन, सेव्यप्रसादिस्थल वर्णन, शरणस्थल वर्णन (दीक्षापादोदकस्थल वर्णन), शिक्षापादोदकस्थल वर्णन, ज्ञान-पादोदकस्थल वर्णन, क्रियानिष्पत्तिस्थल वर्णन, भावनिष्पत्तिस्थल वर्णन, ज्ञाननिष्पत्ति-स्थल वर्णन, पिण्डाकाशस्थल वर्णन, बिन्द्वाकाशस्थल वर्णन, महाकाशस्थल वर्णन, क्रियाप्रकाशस्थल वर्णन, भावप्रकाशस्थल वर्णन, ज्ञानप्रकाशस्थल वर्णन, ऐक्यस्थल वर्णन (स्वीकृत-प्रसादिस्थलन वर्णन), शिष्टोदनस्थल वर्णन, चराचरलयस्थल वर्णन, भाण्डस्थल वर्णन, भाजनस्थल वर्णन, अङ्गालेपस्थल वर्णन, स्वपराज्ञस्थल वर्णन, भावाभावलयस्थल वर्णन, ज्ञानशून्यस्थल वर्णन, उपदेशोपसंहार वर्णन आदि के वर्णन बाटे । अन्तिम एकईसवाँ परिच्छेद में रेणुकजी द्वारा लंका में विभीषण के आग्रह पर तीन करोड़ शिवलिङ्ग के स्थापना कईला के कथा के वर्णन कईल गईल बाटे ।

सिद्धान्तशिखामणि के अनुवाद कन्नड़, तेलगु, मलयालम, गुजराती, हिन्दी, नेपाली, अवधी, रसियन भाषा में हो चुकल बाटे। एकर परमुख मठ में से एगो जंगमवाड़ीमठ उत्तर प्रदेश के बनारस में विश्वनाथ मंदिर के लगही बाटे। जहां के भाषा-भाषी भोजपुरी के माध्यम से आपन बेवहार करेले। साथ ही भोजपुरी भाषा के अऊरी लोग खातिर ए ग्रन्थ के भोजपुरी अनुवाद के आशीर्वाद ए मठ के पीठाधीश्वर डॉ. चन्द्रशेखर शिवाचार्यजी के द्वारा प्रदान भईल। भगवान् विश्वनाथ के किरिपा से ऊ अनुवाद पूरा भी भईल एही से बाबा विश्वनाथ के साथे हम ऊहाँ के चरन-कमल में परनाम करत बानी। डॉ. रामनाथ झा (सहाचार्य, विशिष्ट संस्कृत अध्ययन केन्द्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली) हमार शोध निर्देशक बानी। राउर आशीर्वाद हमरा ऊपर हरदम रहेला। रऊरा चरन-कमल में भी हम परनाम निवेदित करत बानी। हमार पिताश्री बलिराम द्विवेदी "अनमोल" अऊरी भाषा के साथे भोजपुरी भाषा के परसिद्ध विद्वान् बानी। ऊहाँ के चरन-कमल में भी हम परनाम निवेदित करत बानी काहे से कि ऊहे के हमारा भोजपुरी ज्ञान के सब कुछु बानी। साहित्य सेवा में हमेशा हमरा के उचित निर्देश देबे खातिर डॉ. नीलम श्रीवास्तव (हिन्दी विभागाध्यक्षा, श्रीच्छत्रधारि संस्कृतमहाविद्यालय, हथुआ, गोपालगंज, बिहार) के चरन-कमल भी वन्दनीय बाटे। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के छात्र, संघतिया दयानन्द तिवारीजी के अशुद्धि आदि ठीक करेमें प्रमुख योगदान बाटे। ए खातिर ऊँहा के विशेष धन्यवाद व्यक्त करतानी। भाई श्री अरविन्द द्विवेदी पिताश्री के राह पर आज भोजपुरी जगत् के एगो परसिद्ध चेहरा बानी। राऊर साहचर्य हमरा बराबर मिलत रहेला। रऊरा चरन-कमल में भी परनाम निवेदित बाटे। ए ग्रन्थ के प्रकाशन खातिर श्री चिदानन्द ओ. हिरेमठ (कसगी) के साथे जंगमवाड़ीमठ वाराणसी के प्रति भी हम आभार प्रकट करत बानी। साथ ही पत्नी वन्दना द्विवेदी, पुत्री स्वस्ति प्रवीण आ अऊरी जेतना भी व्यक्ति जे परोक्ष आ चाहे प्रत्यक्ष रूप से ए अनुवाद में सहयोग कईल बाटे ओ सब के हम सनेह के साथ आभार प्रकट करत बानी। गलती कईलें मनुष्य स्वभाव बाटे आ हमार भोजपुरी रचना के ई पहिलका प्रयास बाटे। एही से आशा ना बाकिर पूरा विश्वास बाटे कि केतनो सावधानी बरतला के बाद भी गलती भईल होई। एही से ए ग्रन्थ के पढ़ेवाला लोग से अनुरोध बाटे कि जवन भी गलती परोक्ष आ चाहे प्रत्यक्ष रूप से भईल होई ओकरा के क्षमा करत हमरा के जरूर सूचित करी जईसे ओईमें सुधार कईल जा सके। अन्त में बाबा श्रीविश्वनाथ के चरन-कमल में पिताश्री द्वारा विरचित वैद्यनाथ चालीसा के कुछ पद्य के साथे अपना भावना के अभिव्यक्त करत-

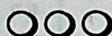
नाम अनूप बा राउर रूप अनूप अनेक विचित्र कहानी,
बा गर में सपवां लटकल लीलरा पर चांद के शोभत चानी।

कर शोभे डमरू तिरशूल जटा में बसे गंगा महारानी,
भांग धतूर में मस्त रही भोला भक्तन खातिर औघरदानी ।।
बानी अज्ञानी बुझात शब्दारथ भाषा भाव भवारथ नईखे,
पांव पड़ी करी प्रार्थना शुद्ध स्वारथ बा परमारथ नईखे ।
बात बताई यथारथ बाबा से पाले कुछु पुरुषारथ नईखे,
चारि पदारथ मोर मनोरथ दे दी केहू त हितारथ नईखे ।।

शारदीय नवरात्र,
संवत् २०७१

विनयावत
प्रवीण कुमार द्विवेदी
शोध छात्र, विशिष्ट संस्कृत अध्ययन केन्द्र
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली - ११००६७

विषयानुक्रमणिका



॥ श्री जगद्गुरु पंचाचार्याः प्रसीदन्तु ॥











ॐ नमः पञ्चाचार्येभ्यो नमः
नमः पञ्चाननमुखोद्भूतेभ्यो नमः
नमः पञ्चसूत्रकर्तृभ्यो नमः
नमः पञ्चाक्षरमनुस्वरूपेभ्यो नमः
नमः शिवाद्वैतविद्यासम्प्रदायकर्तृभ्यो नमः
नमः वीरशैवमहामतसंस्थापकेभ्यो नमः
नमो जगद्गुरुभ्यः॥

।। अथ श्रीसिद्धान्तशिखामणि न्यासादिः ।।

अथ ऋष्यादिन्यासः

अस्य श्रीसिद्धान्तशिखामणिशास्त्रमहामन्त्रस्य
भगवान् श्रीशिवयोगि शिवाचार्य ऋषिः।
अनुष्टुप् छन्दः।
श्री सच्चिदानन्दस्वरूपः परशिवो देवता।
सच्चिदानन्दरूपाय शिवाय ब्रह्मणे नम
इति बीजम्।
अमृतार्थं प्रपन्नानां या सुविद्याप्रदायिनी
इति शक्तिः।
शिवज्ञानकरं वक्ष्ये सिद्धान्तं श्रुणु सादरम्
इति कीलकम्।



अथ करन्यासः

एक एव शिवस्साक्षाच्चिदानन्दमयो विभु
इति अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
निर्विकल्पो निराकारो निर्गुणो निष्प्रपञ्चक
इति तर्जनीभ्यां नमः।
अनाद्यविद्यासम्बन्धात्तदंशो जीवनामक
इति मध्यमाभ्यां नमः।
देवतिर्यङ्मनुष्यादिजातिभेदे व्यवस्थित
इति अनामिकाभ्यां नमः।

मायी महेश्वरस्तेषां प्रेरको हृदि संस्थित

इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः।

बीजे यथाऽङ्कुरः सिद्धस्तथाऽत्मनि शिवः स्थित

इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।



अथ अंगन्यासः

एक एव शिवस्साक्षाच्चिदानन्दमयो विभु

इति हृदयाय नमः।

निर्विकल्पो निराकारो निर्गुणो निष्प्रपञ्चक

इति शिरसे स्वाहा।

अनाद्यविद्यासम्बन्धात्तदंशो जीवनामक

इति शिखायै वषट्।

देवतिर्यङ्मनुष्यादिजातिभेदे व्यवस्थित

इति कवचाय हुम्।

मायी महेश्वरस्तेषां प्रेरको हृदि संस्थित

इति नेत्रत्रयाय वौषट्।

बीजे यथाऽङ्कुरः सिद्धस्तथाऽत्मनि शिवः स्थित

इति अस्त्राय फट्।

श्रीशिवप्रीत्यर्थे श्रीसिद्धान्तशिखामणिपाठे विनियोगः।



।। अथ श्रीसिद्धान्तशिखामणिध्यानम् ।।

स्वस्ति श्रीगणनायकेन मुनयेऽगस्त्याय तत्त्वार्थिने
शिष्याय प्रतिबोधिते भगवता श्रीरेणुकेन स्वयम्।
तात! त्वं शिवयोगिवर्यसुकृतिर्मे मानसे मन्दिरे
श्रीसिद्धान्तशिखामणे वस सदा ज्ञानप्रदीपो भव।।१।।

शरणागतदीनार्तपरित्राणैकहेतवे ।
श्रीरेणुकगणेशाय ज्ञानमुद्राय ते नमः।।२।।

अगस्त्यसंशयव्रातमहाध्वान्तांशुमालिनम् ।
वन्दे शिवसुतं देवं रेणुकाख्यं जगद्गुरुम्।।३।।

नमः शिवाचार्यवराय तुभ्यं श्रीवीरशैवागमसागराय।
विनाऽपि तैलं भवताऽत्र येन प्रज्वालितो ज्ञानमणिप्रदीपः।।४।।

यस्मिन्नागमशास्त्रतत्त्वमखिलं सम्यक् च संसूचितं
भक्तैर्वांञ्छितभुक्तिमुक्तिफलदं यत्कल्पवृक्षात्मकम्।
तं शैवागमसम्मतं निगमविद् विद्वद्भिरासेवितं
श्रीसिद्धान्तशिखामणिं प्रतिदिनं ध्यायेत् सदा सादरम्।।५।।

पूज्यश्रीशिवयोगिवर्यरचितं सिद्धान्तरत्नाकरं
सूक्ष्मं धार्मिकतात्त्विकस्थलयुतं चैकाधिकं तत् शतम्।
त्रैलोक्यं पदमादिमं परपदं सर्वान्तिमे योजितं
श्रीसिद्धान्तशिखामणिं दिनदिनं ध्यायेत् सदा शांतिदम्।।६।।



।। अथ श्रीसिद्धान्तशिखामणिमाहात्म्यम्।।

यः पठेत् प्रयतो नित्यं श्रीसिद्धान्तशिखामणिम्।
शिवसायुज्यमाप्नोति भयशोकादिवर्जितः।।१।।

सदाऽध्ययनशीलस्य श्रीसिद्धान्तशिखामणेः।
क्षीयन्ते सर्वपापानि पूर्वजन्मकृतानि च।।२।।

जलस्नानाद् वरं पुंसां श्रीसिद्धान्तशिखामणौ।
ज्ञानार्णवे सदा स्नानं संसारमलनाशनम्।।३।।

श्रीरेणुकगणाध्यक्षमुखपद्माद्विनिःसृतः ।
कण्ठपीठे सदा धार्यः श्रीसिद्धान्तशिखामणिः।।४।।

श्रीरेणुकगणाध्यक्षवचनामृतसागरम् ।
पायं पायं सदा पुंसां पुनर्जन्म न विद्यते।।५।।

सर्वागमव्रजोगावस्तासां दोग्धा च रेणुकः।
वत्सोऽगस्त्यः सुधीर्भोक्ता दुग्धं शिखामणिर्महान्।।६।।

एकं शास्त्रं श्रीशिवाद्वैतसंज्ञम्
एको देवः श्रीमहादेव एव।
एको मन्त्रः शैवपञ्चाक्षरोऽयम्
कर्माप्येकं इष्टलिङ्गार्चनं हि।।७।।

।। अथ फलश्रुतिः।।

श्रीवेदागमवीरशैवसरणिं श्रीषट्स्थलोद्यन्मणिं
श्रीजीवेश्वरयोगपद्मतरणिं श्रीगोप्यचिन्तामणिम्।
श्रीसिद्धान्तशिखामणिं लिखयिता यस्तं लिखित्वा परान्
श्रुत्वा श्रावयिता स याति विमलां भुक्तिं च मुक्तिं पराम्।।



श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचित:

श्रीसिद्धान्तशिखामणि:

प्रथम: परिच्छेद: (पहिला परिच्छेद)

शिवस्तुति (शिव के स्तुति)

त्रैलोक्य सम्पदालेख्य समुल्लेखनभित्तये ।
सच्चिदानन्दरूपाय शिवाय ब्रह्मणे नम:।।१।।

भावार्थ : तीनु लोक रूपी सम्पत्ति जवन एगो चित्र जईसन बाटे, ओकरा के लिखे खातिर बहुते बढ़िया आधार जईसन देवाल जे बाटे, सत्, चित् आ आनन्द जेकर सरूप बाटे, ओ परब्रह्म शिव के हम परनाम करत बानी ।।१।।

ब्रह्मेति व्यपदेशस्य विषयं यं प्रचक्षते।
वेदान्तिनो जगन्मूलं तं नमामि परं शिवम्।।२।।

भावार्थ : वेदान्ती लोग जेकरा के ब्रह्म के बेवहार करे खातिर विषय बतलावे ला, संसार के ऊ जड़ अर्थात् कारन परमशिव के हम परनाम करत बानी ।।२।।

यस्योर्मिबुद्बुदाभास: षट्त्रिंशत्तत्त्वसञ्चय:।
निर्मलं शिवनामानं तं वन्दे चिन्महोदधिम्।।३।।

भावार्थ : छत्तीस गो तत्त्वन के समूह जेकर लहर सरूप बुद्बुद जईसन लागता अऊरी शिवनाम के धारन करेवाला ऊ निरमल (कवनो भी मईल के बिना) आ महान् चैतन्य के समुन्दर के हम वन्दना करत बानी ।।३।।

यद्भासा भासते विश्वं यत्सुखेनानुमोदते।
नमस्तस्मै गुणातीतविभवाय परात्मने।।४।।

भावार्थ : जेकरा परकाश से इ सगरो संसार परकाशित होला, जेकरा आनन्द से सगरी सृष्टि आनन्दित होले, जे तीनु गुण सन से ऊपर बानी अऊरी बैभव से भरल-पूरल बानी ओ परमातमा के हमार नमस्कार बाटे ।।४।।

सदाशिवमुखाशेषतत्त्वोन्मेषविधायिने ।
निष्कलङ्कस्वभावाय नम: शान्ताय शम्भवे।।५।।

भावार्थ : सदाशिव से लेके पृथिवी ले जे सगरो तत्त्वन के उन्मेष (जनम) करेवाला बाटे, कवनो भी कलङ्क जेकरा में नइखे, इहे जेकर सुभाव बा ओ शान्त रहेवाला शिव के परनाम बाटे ।।५।।

स्वेच्छाविग्रहयुक्ताय स्वेच्छावर्तनवर्तिने।
स्वेच्छाकृतत्रिलोकाय नमः साम्बाय शम्भवे।।६।।

भावार्थ : अपना इच्छा से देह के धारन करेवाला, अपना इच्छा से बेवहार करेवाला अऊरी अपना ही इच्छाशक्ति से इ तीनु लोक के रचेवाला शिव के अम्बा के साथे परनाम बाटे ।।६।।

यत्र विश्राम्यतीशत्वं स्वाभाविकमनुत्तमम्।
नमस्तस्मै महेशाय महादेवाय शूलिने।।७।।

भावार्थ : जेकरा में ई शिवत्व (भगवान् के भाव) निवास करेला अऊरी जे सुभाव से ही सबका से श्रेष्ठ बाटे ओ महादेव कहायेवाला, शूल के धारन करेवाला महेश के परनाम बाटे ।।७।।

शक्तिस्तुतिः (शक्ति के स्तुति)

यामाहुः सर्वलोकानां प्रकृतिं शास्त्रपारगाः।
तां धर्मचारिणीं शम्भोः प्रणमामि परां शिवाम्।।८।।

भावार्थ : शास्त्रन के पहुँचल विद्वान् जेकरा के सगरी लोक के मूल कारन मानेले, शिव के धरमपत्नी उ परा शिवा के हम परनाम करत बानी ।।८।।

यया महेश्वरः शम्भुर्नामरूपादिसंयुतः।
तस्यै मायास्वरूपायै नमः परमशक्तये।।९।।

भावार्थ : जेकरा कारन महेश्वर नाम रूप आदि (गुन, संख्या, परिमाण आदि) के साथे शम्भु बतलावल जाले, आ चाहे जेकरा कारन नाम रूप आदि से युक्त शम्भु महेश्वर कहल जाले, मायासरूपा ऊ परमशक्ति के परनाम बाटे ।।९।।

शिवाद्यादिसमुत्पन्नशान्त्यतीतपरोत्तराम् ।
मातरं तां समस्तानां वन्दे शिवकरीं शिवाम्।।१०।।

भावार्थ : जे शिव से सबसे पहिले उत्पन्न भईली, आ शान्त्यातीता कला से भी ओने अऊरी ओने बाड़ी, सगरी कला सन आ चाहे सगरी सृष्टि के जे महतारी बाड़ी, मंगल करेवाली ऊ शिवा के हम वन्दना करत बानी ।।१०।।

इच्छाज्ञानादिरूपेण या शम्भोर्विश्वभाविनी।
वन्दे तां परमानन्दप्रबोधलहरीं शिवाम्।।११।।

भावार्थ : जे शिव के इच्छा से आ ज्ञान आदि क्रियारूप से संसार के परकाशित करेवाली बाड़ी, ऊ परम आनन्द के ज्ञान के लहर रूप शिवा के हम वन्दना करत बानी ।।११।।

अमृतार्थं प्रपन्नानां या सुविद्याप्रदायिनी।
अहर्निशमहं वन्दे तामीशानमनोरमाम्।।१२।।

भावार्थ : अमर होखे खातिर शरन में आईल भक्तन के जे नीमन विद्या देबेवाली कहल गईल बाड़ी ओ ईशान (शिव) के मनोरमा (मन के अच्छा लागे वाली) शिवानी (शिव के पत्नी) के हम रातो-दिनों वन्दना करत बानी ।।१२।।

ग्रंथकार के वंशवर्णन

कश्चिदाचारसिद्धानामग्रणीः शिवयोगिनाम्।
शिवयोगीति विख्यातः शिवज्ञानमहोदधिः।।१३।।

भावार्थ : आचार जे सिद्ध क लेहले होखे ओ शिवयोगियन में आगे रहेवाला ज्ञान के समुन्दर केहू शिवयोगी नाम से प्रसिद्ध रहले ।।१३।।

शिवभक्तिसुधासिन्धुजृम्भणामलचन्द्रिका।
भारती यस्य विदधे प्रायः कुवलयोत्सवम्।।१४।।

भावार्थ : जेकर शिवभक्तिरूपी अमरित के समुन्दर के जृम्भण अर्थात् आनन्द में मगन होखे खातिर अजोरिया नीयर वाणी हरदम कुवलयोत्सव (कुवलय के अर्थ होला :- कु = पृथिवी के वलय (वस्त्र) के उत्सव) आ चाहे कमल के परब करत रहे ।।१४।।

तस्य वंशे समुत्पन्नो मुक्तामणिरिवामलः।
मुद्ददेवाभिधाचार्यो मूर्धन्यः शिवयोगिनाम्।।१५।।

भावार्थ : उनके ही वंश में निर्मल मुक्ता के मणि के नीयर मुद्ददेव नामके आचार्यजी जनम लिहले रहनी, जे शिवयोगीलोग में सबका से ऊपर रहनी ।।१५।।

मुद्दानात्सर्वजन्तूनां प्रणतानां प्रबोधतः।
मुद्ददेवेति विख्याता समाख्या यस्य विश्रुता।।१६।।

भावार्थ : शरन में आईल सगरो जीव-जन्तु के आनन्द देबे आ प्रणतजन (जे परानी लोग पर दया करेला) के परबुद्ध कईला के कारन ऊहां के नाम मुद्ददेव परसिद्ध भईल ।।१६।।

तस्यासीन्नन्दनः शान्तः सिद्धनाथाभिधः शुचिः।
शिवसिद्धान्तनिर्णेता शिवाचार्यः शिवात्मकः।।१७।।

भावार्थ : ऊहाँ के सिद्धनाथ नामके बेटा भईले जे शिव से सम्बन्धित शिवसिद्धान्त के निर्णय करेवाला शिवाचार्य रहले ।।१७।।

वीरशैवशिखारत्नं विशिष्टाचारसम्पदम्।
शिवज्ञानमहासिन्धुं यं प्रशंसन्ति देशिकाः।।१८।।

भावार्थ : आचार्यलोग जेकर प्रशंसा वीरशैवचूड़ामणि, विशेष आचार से भरल-पूरल आ शिवज्ञान के महान् समुन्दर के रूप में करत रहे लो ।।१८।।

यस्याचार्यकुलाज्जाता सतामाचारमातृका।
शिवभक्तिः स्थिरा यस्मिन् जज्ञे विगतविप्लवा।।१९।।

भावार्थ : जेकरा अचार्यकुल में जनमल आ बढ़िया लोग (सज्जनों) के आचार (बेवहार) के महतारी शिवभक्ति, उपदरव के बिना ही जेकरा में समा गईली ।।१९।।

तस्य वीरशिवाचार्यशिखारत्नस्य नन्दनः।
अभवच्छिवयोगीति सिन्धोरिव सुधाकरः।।२०।।

भावार्थ : वीरशैवशिवाचार्यलोग के शिखा के रतन के रूप में रहेवाला ओ सिद्धनाथ के समुन्दर से जेंगा चनरमा भईल रहले ओहिंगा शिवयोगी नाम से बेटा भईले ।।२०।।

चिदानन्दपराकाशशिवानुभवयोगतः।
शिवयोगीति नामोक्तिर्यस्य याथार्थ्ययोगिनी।।२१।।

भावार्थ : चित् के आनन्द से युक्त पराकाशरूपी शिवतत्त्व के अनुभव से युक्त भईला के कारन जेकर शिवयोगी नाम उनका अरथ के जईसन ही रहे ।।२१।।

शिवागमपरिज्ञानपरिपाकसुगन्धिना।
यदीयकीर्तिपुष्पेण वासितं हरितां मुखम्।।२२।।

भावार्थ : शैवागम के सगरो ज्ञान के बढ़िया से पकावला से जवन सुगन्ध आवेला ओकरा से युक्त जेकर परसिद्धरूपी फूल से सगरी दिशासन के मुँह हरदम सुगन्धित होत रहे ।।२२।।

येन रक्षावती जाता शिवभक्तिः सनातनी।
बौद्धादिप्रतिसिद्धान्तमहाध्वांतांशुमालिना।।२३।।

भावार्थ : बौद्ध आदि के उलटा सिद्धान्तरूपी महान् अन्हरियाँ के खातिर जे सूरज नीयर रहे ओकरा से सनातन (जेकर जनम ना भईल रहे, जे बहुते पहिले से चलत आ रहल बाटे ओईसन) शिव के भक्ति के रक्षा भईल ॥२३॥

स महावीरशैवानां धर्ममार्गप्रवर्तकः।
शिवतत्त्वपरिज्ञानचन्द्रिकावृतचन्द्रमाः ॥२४॥

भावार्थ : शिवतत्त्व के भरल-पूरल ज्ञानरूपी अजोरियाँ से ढकाईल ऊ शिवयोगी महावीर शैवन के धरम के राह के अगुआ भईले ॥२४॥

आलोक्य शैवतन्त्राणि कामिकाद्यानि सादरम्।
वातुलान्तानि शैवानि पुराणान्यखिलानि तु॥२५॥

भावार्थ : ऊ कामिकागम से लेके वातुलागम तकले सगरो शैवपुराणन के आदर-सत्कार के साथे पढ़ला के बाद वीरशैव महातन्त्र के रचना कईले ॥२५॥

वेदमार्गाविरोधेन विशिष्टाचारसिद्धये।
असन्मार्गनिरासाय प्रमोदाय विवेकिनाम्॥२६॥

भावार्थ : ई रचना वैदिक पथ के विरोध ना करेले आ विशेष आचार के सिद्धि देबेले, असत् के राह के दूर करेले आ विद्वान लोग के आनन्द देबे खातिर एकर रचना कईल गईल बाटे ॥२६॥

सर्वस्वं वीरशैवानां सकलार्थप्रकाशनम्।
अस्पृष्टमखिलैर्दोषैरादृतं शुद्धमानसैः॥२७॥

भावार्थ : वीरशैव मत के मानेवाला लोग खातिर सब कुछ, सगरी विषयन के खोल के रख देबेवाला ई ग्रन्थ के जेकर मन शुद्ध हो गईल बाटे ऊ विद्वान लोग के द्वारा आदर कईल गईल ॥२७॥

तेष्वागमेषु सर्वेषु पुराणेष्वखिलेषु च।
पुरा देवेन कथितं देव्यै तन्नन्दनाय च॥२८॥

भावार्थ : पुरान समय में सगरी आगमन पुराणन में वर्णन कईल गईल ई सिद्धान्त के भगवान् शिव देवी पारबती आ उनका बेटा (कार्तिकेय) से कहले रहनी ॥२८॥

तत्सम्प्रदायसिद्धेन रेणुकेन महात्मना।
गणेश्वरेण कथितमगस्त्याय पुनः क्षितौ॥२९॥

भावार्थ : ऊ शिव सम्प्रदाय में परसिद्ध महिमा से भरल-पूरल गणेश्वर (सगरी गणलोग के जे भगवान् ह) रेणुक पृथिवी पर ई शास्तर के फेर महर्षि अगस्त्य से बतलवनी ॥२९॥

वीरशैवमहातन्त्रमेकोत्तरशतस्थलम् ।
अनुग्रहाय लोकानामभ्यधात् सुधियां वरः ।।३०।।

भावार्थ : मनीषीलोगन में श्रेष्ठ शिवयोगी शिवाचार्य एक सौ एक स्थल (विषय) वाला वीरशैव महामन्तर के मानुषन के ऊपर किरिपा करे खातिर वर्णन कईनी ।।३०।।

सर्वेषां शैवतन्त्राणामुत्तरत्वान्निरुत्तरम् ।
नाम्ना प्रतीयते लोके यत्सिद्धान्तशिखामणिः ।।३१।।

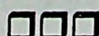
भावार्थ : सगरों शैवतन्त्रन में उत्तर आ चाहे अन्तिम होखला के कारण निरुत्तर जईसन ई ग्रन्थ लोक में श्रीसिद्धान्तशिखामणि के नाम से परसिद्ध बाटे। शिखा (चुटिया) के ऊपर कवनो अङ्ग ना होखेला आ ओकरा में पहिरल मणि सबका ले ऊपर मानल जाला, ओही लेखा ई ग्रन्थ वीरशैव सिद्धान्त के चरचा करेवाला सबका ले श्रेष्ठ ग्रन्थ बाटे ।।३१।।

अनुगतसकलार्थे शैवतन्त्रैः समस्तैः
प्रकटितशिवबोधाद्वैतभावप्रसादे ।
विदधतु मतिमस्मिन् वीरशैवा विशिष्टाः
पशुपतिमतसारे पण्डितश्लाघनीये ।।३२।।

भावार्थ : हे विशेष वीरशैवमत के मानेवाला लोग! सगरी शैवतन्त्रन के तत्त्वन के अपना में समवा लेबे वाला, शिव के ज्ञान के अद्वैत भाव में आनन्द के परगट करेवाला, पाशुपत मत के सारभूत (निचोड़) आ पण्डित लोग के द्वारा प्रशंसा करे जोग ए ग्रन्थ के पढ़े में (ए विषय के समझे-बुझे में) अपना मन के लगावल जाव ।।३२।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ मङ्गलाचरण-श्रीशिवयोगिशिवाचार्य वंशवर्णनं नाम प्रथमः परिच्छेदः ।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के मङ्गलाचरण श्रीशिवयोगि शिवाचार्य के वंशवर्णन नामवाला पहिला परिच्छेद समाप्त भईल ।।१।।



द्वितीयः परिच्छेदः (दूसरा परिच्छेद)

शिव-परब्रह्म के निरूपण

सच्चिदानन्दरूपाय सदसद्व्यक्तिहेतवे।
नमः शिवाय साम्बाय सगणाय स्वयम्भुवे।।१।।

भावार्थ : सच्चिदानन्दरूप सत् अर्थात् भाव आ चाहे परमेश्वर के रूप अऊरी असत् अर्थात् अभाव आ चाहे जागल-सुतल परपञ्च अथवा प्रतिभासिक आ बेवहारिक परपञ्च के परगट के कारन, स्वयम्भू (अपने आप जनम जे लिहले बा) अम्बा के साथे शिव के हम नमस्कार करत बानी ।।१।।

सदाशिवमुखाशेषतत्त्वमौक्तिकशुक्तिकाम्।
वन्दे माहेश्वरीं शक्तिं महामायादिरूपिणीम्।।२।।

भावार्थ : सदाशिव तत्त्व से पृथिवी ले सगरो तत्त्वरूपी मोतियन के चाँनी नीयर महामाया आदि रूप महेश्वर के शक्ति के हम वन्दना करत बानी ।।२।।

अस्ति सच्चित्सुखाकारमलक्षणपदास्पदम्।
निर्विकल्पं निराकारं निरस्ताशेषविप्लवम्।।३।।

भावार्थ : सत् चित् आ आनन्दरूप, लक्षण के बिना, विकल्प के बिना, आकार के बिना आ सगरी उपदरव के खतम करेवाला परशिव ब्रह्म हई ।।३।।

परिच्छेदकथाशून्यं प्रपञ्चातीतवैभवम्।
प्रत्यक्षादिप्रमाणानामगोचरपदे स्थितम्।।४।।

भावार्थ : ऊ ब्रह्म परिसीमन के बात से रहित, परपञ्च से हटके, वैभवशाली आ प्रत्यक्ष, अनुमान आदि प्रमाणन के अविषय हऊवन? काहे से कि अनुमान आदि पर परमान भी प्रत्यक्षे पर आधारित आ ओकरे से घेराईल रहेले ।।४।।

स्वप्रकाशविराजन्तमनामयमनौपमम् ।
सर्वज्ञं सर्वगं शान्तं सर्वशक्ति निरङ्कुशम्।।५।।

भावार्थ : ऊ अपनेआप रहेवालां परकाश, विशेष रूप से परकाश देबेवाला, एकदमे स्वच्छ, कवनो भी उपमा जेकरा खातिर ना दिहल जा सकेला, ऊ सबकुछ जानेवाला, ऊ सब जगहा में बाटे, शान्तरहेवाला, सब शक्तियन से जुड़ल बाटे आ केहू से बन्हाईल नईखे ।।५।।

शिवरुद्रमहादेवभवादिपदसंज्ञितम् ।
अद्वितीयमनिर्देश्यं परं ब्रह्म सनातनम्।।६।।

भावार्थ : ऊ परब्रह्म शिव, रुद्र, महादेव, भव आदि नामन से जाने जोग (ज्ञेय), जेकरा नीयर दोसर केहू नईखे (अद्वितीय), जे केहू से निर्देश करे के जोग नईखन (अनिर्देश्य) अऊरी सनातन (जेकर ना आदि बा ना अन्त बा) बानी ।।६।।

तत्र लीनमभूत् पूर्वं चेतनाचेतनं जगत्।
स्वात्मलीनं जगत्कार्यं स्वप्रकाश्यं तदद्‌भुतम्।।७।।

भावार्थ : सृष्टि होखे के पहिले ई जड़ आ चेतन जगत् ऊहें में समाईल रहे। ई जगतरूपी अद्‌भुत काम अपना आतमा में अर्थात् परब्रह्म में लीन होखत स्वयं परब्रह्म के द्वारा ही परकाशित बाटे ।।७।।

शिवाभिधं परं ब्रह्म जगन्निर्मातुमिच्छया।
स्वरूपमादधे किञ्चित्सुखस्फूर्तिविजृम्भितम्।।८।।

भावार्थ : शिवनामवाला ई परब्रह्म जगत् के रचना करे के इच्छा से तनी-सा आनन्द में मिलावल खुशी (उल्लास) से जुड़ल सरूप के धारन कईनी ।।८।।

निरस्तदोषसम्बन्धं निरुपाधिकमव्ययम्।
दिव्यमप्राकृतं नित्यं नीलकण्ठं त्रिलोचनम्।।९।।

भावार्थ : ऊ सरूप कवनों भी दोष से जुड़ल ना रहे, कवनो भी उपाधि से जुड़ल ना रहे आ ऊ कबो नाश होखे वाला ना रहे, अर्थात् नित्य (जवन हरदम रहे), दिव्य (जवन अलौकिक होखे), अप्राकृत (जवन ई प्रकृत से परे होखे), नीलकण्ठ (जेकर कण्ठ नीला होखे) आ त्रिलोचन (जेकर तीन गो आँख) रहे ।।९।।

चन्द्रार्धशेखरं शुद्धं शुद्धस्फटिकसन्निभम्।
शुद्धमुक्ताफलाभासमुपास्यं गुणमूर्तिभिः।।१०।।

भावार्थ : (ऊ सरूप) माथा पर आधा चनरमा के धारन करेवाला, शुद्ध स्फटिक के नीयर स्वच्छ आ परकाशित रहेवाला, शुद्ध मोती के नीयर गुणमूर्तियन (तीनु मूर्ति = ब्रह्मा, विष्णु आ महेश) के द्वारा उपासना करे के जोग रहे ।।१०।।

विशुद्धज्ञानकरणं विषयं सर्वयोगिनाम्।
कोटिसूर्यप्रतीकाशं चन्द्रकोटिसमप्रभम्।।११।।
अप्राकृतगुणाधारमनन्तमहिमास्पदम् ।

भावार्थ : (ऊ सरूप) विशुद्ध ज्ञान के असाधारण कारन, सगरी जोगिलोग के ध्यान के विषय, करोड़न सूरूज के नीयर परकाश देबेवाला, करोड़न चनरमा के जईसन चमकेवाला, प्रकृति के जवन तीनु गुण बा ओकरा से भिन्न, सर्वज्ञता, तृप्ति आ अनादि बोध आदि गुणन के आधार तथा अनन्त महिमावाला रहे ॥११॥

तदीया परमा शक्तिः सच्चिदानन्दलक्षणा।।१२।।
समस्तलोकनिर्माणसमवायस्वरूपिणी।
तदिच्छयाऽभवत् साक्षात्तत्स्वरूपानुसारिणी।।१३।।

भावार्थ : ओकर (ओ सरूप के) सत्, चित् आ आनन्द लछनवाली परमाशक्ति जे कि सगरी लोक के बनावे खातिर समवायरूपा बाड़ी, उनकर इच्छा से उनकरे (ओ सरूप के) जईसन हो गईली ॥१३॥

स शम्भुर्भगवान् देवः सर्वज्ञः सर्वशक्तिमान्।
जगत्सिसृक्षुः प्रथमं ब्रह्माणं सर्वदेहिनाम्।।
कर्तारं सर्वलोकानां विदधे विश्वनायकः।।१४।।

भावार्थ : इ सगरो संसार के नायक, भगवान्, सबकुछ जानेवाला, सर्वशक्तिमान् ऊ शम्भु संसार के रचना करे के इच्छा से युक्त होके सबका ले पहिले सगरी लोकन आ के सगरी जीवसन के कर्ता ब्रह्माजी के रचना कईनी ॥१४॥

तस्मै प्रथमपुत्राय शङ्करः शक्तिमान् विभुः।
सर्वज्ञः सकला विद्याः सानुग्रहमुपादिशत्।।१५।।

भावार्थ : सबकुछ जानेवाला आ सबका में समाईल भगवान् शंकर अपना ओ पहिला बेटा के किरिपा के साथे सगरी विद्यासन के उपदेश कईनी ॥१५॥

प्राप्तविद्यो महादेवाद् ब्रह्मा विश्वनियामकात्
समस्तलोकान्निर्मातुं समुद्यमपरोऽभवत्।
कृतोद्योगोऽपि निर्माणे जगतां शङ्कराज्ञया
अज्ञातोपायसम्पत्तेरभवन्माययाऽऽवृतः।।१६।।

भावार्थ : संसार के नियम के बनावेवाला महादेव से विद्या पावेवाला ब्रह्माजी सगरी लोकन के रचे में लाग गईनी। शंकरजी के आज्ञा से संसार के बनावे में प्रयास कईला पर भी उपाय के ना जानला के कारन ऊ (ब्रह्माजी) माया से घेराईल किंकर्त्तव्यविमूढ़ (का करी आ का ना कारी) हो गईनी ॥१६॥

विधातुमखिलाँल्लोकाननुपायं प्राप्तुमिच्छया।
पुनस्तं प्रार्थयामास देवदेवं त्रियम्बकम्।।१७।।

भावार्थ : सगरी लोकन के रचना करे खातिर उपाय पावे के इच्छा से ब्रह्माजी फेर से ओ देवाधिदेव महादेव त्रिलोचन से प्रार्थना कईनी ॥१७॥

नमस्ते देवदेवेश नमस्ते करुणाकर।
अस्मदादिजगत्सर्वनिर्माणनविधिक्षम ।।१८।।
उपायं वद मे शम्भो जगत्स्रष्टः जगत्पते ।
सर्वज्ञः सर्वशक्तिस्त्वं सर्वकर्ता सनातनः।।१९।।

भावार्थ : हे सगरी देवतालोग के मालिक ! रऊवा के नमस्कार बाटे। सगरी परानी लोग पर करुना करे वाला, हमरा से लेके सगरी संसार के सृष्टि में रऊवा सक्षम बानी ऐसे रऊवा के नमस्कार बाटे। हे शम्भु! हे संसार के मालिक ! हमरा के उपाय बतलाई। काहे से कि रऊवा सबकुछु जानेवाला, सबका ले शक्तिमान्, सगरी लोकन के बनावेवाला आ सनातन बानी ॥१८-१९॥

इति संप्रार्थितः शम्भुर्ब्रह्मणा विश्वनायकः।
उपायमवदत् तस्मै लोकसृष्टिप्रवर्तनम्।।२०।।
उपायमीश्वरेणोक्तं लब्ध्वाऽपि चतुराननः।
न समर्थोऽभवत् कर्तुं नानारूपमिदं जगत्।।२१।।

भावार्थ : अईसे ब्रह्माजी जब शंकर भगवान् के प्रार्थना कईनी तब विश्व के नायक भगवान् शिव ऊहाँ के लोक सृष्टि के उपाय बतलवनी। ईश्वर (भगवान् शिवजी) के द्वारा बतलावल गईल उपाय के पा लेहला के बाद चतुरानन (चार मुखवाला ब्रह्माजी) अनेक प्रकार के रूपवाला ई संसार के रचना करे में समर्थ ना हो पवनी ॥२०॥

पुनस्तं प्रार्थयामास ब्रह्मा विह्वलमानसः।
देवदेव महादेव जगत्प्रथमकारण।।२२।।

भावार्थ : एकरा बाद एकदमे बियाकुल मनवाला ब्रह्माजी फेर से ओ शिव से प्रार्थना कईनी - हे देवाधिदेव महादेव ! संसार के पहिलका कारन रऊवा के नमस्कार बाटे ॥२२॥

नमस्ते सच्चिदानन्द स्वेच्छाविग्रहराजित।
भव शर्व महेशान सर्वकारणकारण।।२३।।
भवदुक्तो ह्युपायो मे न किञ्चिज्ज्ञायतेऽधुना।

भावार्थ : हे सच्चिदानन्द ! अपना इच्छा से देह के धारन करेवाला ! भव, शर्व आ महेश्वर सब कारन के कारन ! रऊवा द्वारा बतलावल गईल उपाय हमरा समझ में कुछुओ नईखे आवत ॥२३॥

सृष्टिं विधेहि भगवन् प्रथमं परमेश्वर।
ज्ञातोपायस्ततः कुर्यां जगत्सृष्टिमुमापते।।२४।।

भावार्थ : हे परमेश्वर ! हे भगवन् ! पहिले रउवा सृष्टि करीं। हे उमापते ! ओकरा बाद उपाय जानके हम संसार के रचना करेब ॥२४॥

इत्येवं प्रार्थितः शम्भुर्ब्रह्मणा विश्वयोनिना।
ससर्जात्मसमप्रख्यान् सर्वगान् सर्वशक्तिकान्।।२५।।

भावार्थ : ब्रह्मा के ऐह प्रकार से प्रार्थना कईला पर विश्व के कारन कहायेवाला भगवान् शिवजी अपनही खानी शोभावाला प्रमथगणन के उत्पन्न कईनी ॥२५॥

प्रबोधपरमानन्दपरिवाहितमानसान् ।
प्रमथान् विश्वनिर्माणप्रलयापादनक्षमान्।।२६।।

भावार्थ : ऊ सब (प्रमथगण) सगरी जगहा जायेवाला (सर्वगामी), सर्वशक्तिमान्, प्रबोधजनित, परम आनन्द से भरल चित्तवाला आ विश्व के रचना करे में समर्थ रहल लो ॥२५॥

तेषु प्रमथवर्गेषु सृष्टेषु परमात्मना ।
रेणुको दारुकश्चेति द्वावभूतां शिवप्रियौ: ।।२७।।

भावार्थ : परमात्मा शिव के द्वारा बनावल गईल ओ प्रमथगण में से रेणुक आ दारुक ई दुनु भगवान् शिव के प्रिय भईल लो ॥२७॥

सर्वविद्याविशेषज्ञौ सर्वकार्यविचक्षणौ।
मायामलविनिर्मुक्तौ महिमातिशयोज्ज्वलौ।।२८।।

भावार्थ : अब ऊ दुनुन गणेश्वरन (रेणुक आ दारुक) के पाँच श्लोकन में वर्णन करल जाता :- ऊ दुनु (रेणुक आ दारुक) सगरी विद्या में निपुन, सगरी काम के करे में कुशल, मायीयमल से रहित अतः अपना ही महिमा से अत्यन्त उर्जस्वल रहे लो ॥२८॥

आत्मानन्दपरिस्फूर्तिरसास्वादनलम्पटौ।
शिवतत्त्वपरिज्ञानतिरस्कृतभवामयौ।।२९।।

भावार्थ : (रेणुक आ दारुक) आत्मानन्द के परिस्फुरण से परगट भईल रस के चखेवाला आ शिवतत्त्व के ज्ञान से भरल संसाररूपी आमय अर्थात् रोग से परे रहे लो ॥२९॥

नानापथमहाशैवतन्त्रनिर्वाहतत्परौ ।
वेदान्तसारसर्वस्वविवेचनविचक्षणौ ।।३०।।

भावार्थ : अनेक रास्ता वाला शिवाद्वय तन्तर के पालन करे में तत्पर आ वेदान्त के सार (निचोड़), सबकुछ के विवेचना कर में भी निपुन रहे लो ।।३०।।

नित्यसिद्धौ निरातङ्कौ निरङ्कुशपराक्रमौ।
तादृशौ तौ महाभागौ संवीक्ष्य परमेश्वरः।।३१।।

समर्थौ सर्वकार्येषु विश्वासपरमाश्रितौ।
अन्तःपुरद्वारपालौ निर्ममे नियतौ विभुः।।३२।।

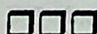
भावार्थ : नित्यसिद्ध (जे हरदम खातिर सिद्ध हो गईल होखे), आतङ्क से रहित (जे कवनो भी आतङ्क से रहित होखे), अजेय पराक्रम वाला (जेकरा के केहू जीत ना सके ओइसन बलवाला) अईसन भाग्यशाली इ दुनु लोग के देखके परमेश्वर ए लोग के सगरी काम के करे में समर्थ आ परम विश्वास करेवाला समझनी । अतः भगवान् शिव इ दुनु लोग के अपना अन्तःपुर के द्वारपाल रख लिहनी ।।३१-३२।।

गणेश्वरौ रेणुकदारुकावुभौ विश्वासभूतौ नवचन्द्रमौलेः।
अन्तःपुरद्वारगतौ सदा तौ वितेनतुर्विश्वपतेस्तु सेवाम्।।३३।।

भावार्थ : अईसे रेणुक आ दारुक दुनु लईका चनरमा (बालचन्द्र) से शोभित माथावाला शिव के विश्वासपात्र होके आ हरदम अन्तःपुर के दुआरी पर खड़ा होके विश्व के रक्षा करेवाला भगवान् शिव के सेवा करे लागल लो ।।३३।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां
शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये
श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ
जगत्सृष्टिविचार-रेणुकदारूकावतरणं नाम द्वितीयः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के
अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के
निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि
के जगत्सृष्टिविचार-रेणुकदारुकावतरण नामवाला
दोसरका परिच्छेद समाप्त भईल ।।२।।



तृतीयः परिच्छेदः (तीसरा परिच्छेद)

रेणुकाचार्य के भूलोकावतरण
कैलासवर्णन

कदाचिदथ कैलासे कलधौतशिलामये।
गन्धर्ववामनयनाक्रीडामौक्तिकदर्पणे ।।१।।

भावार्थ : एकरा बाद एक बार चाँनी के पत्थरवाला आ गन्धर्वसन के स्त्रियन के खातिर मोती के ऐनक के नीयर कैलास पर्वत पर भगवान् शिव बईठल रहनी ।।१।।

मन्दारवकुलाशोकमाकन्दप्रायभूरुहे ।
मल्लीमरन्दनिष्यन्दपानपीनमधुव्रते ।।२।।

भावार्थ : ओ पर्वत पर कल्पवृक्ष, मौलेसरी, अशोक आ आम के पेड़ उगल रहे। मोगरा के मकरन्द (सुगन्ध) के रस के पीयेवाला भौंरा ओइजा बड़हन-बड़हन रहलसन ।।२।।

कुङ्कुमस्तबकामोदकूलङ्कषहरिन्मुखे ।
कलकण्ठकुलालापकन्दलद्रागबन्धुरे ।।३।।

भावार्थ : सगरी दिशा लाल फूल के गुच्छा के आमोद से पूरा नदी से भरल रहे। ऊ पर्वत कोईलर सन के समूह के मधुर बोली से मनोहर लागत रहे ।।३।।

किन्नरीगीतमाधुर्यपरिवाहितगह्वरे ।
सानन्दवरयोगीन्द्रवृन्दालङ्कृतकन्दरे ।।४।।

भावार्थ : ओकर गुफा किन्नर के स्त्री-सन के गीत के मधुरता से व्याप्त रहे। ओकर कन्दरा ब्रह्मानन्द के अनुभव करेवाला श्रेष्ठ जोगी के समूह से सुशोभित रहे ।।४।।

हेमारविन्दकलिकासुगन्धिरसमानसे ।
शातकुम्भमयस्तम्भशतोत्तुङ्गविराजिते ।।५।।

भावार्थ : मानसरोवर सोना के कमल के कोढ़ी सन के सुगन्ध के रस से भरल रहे। सोना से बनल सैकड़न ऊँच-ऊँच खम्भा ओईजा विराजत रहे ।।५।।

माणिक्यदीपकलिकामरीचिद्योतितान्तरे ।
द्वारतोरणसंरूढशङ्खपद्मनिधिद्वये ।।६।।

भावार्थ : ओ पर्वत के भीतरवाला भाग माणिक्य के दीयासन के कलिका (लौ) से अजोर रहे आ ओकरा दुवारी पर तोरन के शङ्ख आ कमल दुगो निधि (खजाना) रहली सन ।।६।।

मुक्तातारकितोदारवितानाम्बरमण्डिते ।
स्पर्शलक्षितवैडूर्यमयभित्तिपरम्परे ।।७।।

भावार्थ : ऊ पर्वत मोतियन के तारा से अङ्कित (जटित) विशाल कपड़ा के तम्बू से सुशोभित रहे । ओईजा देवालन पर छुवला से बुझायेवाला वैडूर्य मणि जड़ल रहली सन आ चाहे देवालन पर जड़न वैदूर्य मणियन के छुवला से ही बुझल जा सकत रहे देखला से ना ।।७।।

सञ्चरत्प्रमथश्रेणीपदवाचालनूपुरे ।
प्रवालवलभीशृङ्गशृङ्गारमणिमण्टपे ।।८।।

भावार्थ : ऊहाँ पर घुमेवाला प्रमथगण लोग के गोड़ में बन्हाईल घुँघरू बाजत रहल सन । प्रवालसन से बनल वलभी (छाजन) आ शृंग (चोटी) से शोभित मणिसन से बनल मण्डप ओईजा सुशोभित होत रहल सन ।।८।।

वन्दारुदेवमुकुटमन्दाररसवासितम् ।
रत्नसिंहासनं द्विव्यमध्यस्तं परमेश्वरम्।।९।।

भावार्थ : वन्दना में लागल देवतालोग के मुकुट में जुड़ल कल्पवृक्ष के फूलन के सुगन्ध से महकत दिव्य सिंहासन पर बईठल परमेश्वर के ऊहाँ के परिवार के लोग सेवा करत रहे लो ।।९।।

तमास्थानगतं देवं सर्वलोकमहेश्वरम्।
त्रय्यन्तकमलारण्यविहारकलहंसकम् ।।१०।।

भावार्थ : अब परमेश्वर के सरूप आ वैभव के वर्णन करत बानी - देवतालोग से जुड़ल जगहा पर विराजमान सगरी देवतालोग के स्वामी ऊ देव वेदान्त अर्थात् उपनिषद्रूपी कमल के झुण्ड में घुमेवाला राजहंस के नीयर रहनी ।।१०।।

उदारगुणमोंकारशुक्तिकापुटमौक्तिकम् ।
सर्वमङ्गलसौभाग्यसमुदायनिकेतनम् ।।११।।

भावार्थ : ऊ उदारता आदि गुणन से जुड़ल, ओङ्कार रूपी सीपी के मोती आ सगरी मङ्गलकरेवाला सौभाग्य समुदाय के खजाना रहनी ॥११॥

संसारविषमूर्च्छालुजीवसञ्जीवनौषधम् ।
नित्यप्रकाशनैर्मल्यकैवल्यसुरपादपम् ॥१२॥

भावार्थ : ऊ भगवान् शिव संसाररूपी जहर से मूर्च्छित जीवन खातिर सञ्जीवनी अर्थात् अमृत नीयर दवाई आ नित्यप्रकाश आ निर्मलता से जुड़ल कैवल्य के कल्पवृक्ष रहनी ॥१२॥

अनन्तपरमानन्दमकरन्दमधुव्रतम् ।
आत्मशक्तिलतापुष्यत्त्रिलोकीपुष्पकोरकम् ॥१३॥

भावार्थ : ऊ परमेसर अनन्त परमानन्द मकरन्द के सेवन करेवाला, मधुप (मध के पीयेवाला) आ अपना शक्तिरूपी लता से पुष्टि करेवाला त्रिभुवन रूपी फूल के कली के नीयर शोभा देत रहनी ॥१३॥

ब्रह्माण्डकुण्डिकाषण्डपिण्डीकरणपण्डितम् ।
समस्तदेवताचक्रचक्रवर्तिपदे स्थितम् ॥१४॥

भावार्थ : ब्रह्माण्ड रूपी कुण्डिका के टुकड़ा के जोड़े में पण्डित आ समस्त देवतालोग के चक्रवर्ती लागत रहनी ॥१४॥

चन्द्रबिम्बायुतच्छायादायादद्युतिविग्रहम् ।
माणिक्यमुकुटज्योतिर्मञ्जरीपिञ्जराम्बरम् ॥१५॥

भावार्थ : ऊ भगवान् शङ्कर हजारगो चनरमा के छाया के दायाद (सम्बन्धी) चमक से जुड़ल शरीरवाला आ माणिक्य से जुड़ल मुकुट के ज्योति के किरिन से व्याप्त कपड़ावाला रहनी ॥१५॥

चूडालं सोमकलया सुकुमारबिसाभया ।
कल्याणपुष्पकलिकाकर्णपूरमनोहरम् ॥१६॥

भावार्थ : ऊ कोमल बिसतन्तु के नीयर चनरमा के कला के चूड़ा पर धारण कईके आ कल्याणरूपी फूल के कलि के कर्णपूर से मनोहर रहनी ॥१६॥

मुक्तावलयसम्बद्धमुण्डमालाविराजितम् ।
पर्याप्तचन्द्रसौन्दर्यपरिपन्थिमुखश्रियम् ॥१७॥

भावार्थ : ऊ मोतीयन के माला से गूँथल, मुड़ी के माला से शोभा देत आ प्रचुर चनरमा के सुन्दरता के टक्कर देबेवाला मुख के शोभावाला रहनी ॥१७॥

प्रातःसम्फुल्लकमलपरियायत्रिलोचनम् ।
मन्दस्मितमितालापमधुराधरपल्लवम् ॥१८॥

भावार्थ : ऊनकर तीनु आँख सबेरे खिलल कमल के नीयर रहे लो आ नीचला-होठ-पल्लो नीयर धीमा मुस्कान आ मितभाषण से मधुर लागत रहे ॥१८॥

गण्डमण्डलपर्यन्तक्रीडन्मकरकुण्डलम् ।
कालिम्ना कालकूटस्य कण्ठनाले कलङ्कितम् ॥१९॥

भावार्थ : मगरमच्छ के आकृतिवाला कान के गहना ऊहाँ के कपोल तक लटकत रहे आ कण्ठ के नलिका कालकूट के कालिमा (करीखा) से कलङ्कित माने नीला हो गईल रहे ॥१९॥

मणिकङ्कणकेयूरमरीचिकरपल्लवैः ।
चतुर्भिः संविराजन्तं बाहुमन्दारशाखिभिः ॥२०॥

भावार्थ : कल्पवृक्ष के डाढ़ी के नीयर सुड़ौल आ मणि से जुड़ल कंगन के पहिरले हाथरूपी पल्लववाला चारगो बाँह से ऊ बहुत सोहात रहनी ॥२०॥

गौरीपयोधराश्लेषकृतार्थभुजमध्यमम् ।
सुवर्णब्रह्मसूत्राङ्कं सूक्ष्मकौशेयवाससम् ॥२१॥

भावार्थ : ऊहाँ के बाँह के बीचला भाग माने वक्षःस्थल गौरी के स्तन से संश्लिष्ट रहे आ ऊ सोना के जनेऊ आ सूक्ष्म रेशमी कपड़ा पहिनले रहनी ॥२१॥

नाभिस्थानमवलम्बिन्या नवमौक्तिकमालया।
गङ्गयेव कृताश्लेषं मौलिभागावतीर्णया॥२२॥

भावार्थ : नाभिस्थान (ढोड़ी) तक लटकत मोती के माला अईसन लागत रहे कि मुड़ी से उतरके गङ्गाजी उनका के गले लगावत बानी ॥२२॥

पदेन मणिमञ्जीरप्रभापल्लवितश्रिया।
चन्द्रवत्स्फाटिकं पीठं समावृत्य स्थितं पुरः॥२३॥

भावार्थ : मणि से जुड़ल मञ्जीर के अजोरिया से पल्लो नीयर शोभावाला, गोड़ के चनरमा के जईसन स्फटिक से बनल पीठ पर रखकर बईठल रहनी ॥२३॥

वामपार्श्वनिवासिन्या मङ्गलप्रियवेषया ।
समस्तलोकनिर्माणसमवायस्वरूपया ॥२४॥

भावार्थ : अब परमेसर के शक्ति उमा के वर्णन करत बानी—परमेसर के बाये पारबतीजी बईठल रहली। ऊ मङ्गल आ अच्छालागेवाला वेशभूषा वाली आ सगरी लोक के रचना के समवायिकारणरूपा रहली ॥२४॥

इच्छाज्ञानक्रियारूपबहुशक्तिविलासया।
विद्यातत्त्वप्रकाशिन्या विनाभावविहीनया।।२५।।

भावार्थ : ऊ भवानी इच्छा, ज्ञान आ क्रिया रूपी अनेक शक्तिसन से सोहात, शुद्ध विद्या तत्त्व के प्रकाशित करेवाली आ शिवा के साथे अविनाभाव सम्बन्धवाली भी रहली ॥२५॥

संसारविषकान्तारदाहदावाग्निलेखया ।
धम्मिल्लमल्लिकामोदझङ्कुर्वद्भृङ्गमालया ।।२६।।

भावार्थ : ऊ संसाररूपी जहर के जंगल के जरावे खातिर दावाग्नि (जंगल में लागेवाला आग) के ज्वाला नीयर सोहात रहली। ऊहाँ के चोटी में गूँथल जूही के कोढ़ी के महकला से भौंरासन के झुण्ड झङ्कार करत रहे ॥२६॥

सम्पूर्णचन्द्रसौभाग्यसंवादिमुखपद्मया ।
नासामौक्तिकलावण्यनाशीरस्मितशोभया ।।२७।।

भावार्थ : ऊहाँ के मुखकमल पूरा-चनरमा के सुन्दरता के तिरस्कार करेवाला रहे। नाक में लागल मोती के सुन्दरता से ऊहाँ के नाक के छेद अईसन बुझात रहे कि जईसे धीरे-धीरे मुसकात होखे ॥२७॥

मणिताटङ्करङ्गान्तर्वलितापाङ्गलीलया ।
नेत्रद्वितयसौन्दर्यनिन्दितेन्दीवरत्विषा ।।२८।।

भावार्थ : ऊ पारबतीजी मणिजटित ताटङ्क (कान के गहना) रूपी रङ्गमंच पर अईसन लागत रहली कि अपाङ्गलीला (आँख के ऐने-ओने चमकावल) करत बानी। दुनु आँख के सुन्दरता से ऊ नीलकमल के सुन्दरता के चमक के भी तिरस्कृत करत रहली ॥२८॥

कुसुमायुधकोदण्डकुटिलभ्रूविलासया ।
बन्धूककुसुमच्छायाबन्धुभूताधरश्रिया ।।२९।।

भावार्थ : ऊहाँ के भ्रूविलास (भौंह के टेढ़-मेढ़ कईल) कामदेव के धेनुष के नीयर टेढ़ रहे आ होठ के शोभा बन्धूक फूल के परछाई के नीयर रहे ॥२९॥

कण्ठनालजितानङ्गकम्बुबिब्बोकसम्पदा।
बाहुद्वितयसौभाग्यवञ्चितोत्पलमालया।।३०।।

भावार्थ : ऊ पारबतीजी कण्ठनाल से निकलल शब्द से कामदेव के शंख के ध्वनि के खजाना के जीतेवाली आ दुनु बाँह के सुन्दरता से नीलकमल के भी तिरस्कृत करेवाली रहनी ॥३०॥

स्थिरयौवनलावण्यशृङ्गारितशरीरया ।
अत्यन्तकठिनोत्तुङ्गपीवरस्तनभारया ।।३१।।

भावार्थ : ऊहाँ के देह स्थिर यौवन के सुन्दरता से सिंगार से जुड़ल लागत रहे। ऊहाँ के कठिन, ऊँच आ चौड़ा स्तन के बोझा से जुड़ल अतः नम्र रहनी ॥३१॥

मृणालवल्लरीतन्तुबन्धुभूतावलग्नया ।
शृङ्गारतटिनीतुङ्गपुलिनश्रोणिभारया ।।३२।।

भावार्थ : ऊहाँ के अवलग्न (कमर) कमल के डण्ठल के छिलका नीयर पातर रहे। ऊहाँ के सिंगाररूपी नदी के ऊँच किनारा नीयर नितम्ब के बोझा से अलसगमना (जायें में जेकरा आलस ओखे) रहनीं ॥३२॥

कुसुम्भकुसुमच्छायाकोमलाम्बरशोभया।
शृङ्गारोद्यानसंरम्भरम्भास्तम्भोरुकाण्डया।।३३।।

भावार्थ : कुसुम्भ फूलन के रंगवाला कोमल कपड़ा से ऊहाँ के सोहात रहनी। ऊहाँ के जाँघ सिंगार के बगईचा के नीमन केरा के खम्भा नीयर रहे ॥३३॥

चूतप्रवालसुषुमासुकुमारपदाब्जया ।
स्थिरमङ्गलशृङ्गारभूषणालङ्कृताङ्गया।।३४।।

भावार्थ : ऊहाँ के गोड़ आम के कोमल नया पल्लों के नीयर सुनर आ सुकुमार रहे। ऊहाँ के अंग हमेशा रहेवाला मङ्गल सिंगार वाला गहना से सोहात रहे ॥३४॥

हारनूपुरकेयूरचमत्कृतशरीरया ।
चक्षुरानन्दलतया सौभाग्यकुलविद्यया।।३५।।

भावार्थ : ऊहाँ के शरीर हार (गर में के गहना), नुपुर (गोड़ में के गहना) आ केयूर (बाँही में के गहना) से चमकत रहे। आँख आनन्द के लतर नीयर रहली सन। अतः ऊ सौभाग्य के कुल के विद्या सरूपा रहली ॥३५॥

उमया सममासीनं लोकजालकुटुम्बया।
अपूर्वरूपमभजन् परिवाराः समन्ततः।।३६।।

भावार्थ : लोकसमूह के परिवारवाली ओ पारबतीजी के साथे भगवान् शिवजी भी बईठल रहनी। अईसन अपूर्व रूपवाले भगवान् उमानाथ के ऊहाँ के परिवार के लोग सगरी ओर से सेवा करत रहे लो ।।३६।।

पुण्डरीकाकृतिं स्वच्छं पूर्णचन्द्रसहोदरम्।
दधौ तस्य महालक्ष्मीः सितमातपवारणम्।।३७।।

भावार्थ : महालछिमीजी उनके छत्र के लेहले रहनी जवन कि कमल के आकारवाला, एकदम सफेद, पूर्णमासी के चनरमा के नीयर ऊजर रंग के रहे ।।३७।।

तन्त्रीझङ्कारशालिन्या सङ्गीतामृतविद्यया।
उपतस्थे महादेवमुपान्ते च सरस्वती।।३८।।

भावार्थ : बगले में सरसतीजी वीणा के झङ्कार से जुड़ल संगीतरूपी अमरित विद्या से महादेवजी के उपासना करत रहली ।।३८।।

झणत्कङ्कणजातेन हस्तेनोपनिषद्वधूः।
ओंकारतालवृन्तेन वीजयामास शङ्करम्।।३९।।

भावार्थ : उपनिषद् रूपी पतोह झनकत कंगनवाला हाथ से ओंकाररूपी पंखा के द्वारा शंकरजी के पंखा झालत रहली ।।३९।।

चलच्चामरिकाहस्ता झङ्कुर्वन्मणिकङ्कणाः।
आसेवन्त तमीशानमभितो दिव्यकन्यकाः।।४०।।

भावार्थ : जिनके हाथ में चामर हलात रहे आ मणिजटित कंगन झंकार करत रहल सन अईसन इन्द्राणी आदि दिव्य कन्या ओ परमेसर के सब ओर से सेवा करत रहे लो ।।४०।।

चामराणां विलोलानां मध्ये तन्मुखमण्डलम्।
रराज राजहंसानां भ्रमतामिव पङ्कजम्।।४१।।

भावार्थ : हिलत-डुलत चामरन के बीच ओ शंकरजी के मुँह अईसन लागत रहे, जईसे घूमत राजहंसन के बीच में खिलल कमल होखे ।।४१।।

मन्त्रेण तमसेवन्त वेदाः साङ्गविभूतयः ।
भक्त्या चूडामणिं कान्तं वहन्त इव मौलिभिः।।४२।।

भावार्थ : अंगरूपी (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष छह गो वेदांग कहल जालल सन) विभूतिसन के साथ वेदपुरुष अपना उपनिषद्रूपी सिर पर मनोहर चूड़ामणि पहिरले भक्ति के साथे मन्त्र के द्वारा ओ शंकरजी के सेवा करत रहे लो ॥४२॥

तदीयायुधधारिण्यस्तत्समानविभूषणाः ।
अङ्गभूताःस्त्रियः काश्चिदासेवन्त तमीश्वरम्॥४३॥

भावार्थ : ओ सब वेद के अंगभूत कवनों अर्थात् दिव्य स्त्रीलोग ऊहाँ के अस्त्र शस्त्र के धारण कईले ऊनहीं नीयर गहना पहिर के नीमन बन के ओ ईश्वर के सेवा करत रहे लो ॥४३॥

आप्ताधिकारिणः केचिदनन्तप्रमुखा अपि।
अष्टौ विद्येश्वरा देवमभजन्त समन्ततः॥४४॥

भावार्थ : अधिकार पावेवाला अनन्त आदि कवनो माने बढिया कोटि के आठगो विद्येश्वर लोग भी चारों ओर से अर्थात् उत्तमकोटि के आठगो विद्येश्वर (अनन्त, सूक्ष्म, शिवोत्तम, एकनेत्र, एकरुद्र, त्रिमूर्ति, श्रीकण्ठ आ शिखण्डी) भी चारो ओर से उनके सेवा करत रहे लो ॥४४॥

ततो नन्दी महाकालश्चण्डो भृङ्गी रिटिस्ततः।
सेनानिर्गजवक्त्रश्च रेणुको दारुकस्तथा॥४५॥

घण्टाकर्णः पुष्पदन्तः कपाली वीरभद्रकः।
एवमाद्या महाभागा महाबलपराक्रमाः॥
निरङ्कुशमहासत्त्वा भेजिरे तं महेश्वरम्॥४६॥

भावार्थ : एकरा बाद नन्दी, महाकाल, चण्ड, भृङ्गी, रिटि, घण्टाकर्ण, पुष्पदन्त, कपाली, वीरभद्र आदि प्रमथगण जवन कि महाबली, महापराक्रमी स्वतन्त्र आ महासत्त्ववान् हवे लो ओ महेश्वर के सेवा में लागल रहे लो ॥४५-४६॥

अणिमादिकमैश्वर्यं येषां सिद्धेरपोहनम्।
ब्रह्मादयःसुरा येषामाज्ञालङ्घनभीरवः॥४७॥

भावार्थ : अब ऊ सगरी प्रमथगण सन के विशेषता बतलावतानी - ओ प्रमथगण सन के सिद्धि के आगे अणिमा आदि (अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्त, प्रकाम्य, ईशित्व और वशित्व) सिद्धि तुच्छ रहली सन। ब्रह्मा आदि देवता ओकनी के आज्ञा के ना माने में डेरात रहले ॥४७॥

मोक्षलक्ष्मीपरिष्वङ्गमुदिता येऽन्तरात्मना।
येषामीषत्करं विश्वसर्गसंहारकल्पनम्।।४८।।

भावार्थ : ऊ लोग अपना अन्तरात्मा में मोक्षलछिमी के गले लगावला से आनन्दमय रहे लो। अत: ओ लो खातिर विश्व के आ संहार अत्यन्त आसान काम रहे आ चाहे बेकार रहे ।।४८।।

ज्ञानशक्तिः परा येषां सर्ववस्तुप्रकाशिनी।
आनन्दकणिका येषां हरिब्रह्मादिसम्पदः।।४९।।

भावार्थ : ओ लोग के परा ज्ञान शक्ति सगरी चीज के प्रकाशित करेवाला रहली आ ब्रह्माजी विष्णुजी आदि लोग के सम्पत्ति ओ लोग के लगे रहेवाला आनन्द के कणिका मात्र रहे ।।४९।।

आकाङ्क्षन्ते पदं येषां योगिनो योगतत्पराः।
काङ्क्षणीयफलो येषां सङ्कल्पः कल्पपादपः।।५०।।

भावार्थ : जोग में लागल जोगीलोग ओ लोग के पदवी लेबे के इच्छा करे ला लो। ओ लोग के संकल्प ही मनोवांछित फल के देबे वाला कल्पवृक्ष बाटे ।।५०।।

कर्मकालादिकार्पण्यचिन्ता येषां न विद्यते।
येषां विक्रमसन्नाहा मृत्योरपि च मृत्यवः।।५१।।

ते सारूप्यपदं प्राप्ताः प्रमथा भेजिरे शिवम्।

भावार्थ : जेकरा कर्म आ काल आदि से जनमल दु:ख के चिन्ता ना होला। ओकर पराक्रम से भरल काम मृत्यु के भी मृत्यु होला। भगवान् शिव के सारूप्य (अपने नीयर) पद के जे पा लेहले बा ऊ प्रमथगण लो शिवजी के सेवा में लागल रहे लो ।।५१।।

ब्रह्मोपेन्द्रमहेन्द्राद्या विश्वतन्त्राधिकारिणम्।
आयुधालङ्कृतप्रान्ताः परितस्तं सिषेविरे।।५२।।

भावार्थ : ब्रह्मा, विष्णु आ देवराज इन्द्र आदि देवता लो अपना-अपना शस्त्र से सुसज्जित होके विश्व के बढ़ावे के अधिकारी ऊ भगवान् शिव के सार्वभौम सेवा करत रहे लो ।।५२।।

आदित्या वसवो रुद्रा यक्षगन्धर्वकिन्नराः।
दानवा राक्षसा दैत्याः सिद्धा विद्याधरोरगाः।।
अभजन्त महादेवमपरिच्छिन्नसैनिकाः।।५३।।

भावार्थ : बारह गो सूरूज, आठगो वसु, एगारे गो रुद्र, कुबेर आदि यक्ष, हाहा, हूहू आदि गन्धर्व, अश्वमुख आदि किन्नर, बाण आदि दानव, रावण आदि राक्षस, तारक आदि दैत्य, आदिनाथ आदि सिद्ध, मणिभद्र आदि विद्याधर, शेषनाग आदि साँप, असंख्य सैन्यबल से युक्त होके महादेवजी के सेवा करत रहे लो ॥५३॥

वसिष्ठो वामदेवश्च पुलस्त्यागस्त्यशौनकाः।
दधीचिर्गौतमश्चैव सानन्दशुकनारदाः॥५४॥

उपमन्युभृगुव्यासपाराशरमरीचयः ।
इत्याद्या मुनयः सर्वे नीलकण्ठं सिषेविरे॥५५॥

भावार्थ : वसिष्ठ, वामदेव, पुलस्त्य, अगस्त्य, शौनक, दधीचि, गौतम, सानन्द, शुकदेव, नारद, उपमन्यु, भृगु, व्यास, पराशर, मरीचि इत्यादि सगरी मुनिलोग नीलकण्ड के सेवा करत रहे लो ॥५४-५५॥

पार्श्वस्थपरिवाराणां विमलाङ्गेषु बिम्बितः।
सर्वान्तर्गतमात्मानं स रेजे दर्शयन्निव॥५६॥

भावार्थ : लगही स्थित परिवार के निर्मल अंग सन में प्रतिबिम्बित ऊ भगवान् शिवजी अपना के सबके अन्दर विराजमान देखावत शोभा के प्रदान करत रहनी ॥५६॥

क्षणं स शम्भुर्देवानां कार्यभागं निरूपयन्।
क्षणं गन्धर्वराजानां गानविद्यां विभावयन्॥५७॥

भावार्थ : भगवान् शम्भु कबो एक क्षण खातिर देवतालो के काम के बतलाई त कबो गन्धर्व लोग के गानविद्या के सुनत रहनी ॥५७॥

ब्रह्मविष्ण्वादिभिर्देवैः क्षणमालापमाचरन्।
क्षणं देवमृगाक्षीणां लालयन्नृत्यविभ्रमम्॥५८॥

भावार्थ : कबो क्षन भर ब्रह्मा, विष्णु आदि देवतालो के साथे बात करत रहनी त कबो देवतालो के स्त्री के नचला के बड़ाई करत रहनी ॥५८॥

व्यासादीनां क्षणं कुर्वन् वेदोच्चारेषु गौरवम्।
विदधानः क्षणं देव्या मुखे बिम्बाधरे दृशः॥५९॥

भावार्थ : एक क्षन में वेदोच्चारण के विषे में व्यास आदि के बड़ाई करत रहनी त दोसरा क्षने में देवी पारबतीजी के बिम्ब नीयर होठवाला मुँह के देखत रहनी ॥५९॥

हास्यनृत्यं क्षणं पश्यन् भृङ्गिणा परिकल्पितम्।
नन्दिना वेत्रहस्तेन सर्वतन्त्राधिकारिणा।।६०।।

अमुञ्चता सदा पार्श्वमात्माभिप्रायवेदिना।
चोदितान् वासयन् कांश्चिद्विसृजन् भ्रूविलासतः।।
सम्भावयंस्तथा चान्यानन्यानपि नियामयन्।।६१।।

भावार्थ : कबो भृङ्गियन के साथे होवत हँसे वाला नाच के देखी त कबो सगरी काम के अधिकारी वेत्रहस्त हमेशा लगही खड़ा आ आतमा के बात के जानेवाला नन्दी के द्वारा बोलावल गईल लोग के लेके आईं आ भौंह के इशारा से दोसरा के भेजी आ केहू के नीमन बात से खुश करीं आ केहू के शासित करीं ।।६०-६१।।

समस्तभुवनाधीशमौलिलालितशासनः।
अकुण्ठशक्तिरव्याजलावण्यललिताकृतिः।।६२।।

भावार्थ : ऊहाँ के ओदश सगरी भुवन के स्वामीलो के खातिर मानेवाला रहे। ऊहाँ के आकृति स्वाभाविक सुन्दरता से भी सुन्दर रहे आ शक्ति कुण्ठारहित अर्थात् अव्याहत रहे ।।६२।।

स्थिरयौवनसौरभ्यशृङ्गारितकलेवरः ।
आत्मशक्त्यमृतास्वादरसोल्लासितमानसः।।६३।।

भावार्थ : ऊहाँ के देह स्थिर जवानी के महक से सुसज्जित आ मन आत्मशक्ति रूपी अमरित के रस के पीयला के कारन उल्लास से युक्त रहे ।।६३।।

स्वाभाविकमहैश्वर्यविश्रामपरमावधिः।
निष्कलङ्कमहासत्त्वनिर्मितानेकविग्रहः।।६४।।

भावार्थ : स्वाभाविक महा ऐश्वर्य के विश्राम के अन्तिम सीमा आ स्वरूप के कलङ्क के बिना महासत्त्व के द्वारा अनेक शरीर के धारन करेवाला बानी ।।६४।।

अखण्डारातिदोर्दण्डकण्डूखण्डनपण्डितः।
चिन्तामणिः प्रपन्नानां श्रीकण्ठः परमेश्वरः।।६५।।

भावार्थ : ऊ परमेसर श्रीकण्ठ सगरी शत्रुलो के बाही के खुजली दूर करे में पण्डित, शरण में आईल लोग खातिर चिन्तामणि के नीयर शोभायमान रहनी ।।६५।।

सभान्तरगतं तन्त्रं रेणुकं गणनायकम्।
प्रसादं सुलभं दातुं ताम्बूलं स तमाह्वयत्।।६६।।

भावार्थ : अईसन भगवान् शिवजी सभा के अन्दर बईठल मुख्य गणनायक रेणुक के प्रसाद (लेबे खातिर) पान देबे खातिर बोलवनी ।।६६।।

शम्भोराह्वानसन्तोषसंभ्रमेणैव दारुकम्।
उल्लङ्घ्य पार्श्वमगमल्लोकनाथस्य रेणुकः।।६७।।

भावार्थ : ऊ रेणुक शंकरजी के बोलाहट सुनके जल्दी सन्तुष्ट करे खातिर दारुक के लांघ के लोकनाथ शिवजी के पास अर्थात् बाँया भाग के पहुँच गईले ।।६७।।

तमालोक्य विभुस्तत्र समुल्लङ्घितदारुकम्।
माहात्म्यं निजभक्तानां द्योतयन्निदमब्रवीत्।।६८।।

भावार्थ : सब जगह समाईल ऊ परमेसर अपना भक्त के माहात्म्य देखलावे खातिर दारुक के उल्लङ्घन करेवाला ओ रेणुक से कहनी ।।६९।।

रे रे रेणुक दुर्बुद्धे कथमेष त्वयाऽधुना।
उल्लङ्घितः सभामध्ये मम भक्तो हि दारुकः।।६९।।

भावार्थ : रे बिना बुद्धि के रेणुक! ते सभा के बीच में हमरा भक्त ए दारुण के काहे लंघले हऊवे? ।।६९।।

लङ्घनं मम भक्तानां परमानर्थकारणम्।
आयुः श्रियं कुलं कीर्तिं निहन्ति हि शरीरिणाम्।।७०।।

भावार्थ : हमरा भक्त के लांघल महा अनर्थ के कारन बनेला। ई मनुष्य के आयु, कीर्ति, लछिमी, कुल आ वैभव के नाश कर देला ।।७०।।

मम भक्तमवज्ञाय मार्कण्डेयं[१] पुरा यमः।
मत्पादताडनादासीत् स्मरणीयकलेवरः।।७१।।

भावार्थ : पुरान समय में यमराज हमरा भक्त मार्कण्डेय[१] के अवज्ञा कईला के कारन हमरा पैर के चोट से नष्ट हो गईल रहले ।।७१।।

भृगोश्च शङ्कुकर्णस्य मम भक्तिमतोस्तयोः।
कृत्वानिष्टमभूद् विष्णुर्विकेशो दशयोनिभाक्।।७२।।

भावार्थ : हमार भक्त भृगु आ शङ्कुकर्ण के अनिष्ट कईला के बाद विसनुजी विशेष केशवाला हो गईले अर्थात् उनका मुड़ी पर बाल उग गईल आ उनका दस बार जनम लेबे के पड़ल ।।७२।।

---

१. मार्कण्डेय मृकण्डु ऋषि के बेटा रहले। उनका पाँच बरिस के ही कम आयु मिलल रहे। सप्तर्षि लो के आशीर्वाद से उनकें आयु ब्रह्माजी के पाँच बरिस के आयु हो गईल।

मद्भक्तेन दधीचेन कृत्वा युद्धं जनार्दनः।
भग्नचक्रायुधः पूर्वं पराभवमुपागमत्।।७३।।

भावार्थ : पुरान समय में हमरा भक्त दधीचि के साथ युद्ध कईके विसनुजी के चक्र आ धनुहा के टूट गईला पर हार के सामना करे के पड़ल रहे ।।७३।।

कृताश्वमेधो दक्षोऽपि मद्भक्तांश्च गणेश्वरान्।
अवमत्य सभामध्ये मेषवक्त्रोऽभवत् पुरा।।७४।।

भावार्थ : अश्वमेध जज्ञ करेवाला दक्ष भी सभा के बीच में हमरा भक्त गणेश्वर सन के अपमान कईले जवना के कारन उनका भेड़ आला मुँह मिलल ।।७४।।

श्वेतस्य मम भक्तस्य दुरतिक्रमतेजसः।
औदासीन्येन कालोऽपि मया दग्धः पुराऽभवत्।।७५।।

भावार्थ : पुरान समय में अनतिक्रमणीय तेजवाला हमरा भक्त श्वेत के उदासीन भईला से हम काल के भी जला देहले रहनी ।।७५।।

एवमन्येऽपि बहवो मद्भक्तानामतिक्रमात्।
परिभूता हताश्चासन् भक्ता मे दुरतिक्रमाः।।७६।।

भावार्थ : एही तरह से दोसर बहुते लोग हमरा भक्तन के अतिक्रमण कईला के कारन हार गईल लो आ मारल गईल लो। अतः हमरा भक्त के कबो भी ना लांघे के चाही ।।७६।।

अविचारेण मद्भक्तो लङ्घितो दारुकस्त्वया।
एष त्वं रेणुकानेन जन्मवान् भव भूतले।।७७।।

भावार्थ : रे रेणुक ! ते बिना विचार कईलही हमरा भक्त दारुक के लंघले बाड़े एहीसे तोहके पृथिवी पर जनम लेबे के पड़ी ।।७७।।

इत्युक्तः परमेशेन भक्तमाहात्म्यशंसिना।
प्रार्थयामास देवेशं प्रणिपत्य स रेणुकः।।७८।।

भावार्थ : भक्तन के माहात्म्य बतलावेवाला परमेसर के द्वारा ए तरह से कहल गईल ऊ रेणुक गोड़ पर गिरके देवेश भगवान् शिव से प्रार्थना कईले ।।७८।।

मानुषीं योनिमासाद्य महादुःखविवर्धिनीम्।
जात्यायुर्भोगवैषम्यहेतुकर्मोपपादिनीम्।।७९।।

समस्तदेवकैङ्कर्यकार्पण्यप्रसवस्थलीम्।
महातापत्रयोपेतां वर्णाश्रमनियन्त्रिताम्।।
विहाय त्वत्पदाम्भोजसेवां किं वा वसाम्यहम्।।८०।।

यथा मे मानुषो भावो न भवेत् क्षितिमण्डले।
तथा प्रसादं देवेश विधेहि करुणानिधे।।८१।।

भावार्थ : हे देवेश ! महादुःख के बढ़ावेवाली, जनम, आयु आ भोग के विषमता के कारनभूत कर्म के करावेवाली, सगरी देवतालो के सेवकत्वरूपी गरीबी के जनमस्थली, दैहिक, दैविक आ भौतिक तीनु ताप से युक्त आ वर्णाश्रम धरम से नियंत्रित मनुष्य योनि के पा के रऊवा चरन कमल के सेवा के बिना हम ओईजा कईसे रह सकिले ? हे करुणानिधान ! पृथिवीमण्डल पर हमार मनुष्य भाव जवना तरह ना रहे अईसन किरिपा कर दी ॥७९-८१॥

इति सम्प्रार्थितो देवो रेणुकेन महेश्वरः।
मा भैषीर्मम भक्तानां कुतो भीतिरिहेष्यति।।८२।।

भावार्थ : रेणुक जब ए तरह से प्रार्थना कईले त महेश्वरजी कहनी - डेरा मत। हमरा भगत लो के ए जगत् में डर ना लागेला ॥८२॥

श्रीशैलस्योत्तरे भागे त्रिलिङ्गविषये शुभे।
कोल्लिपाक्यभिधानोऽस्ति कोऽपि ग्रामो महत्तरः।।८३।।

भावार्थ : श्रीशैल पहाड़ के उत्तर भाग में स्थित तैलङ्गाना देश में कोल्लिपाकी नामवाला कवनो बहुते बड़हन गाँव बाटे ॥८३॥

सोमेश्वराभिधानस्य तत्र वासवतो मम।
अस्पृशन् मानुषं भावं लिङ्गात्प्रादुर्भविष्यसि।।८४।।

भावार्थ : ओईजा सोमेश्वर नाम से रहेवाला अर्थात् हमरा लिङ्ग (सोमेश्वर महादेव) से तू मानुषभाव के बिना छुवलही उत्पन्न होखब अर्थात् मनुष्य के देह से तहार जनम ना होई ॥८४॥

मदीयलिङ्गसंभूतं मद्भक्तपरिपालकम्।
विस्मिता मानुषाः सर्वे त्वां भजन्तु मदाज्ञया।।८५।।

भावार्थ : सबलोग आश्चर्ययुक्त होके, हमरा आज्ञा से, हमरा शिवलिङ्ग से उत्पन्न, हमरा भगत लोग के परिपालक सरूप तहार सेवा करी लो ॥८५॥

मदद्वैतपरं शास्त्रं वेदवेदान्तसंमतम्।
स्थापयिष्यसि भूलोके सर्वेषां हितकारकम्।।८६।।

भावार्थ : तू पृथ्वीलोक प वेदवेदान्तसम्मत आ सबका खातिर हितकारक शिवाद्वैतशास्त्र (वीरशैव सिद्धान्त) के स्थापना करब ॥८६॥

मम प्रतापमतुलं मद्भक्तानां विशेषतः।
प्रकाशय महीभागे वेदमार्गानुसारतः।।८७।।

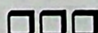
भावार्थ : हे रेणुक ! तू वेदमार्ग के अनुसरन करत पृथ्वीतल पर हमरा अुतल प्रताप के विशेष रूप से हमरा भगत लोग के बतलाव ॥८७॥

इत्युक्त्वा परमेश्वरः स भगवान् भद्रासनादुत्थितो
ब्रह्मोपेन्द्रमुखान् विसृज्य विबुधान् भ्रूसंज्ञया केवलम्।
पार्वत्या सहितो गणैरभिमतैः प्राप स्वमन्तःपुरं
क्षोणीभागमवातरत् पशुपतेराज्ञावशाद् रेणुकः।।८८।।

भावार्थ : अईसे कहिके ऊ भगवान् परमेसर अपना भद्रासन से ऊठ के खड़ा हो गईनी। केवल भौंह के इशारा से ब्रह्मा उपेन्द्र आदि देवता लोग के विदा करके अभिमत गण आ पारबतीजी के साथ अन्तःपुर में चल गईनी। पशुपति के आज्ञा से रेणुक भी पृथ्वीतल पर अवतार लेहले ॥८८॥

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ कैलासवर्णनं रेणुकावतरणकारणं च नाम तृतीयः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के कैलासवर्णन-रेणुकदारुकावतरण नामवाला तीसरका परिच्छेद समाप्त भईल ।।३।।



चतुर्थः परिच्छेदः (चौथा परिच्छेद)

अथाष्टभिः सूत्रैः शिवयोगिरेणुकगणेश्वरस्य स्वरूपं वर्णयति

अथ त्रिलिङ्गविषये कोल्लिपाक्यभिधे पुरे।
सोमेश्वरमहालिङ्गात् प्रदुरासीत् स रेणुकः।।१।।

रेणुक के अवतार आ ऊहाँ के सरूप के वर्णन

भावार्थ : एकरा बाद रेणुक तैलङ्गाना देश के कोल्लिपाकी नामक नगर में सोमेश्वर महादेव नामक महालिङ्ग से परगट भईनी ॥१॥

प्रादुर्भूतं तमालोक्य शिवलिङ्गात् त्रिलिङ्गजाः।
विस्मिताः प्राणिनः सर्वे बभूवुरतितेजसम्।।२।।

भावार्थ : तैलङ्गाना देश के सगरो प्राणी अत्यन्त तेजस्वी ऊहाँ के शिवलिंग से परगट होत देख आश्चर्य से भर गईले ॥२॥

भस्मोद्धूलितसर्वाङ्गं साररुद्राक्षभूषणम्।
लिङ्गधारणसंयुक्तं लिङ्गपूजापरायणम्।।
जटामुकुटसंयुक्तं त्रिपुण्ड्राङ्कितमस्तकम्।।३।।

भावार्थ : ऊ रेणुक के सगरी देह भसम से नहाईल रहे। रुद्राक्षमाला से सोहात जटामुकुट से संयुक्त उनके मस्तक त्रिपुण्ड्र से चिह्नित रहे ॥३॥

कटीतटीपटीभूतकन्थापटलबन्धुरम् ।
दधानं योगदण्डं च भस्माधारं कमण्डलुम्।।४।।

भावार्थ : ऊहाँ के कमर में कपड़ा के रूप में कन्था बन्हले, योगदण्ड के धारन कईले, भसम के पात्र आ कमण्डलु के लेहले रहनी ॥४॥

शिवाद्वैतपरिज्ञानपरमानन्दमोदितम् ।
निर्धूतसर्वसंसारवासनादोषपञ्जरम् ।।५।।

भावार्थ : शिवाद्वैत के परिपूर्ण ज्ञान से परगट परम आनन्द से प्रसन्न ऊ सगरी संसार आ सगरी वासनादोष रूपी पिंजरा के नष्ट कईले रहनी ॥५॥

शिवागमसुधासिन्धुसमुन्मेषसुधाकरम् ।
चित्तारविन्दसंगूढशिवपादाम्बुजद्वयम् ।।६।।

भावार्थ : ऊ शैवागमरूपी अमरित के समुन्दर के बढ़ावे खातिर चनरमा के नीयर रहनी आ अपना हृदयकमल में शिव के दुनु चरनकमल के छिपवले रहनी ॥६॥

यमादियोगतन्त्रज्ञं स्वतन्त्रं सर्वकर्मसु।
समस्तसिद्धसन्तानसमुदायशिखामणिम्।।७।।

भावार्थ : ऊ यम आदि योगसाधन के जानकार, सगरी काम के करे में स्वतन्त्र आ सगरी सिद्धपरम्परा के समूह के शिखामणि रहनी ॥७॥

वीरसिद्धान्तनिर्वाहकृतपट्टनिबन्धनम् ।
आलोकमात्रनिर्भिन्नसमस्तप्राणिपातकम्।।८।।

भावार्थ : ऊ रेणुकाचार्य वीरशैव सिद्धान्त के निर्वाह करे खातिर कटिबद्ध आ दर्शनमात्र से सगरी प्राणी लोग के पाप के दूर करेवाला रहनी ॥८॥

तमपृच्छन् जनाः सर्वे नमन्तः को भवानिति।
इति पृष्टो महायोगी जनैर्विस्मितमानसैः।।९।।

प्रत्युवाच शिवाद्वैतमहानन्दपरायणः।
पिनाकिनः पार्श्ववर्ती रेणुकाख्यगणेश्वरः।।१०।।

भावार्थ : सब लोग उनके प्रणाम करके ऊहाँ से पूछल लो :- रऊवा के हईं? आश्चर्य से युक्त चित्तवाला लोग के द्वारा पूछल गईल ऊ महाजोगी बोलले :- हम शिवाद्वैत महानन्द में लीन शंकर के पास रहेवाला रेणुक नाम के गणेश्वर हईं ॥९-१०॥

केनचित्कारणेनाहं शिवलिङ्गादिहाभवम्।
नाम्ना रेणुकसिद्धोऽहं सिद्धसन्ताननायकः।।११।।

भावार्थ : कवनो कारन से हम ई संसार में ए शिवलिंग से उत्पन्न भईल बानी। हमार नाम रेणुकसिद्ध हटे। हम सिद्धपरम्परा के नायक हईं ॥११॥

स्वच्छन्दचारी लोकेऽस्मिन् शिवसिद्धान्तपालकः।
खण्डयन् जैनचार्वाकबौद्धादीनां दुरागमान्।।१२।।

भावार्थ : हम ई लोक में स्वच्छन्द घूमेवाला जैन, चार्वाक आ बौद्ध आदि दुष्ट (नास्तिक) आगमन के खण्डन करत शिवसिद्धान्त के परिपालक हईं ॥१२॥

इत्युक्त्वा पश्यतां तेषां विषयस्थिरचक्षुषाम्।
उत्थाय व्योममार्गेण मलयाद्रिमुपागमत्।।१३।।

भावार्थ : एंगा कहके एकटक उनकरा के देखत लोग के सामनही ऊ रेणुक उड़के आकाश मार्ग से मलय पहाड़ पर चल गईनी ।।१३।।

नवचन्दनकान्तारकन्दलन्मन्दमारुतम् ।
अभङ्गुरभुजङ्गस्त्रीसंगीतरससंकुलम् ।।१४।।

भावार्थ : मलय पहाड़ के वर्णन— ऊ मलय पर्वत नया चन्दन के घना जंगल से भरल रहे। ओईमें धीमे-धीमे हवा बहत रहे। अत्यन्त सटल सर्पिणीसन (नागिनसन) के संगीत के रस से ऊ भरल रहे ।।१४।।

करिपोतकराकृष्टस्फुरदेलातिवासितम् ।
वराहदंष्ट्रिकाध्वस्तमुस्तासुरभिकन्दरम् ।।१५।।

भावार्थ : हाथी के बच्चा के सूँड़ के खीचल गईल इलायची से ऊ अत्यन्त महक से भरल रहे। सूवर सन के छोट-छोट दाँत से नष्ट कईल गईल मुस्ता के महक से ओकर कन्दरा भरल रहली सन ।।१५।।

पटीरदलपर्यङ्कप्रसुप्तव्याधदम्पतिम् ।
माधवीमल्लिकाजातीमञ्जरीरेणुरञ्जितम् ।।१६।।

भावार्थ : ऊहाँ व्याधदम्पती ऊजर केरा के पतई से बनल पलंग पर सुतल रहल सन। ऊ पहाड़ माधवी (वासन्ती), जूही आ चम्पा के पराग से रञ्जित रहे ।।१६।।

तत्र कुत्रचिदाभोगसर्वर्तुकुसुमद्रुमे।
अपश्यदाश्रमं दिव्यमगस्त्यस्य महामुनेः।।१७।।

भावार्थ : अगस्त्य आश्रम के आश्रम वर्णन— रेणुक ओईजा सगरी ऋतुसन के फूलवाला पेड़न से भरल महामुनि अगस्त्य के दिव्य आ बड़हन आश्रम के देखले ।।१७।।

मन्दारचन्दनप्रायैर्मण्डितं तरुमण्डलैः।
शाखाशिखरसंलीनतारकागणकोरकैः ।।१८।।

भावार्थ : ऊ आश्रम कल्पवृक्ष, चन्दन आदि के पेड़न से भरल रहे। ऊ पेड़न के चोटियन पर लागल कोढ़ी अईसन लागत रहली सन मान कि ऊहाँ तारा जुड़ल बाड़ी सन ।।१८।।

मुनिकन्याकरानीतकलशाम्बुविवर्धितैः।
आलवालजलास्वादमोदमानमृगीगणैः।।१९।।

भावार्थ : ऊ पेड़ मुनिलोग के कन्यासन के हाथ से लाईल गईल कलशाम्बु (कलमा के पानी) से बढ़ावल गईल रहे। मृगियन के समूह उनके थाला में भरल पानी के पीके प्रसन्न होत रहल सन ॥१९॥

हेमारविन्दनिष्यन्दमकरन्दसुगन्धिभिः।
मरालालापवाचालुवीचिमालामनोहरैः॥२०॥

भावार्थ : सोना के कमल से गिरेवाला पराग के महक से युक्त ऊ आश्रम हंसन के ध्वनितरंग से अत्यंत मनोहर लागत रहे ॥२०॥

इन्दीवरवरज्योतिरन्धीकृतहरिन्मुखैः ।
लोपामुद्रापदन्यासचरितार्थतटाङ्कितैः ॥२१॥

भावार्थ : ऊ आश्रम के दिशा नीलकमल के परकाश से मान अन्हरियाँ खानी अर्थात् नीला हो गईल रहनी सन। तालाब के किनारे लोपापमुद्रा[1] के गोड़ के चिन्हासी अंकित रहे ॥२१॥

हारनीहारकर्पूरहरहासामलोदकैः ।
नित्यनैमित्तिकस्नाननियमार्थैस्तपस्विनाम्॥२२॥

भावार्थ : ओ तालाब के पानी हार, बर्फ कपूर आ चाहे शिव के हंसी के नीयर रहे। ऊ तपस्वीलोग के नित्य, नैमित्तिक स्नान आ नियम के पालन करे के खातिर रहे अर्थात् तपस्वी लोग ओ पानी से नित्यकर्म करत रहे लो ॥२२॥

प्रकृष्टमणिसोपानैः परिवीतं सरोवरैः।
विमुक्तसत्त्ववैरस्यं ब्रह्मलोकमिवापरम्॥२३॥

भावार्थ : उत्तम मणिसन से बनल सीढ़ी से ऊ तालाब घिरल रहे। ऊ आश्रम प्राणी के वैरभाव से मुक्त दोसरका ब्रह्मलोक के नीयर रहे ॥२३॥

हूयमानाज्यसन्तानधूमगन्धिमहास्थलम्।
शुकसंसत्समारब्धश्रुतिशास्त्रोपबृंहणम्॥२४॥

भावार्थ : ऊहाँ के भूमि हवन कईल जात रहे घी के धुआँ के महासुगन्ध से महकत रहे। ऊहाँ के सुगा के समाज के द्वारा पढ़ल गईल वेद से ऊ आश्रम व्याप्त रहे ॥२४॥

---

१. लोपामुद्रा अगस्त्य ऋषि के मेहरारू रहली। लोपामुद्रा के षोडशी (= त्रिपुरसुन्दरी) के पूजा के विधि उनही के पिताजी से मिलल रहे। ए विधि के अयस्त्य ऋषि लोपामुद्रा से पवले रहनी।

तस्य मध्ये समासीनं मूले चन्दनभूरुहः।
सुकुमारदलच्छायादूरितादित्यतेजसः ॥२५॥

भावार्थ : अगस्त्य ऋषि के सुन्दरता के वर्णन— ऊ आश्रम के बीच में सुकुमार पत्ता के परछाई के द्वारा सूरूज के परकाश आ घाम के दूर करेवाला चन्दन के पेड़ के नीचे बईठल अगस्त्य ऋषि के रेणुकजी देखनी ॥२५॥

तडित्पिङ्गजटाभारैस्त्रिपुण्ड्राङ्कितमस्तकैः ।
भस्मोद्धूलितसर्वाङ्गैः स्फुरद्रुद्राक्षभूषणैः॥२६॥

नववल्कलवासोभिर्नानानियमधारिभिः ।
परिवीतं मुनिगणैः प्रमथैरिव शङ्करम्॥२७॥

भावार्थ : बिजुरी के नीयर पीयर जटावाला, त्रिपुण्ड से चिन्हित मस्तकवाला, सगरी अंग में भसम रमवले, रुद्राक्ष के गहना पहिनले, नया वल्कल वस्त्र के धारन कईले, अनेक नियम के पालन करेवाला मुनिलोग के समूह से ऊ अगस्त्य ऋषि घिरल रहनी। अईसन लागत रहे कि प्रमथगणसन से घिरल भगवान शंकर हईं ॥२६-२७॥

समुज्ज्वलजटाजालैस्तपःपादपपल्लवैः।
स्फुरत्सौदामिनीकल्पैर्ज्वालाजालैरिवानलम्॥२८॥

भावार्थ : तपस्यारूपी पेड़ के पल्लों के नीयर चमकत बिजुरी के नीयर ऊजर जटासन से ऊहाँ के अईसन लागत रहनी मान कि ज्वालाजाल से घिरल आग होखे ॥२८॥

विशुद्धभस्मकृतया त्रिपुण्ड्राङ्कितरेखया।
त्रिस्रोतसेव सम्बद्धशिलाभागं हिमाचलम्॥२९॥

भावार्थ : विशुद्ध भसम से बनल त्रिपुण्ड्र के तीनु रेखा से ऊ गंगा के तीन स्रोत से सम्बद्ध पत्थरवाला हिमालय के नीयर लागत रहनी ॥२९॥

भस्मालङ्कृतसर्वाङ्गं शशाङ्कमिव भूगतम्।
वसानं वल्कलं नव्यं बालातपसमप्रभम्॥३०॥

भावार्थ : ऊहाँ के सगरी देह भसम से अलंकृत रहे। लागत रहे कि चनरमा पृथिवी पर उतर आईल बाड़े। ऊ लईका सूरूज के किरन के नीयर चमकेवाला नया वल्कल वस्त्र पहिनले रहनी ॥३०॥

वडवाग्निशिखाजालसमालीढमिवार्णवम्।
सर्वासामपि विद्यानां समुदायनिकेतनम्॥३१॥

भावार्थ : वाडवाग्नि (समुन्दर में लागेवाला आग) के शिखासन से व्याप्त समुन्दर के नीयर लागत रहनी। ऊ अगस्त्य ऋषि सगरी विद्यासन के समुदाय के धरहरिया रहनी ॥३१॥

न्यक्कृतप्राकृताहन्तं निरूढशिवभावनम्।
तृणीकृतजगज्जालं सिद्धीनामुदयस्थलम्।।३२।।

भावार्थ : प्राकृत (सामान्य लोग में वर्त्तमान अथवा प्रकृति तत्त्व से उत्पन्न) अहङ्कार से रहित, शिवभावना में दृढ़ ऊ अगस्त्य ऋषि संसार के खरपात जईसन समझेवाला आ सिद्धिसन के जनम लेबेवाला स्थान रहनी ॥३२॥

मोहान्धकारतपनं मूलबोधमहीरुहम्।
ददर्श स महायोगी मुनिं कलशसंभवम्।।३३।।

भावार्थ : मोहरूपी अन्हार खातिर सूरूज के नीयर, बोधरूपी पेड़ के जड़सनरूप आ कुम्भ (घईला) से जनमल ओ अगस्त्य के महाजोगी रेणुक देखनी ॥३३॥

तमागतं महासिद्धं समीक्ष्य कलशोद्भवः।
गणेन्द्रं रेणुकाभिख्यं विवेद ज्ञानचक्षुषा।।३४।।

भावार्थ : कुम्भज (जेकर जनम घड़ा से भईल होखे अर्थात् अगस्त्य ऋषि) ऋषि ओ महासिद्ध के आईल देख के अपना दिव्यदृष्टि से ओ रेणुक नामक गणेश्वर के समझवनी ॥३४॥

तस्यानुभावं विज्ञाय सहसैव समुत्थितः।
लोपामुद्राकरानीतैरुदकैरतिपावनैः ।।
पादौ प्रक्षालयामास स तस्य शिवयोगिनः।।३५।।

भावार्थ : ऊहाँ के परभाव के जानके ऊ अगस्त्य ऋषि अचानके खड़ा हो गईनी आ लोपामुद्रा के हाथ से लाईल गईल अत्यन्त पवित्र जल से ओ शिवजोगी रेणुक के पांव पखरनी ॥३५॥

संपूज्य तं यथाशास्त्रं तन्नियोगपुरस्सरम्।
मुनिर्विनयसम्पन्नो निषसादासनान्तरे।।३६।।

भावार्थ : विनयसम्पन्न अगस्त्य मुनि ऊहाँ के शास्त्रविधि के अनुसार पूजा कईके ऊहाँ के आज्ञा से दोसरका आसन पर बईठ गईनी ॥३६॥

रेणुकागस्त्यसंवादः

समासीनं मुनिवरं सर्वतेजस्विनां विभुम्।
उवाच शान्तया वाचा रेवणः सिद्धशेखरः।।३७।।

भावार्थ : रेणुक-अगस्त्य संवाद— सगरी तेजस्वीलोग में श्रेष्ठ ऋषिवर के बईठा के सिद्धेश्वर रेणुक शान्त वचन बोलनी ।।३७।।

निर्विघ्नं वर्तसे किं नु नित्या ते नियमक्रिया।
अथ वाऽगस्त्य तेजस्विन् कुतः स्युस्तेऽन्तरायकाः।।३८।।

भावार्थ : हे तेजस्विन् अगस्त्य! का रऊवा बिना बिघिन के ही रहत बानी? का राऊर नित्य क्रिया नियम के अनुसार बिना बिघिन के चल रहल बा? अथवा रऊवा खातिर बिघिन कहाँ से आ सकता? ।।३८।।

विन्ध्यो निरुद्धो भवता विश्वोल्लङ्घनविभ्रमः।
नहुषो रोषलेशात् ते सद्यः सर्पत्वमागतः।।३९।।

भावार्थ : रऊवा विश्व के लांघे खातिर साहस करेवाला विन्ध्याचल[1] के भी रोक देहनी। रऊवा तनी-सा खिसियाईला से नहुष[2] साँप बन गईले ।।३९।।

आचान्ते भवता पूर्वं पङ्कशेषाः पयोधयः।
जीर्णस्ते जाठरे वह्नौ दृप्तो वातापिदानवः।।४०।।

---

१. देवतालोग के द्वारा सुमेरु आ हिमालय के आदर देखके विन्ध्याचल पहाड़ अपना के अपमानित समझलस। एकर बदला लेबे खातिर ऊ एतना बड़हन हो गईल कि सुरूज के घुमले रुक गईल। देवतालोग अगस्त्य ऋषि से प्रार्थना कईल लो। अगस्त्य ऋषि विन्ध्याचल पहाड़ के लगे गईनी। जब विन्ध्याचल ऊहाँ के साष्टांग परनाम कईलस त अगस्त्य ऋषि कहनी कि- जब तक हम लौट के वापस ना आई तबले एहिंगा तू रहिह। ई कहके अगस्त्य ऋषि दक्षिन दिशा में चल गईनी आ लौट के आज ले ना अईनी। अइसे आज भी विन्ध्याचल पहाड़ साष्टांग मुद्रा में ही बाटे।

२. राजा नहुष सौ अश्वमेध जज्ञ कईके इन्द्र के पद पवले। उनकरा मन में इन्द्राणी से मिले के इच्छा भईल। शची नहुष के सन्देश सुनला के बाद कहली कि यदि नहुष ऋषि लोग के द्वारा पालकी ढोवाके ओईमें ही बईठ के आवस तब हम ऊनकर स्वागत करेम। कामान्ध नहुष अत्यन्त बेचैन होके सप्तर्षि लोग के कहले - ''सर्प-सर्प'' अर्थात् जल्दी चलसन जल्दी चलसन। सर्प शब्द सुनके अगस्त्य ऋषि खिसिया के कहनी कि सर्प सर्प कहतार जा तू सर्पे हो जा आ नहुष साँप बन गईले।

भावार्थ : पुरान समय में रऊवा समुन्दर सन[1] के भी पी लेहले रहनी आ ओईमें खाली पांक बच गईल रहे। भयंकर मदमत्त वातापी[2] राक्षस के रऊवे अपना जठराग्नि (पेट के आग) में जरा देहनी ।।४०।।

एवंविधानां चित्राणां सर्वलोकातिशायिनाम्।
कृत्यानां तु भवान् कर्ता कस्तेऽगस्त्य समप्रभः।।४१।।

भावार्थ : रऊवा अईसन-अईसन लोकोत्तर के काम करेवाला बानी। हे अगस्त्य ! रऊवा नीयर के तेजस्वी बाटे? अर्थात् केहू नईखे ।।४१।।

शिवाद्वैतपरानन्दप्रकाशनपरायणम् ।
भवन्तमेकं शंसन्ति प्रकृत्या सङ्गवर्जितम् ।।४२।।

भावार्थ : लोग रऊवा के खाली शिवाद्वैत परानन्द के प्रकाशन में संलग्न आ स्वभावतः आसक्तिरहित के सरूप में बड़ाई करेला ।।४२।।

पुरा हैमवतीसूनुरवदत् ते षडाननः।
शिवधर्मोत्तरं नाम शास्त्रमीश्वरभाषितम्।।४३।।

भावार्थ : पुरान समय में पारबतीजी के बेटा षडानन कार्तिकेयजी रऊवा के शिव के द्वारा कहल शिवधर्मोत्तर नामक शास्त्र के उपदेश कईले रहनी ।।४३।।

भक्तिः शैवी महाघोरसंसारभयहारिणी।
त्वया राजन्वती लोके जाताऽगस्त्य महामुने।।४४।।

---

१. एक बार समुन्दर टिटिहरी नामके एगो पक्षी के बहा ले गईल। टिटिहरी दम्पत्ती (मरदे-मेहरारू) दुःखी होके समुन्दर के सारा पानी खाली क देबे खातिर एक चोंच पानी समुन्दर से बाहर लियाव सन आ एक चोंच माटी समुन्दर में डाल सन। अगस्त्य ऋषि के ओकनी पर दया आ गईल। ऊहाँ के खाली अपना अजुरी में समुन्दर के पानी पी के अण्डा के वापस करववनी।

२. आतापी वातापी नामक दुगो राक्षस माया से अपना के खायेवाला चीज बना लेत रहल सन आ जब ऋषि लोग ओकरा के खा लेव त दुनु पेट फाड़ के बाहर आ जा सन। जवना से ऋषिलोग मर जाव। अगस्त्य ऋषि ए रहस्य के जान गईनी। अगस्त्य ऋषि खायेवाला चीज के रूप में ओकनी के खईनी आ अपना जठराग्नि (पेट के आग) से ओकनी के पेटे में जरा देहनी।

भावार्थ : हे महामुनि अगस्त्य ! ई लोक में महाघोर संसार के डर के अपहरन करेवाला शिव के भक्ति रऊवा कारन ही राजवन्ती (धर्मात्मा राजालोग के द्वारा शिरोधृत अथवा सम्यक् प्रकाशमान) बाड़ी ।।४४।।

अगस्त्यमुनिवचनम् (अगस्त्यमुनि के वचन)

इति तस्य वचः श्रुत्वा सिद्धस्य मुनिपुङ्गवः ।
गम्भीरगुणया वाचा बभाषे भक्तिपूर्वकम् ।।४५।।

भावार्थ : अगस्त्य वचन— मुनिश्रेष्ठ अगस्त्य ओ रेणुकाचार्य के ई बात सुनके भक्ति के साथे गम्भीर बानी में बोलनी ।।४५।।

अहमेव मुनीन्द्राणां लालनीयोऽस्मि सर्वदा ।
भवदागमसम्पत्तिर्मां विना कस्य संभवेत् ।।४६।।

भावार्थ : (हे आचार्यवर !) रऊवा आईल रूप सम्पत्ति हमरा अलावा अऊरी केकरा लगे सम्भव बाटे । ए कारन हम हमेशा मुनिलोग के बीच आदर के पात्र बनल रहेनी ।।४६।।

स्थिरमद्य शिवज्ञानं स्थिरा मे तापसक्रिया ।
भवद्दर्शनपुण्येन स्थिरा मे मुनिराजता ।।४७।।

भावार्थ : रऊवा दर्शन से जनमल पुण्य से आज हमार शिवज्ञान स्थिर हो गईल बाटे । हमार तपस्या भी स्थिर बाटे आ मुनिलोग के बीच हमार राज्यतुल्यता भी स्थिर हो गईल बाटे अर्थात् हम हमेशा खातिर ऋषिश्रेष्ठ हो गईल बानी ।।४७।।

संसारसर्पदष्टानां मूर्च्छितानां शरीरिणाम् ।
कटाक्षस्तव कल्याणं समुज्जीवनभेषजम् ।।४८।।

भावार्थ : (हे आचार्यप्रवर!) संसाररूपी साँप के डंसला से मूर्च्छा जेकरा मिल गईल बा ओ मनुष्य लोग के खातिर राउर किरिपा दृष्टि कल्याण करेवाला आ संजीवनी बूटी बिया ।।४८।।

समस्तलोकसन्दाहतापत्रयमहानलः ।
त्वत्पदाम्बुकणास्वादादुपशाम्यति देहिनाम् ।।४९।।

भावार्थ : सगरी लोक के जरावेवाला आ जीव लोग के खातिर तीनु ताप रूपी महा आग रऊवा चरनोदक के एक बूंद के पीयला से शान्त हो जाला ।।४९।।

रेणुकं त्वां विजानामि गणनाथं शिवप्रियम्।
अवतीर्णमिमां भूमिं मदनुग्रहकाङ्क्षया।।५०।।

भावार्थ : हम रऊवा के गण के स्वामी शिव के प्रिय रेणुक के रूप में जानतानी। रऊवा हमरा ऊपर किरिपा करे के इच्छा से ए धरती पर अवतार लिहले बानी ।।५०।।

भवादृशानां सिद्धानां प्रबोधध्वस्तजन्मनाम्।
प्रवृत्तिरीदृशी लोके परानुग्रहकारिणी।।५१।।

भावार्थ : शिव बोध के द्वारा नष्ट जनमवाला रऊवा जईसन सिद्धलोग के आमलोग के विषय में प्रवृत्ति ही एह प्रकार के परानुग्रहकारिणी होली ।।५१।।

त्वन्मुखाच्छ्रोतुमिच्छामि सिद्धान्तं श्रुतिसंमतम्।
सर्वज्ञ वद मे साक्षाच्छैवं सर्वार्थसाधकम्।।५२।।
सद्यः सिद्धिकरं पुंसां सर्वयोगीन्द्रसेवितम्।
दुराचारैरनाघ्रातं स्वीकृतं वेदवेदिभिः।।
शिवात्मैक्यमहाबोधसम्प्रदायप्रवर्तकम्।।५३।।

भावार्थ : हम रऊवा मुँह से वेदसम्मत शिवाद्वैत सिद्धान्त के सुने के चाहत बानी। हे सब कुछ जानेवाला ! रऊवा हमरा के साक्षात् सर्वार्थ के साधक, मनुष्य के खातिर तत्काले सिद्धि देबेवाला, सगरी जोगीलोग के द्वारा सेवा करेवाला, दुराचारियों (बौद्ध, जैन आदि) से अस्पृष्ट, वेददेवताओं के द्वारा स्वीकार कईल गईल आ शिव-जीवैक्य महाज्ञानवाला सम्प्रदाय के प्रवर्तक शिवाद्वैत सिद्धान्त के बतलाई ।।५२-५३।।

उक्त्वा भवान् सकललोकमहोपकारं
सिद्धान्तसंग्रहमनादृतबाह्यतन्त्रम् ।
सद्यः कृतार्थयितुमर्हति दिव्ययोगिन्
नानागमश्रवणवर्तितसंशयं माम्।।५४।।

भावार्थ : हे दिव्ययोगिन् ! रऊवा सगरी लोक के महान् उपकार करेवाला वेद से बाहर तन्त्र (जैनं, बौद्ध, चार्वाक आदि) के अनादर करेवाला सिद्धान्त के संग्रह के

१. कामिक से वातुल पर्यन्त सगरी आगम संशय उत्पन्न करेवाला बाडन सन।

बतला के अनेक प्रकार के आगमसन के सुनला के कारन संशयग्रस्त१ हमरा के जल्दी से धन्य करी ।।५४।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ श्रीरेणुकागस्त्यसम्भाषणप्रसङ्गोनाम चतुर्थः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के श्रीरेणुकागस्त्यसम्भाषणप्रसङ्ग, नामवाला चऊथा परिच्छेद समाप्त भईल ।।४।।

□□□

पञ्चम: परिच्छेद: (पाँचवाँ परिच्छेद)

श्रीरेणुकाचार्य द्वारा अगस्त्य ऋषि के तत्त्वोपदेश

अथागस्त्यवच: श्रुत्वा रेणुको गणनायक:।
ध्यात्वा क्षणं महादेवं साम्बमाह समाहित:।।१।।

भावार्थ : रेणुकाचार्य द्वारा अगस्त्य ऋषि के तत्त्व उपदेश— एकरा बाद गणाधिपति रेणुकाचार्य अगस्त्य ऋषि के वचन सुनके शान्तचित्त होके माता पारबतीसहित महादेवजी के एक क्षन ध्यान कईके बोलनी ॥१॥

अगस्त्य मुनिशार्दूल समस्तागमपारग।
शिवज्ञानकरं वक्ष्ये सिद्धान्तं शृणु सादरम्।।२।।

भावार्थ : हे सगरी आगम के पार जायेवाला मुनिश्रेष्ठ अगस्त्यजी ! हम रऊवा के शिवज्ञान के देबेवाला सिद्धान्त के बतलाएम। ओहके आदर के साथे सुनी ॥२॥

अगस्त्य खलु सिद्धान्ता विख्याता रुचिभेदत:।
भिन्नाचारसमायुक्ता भिन्नार्थप्रतिपादका:।।३।।

भावार्थ : हे अगस्त्य ! रुचि के भेद के अनुसार भिन्न आचारवाला आ भिन्न विषयन के प्रतिपादित करेवाला (अनेक) सिद्धान्त (संसार में) विख्यात बाड़न ॥३॥

सांख्यं योग: पाञ्चरात्रं वेदा: पाशुपतं तथा।
एतानि मानभूतानि नोपहन्यानि युक्तिभि:।।४।।

भावार्थ : सांख्य, योग, पांचरात्र, वेद और पाशुपत ई सब प्रमाणिक दर्शन हऊवन। तर्क के द्वारा एकनी के खण्डन ना करे के चाही ॥४॥

वेद: प्रधानं सर्वेषां सांख्यादीनां महामुने।
वेदानुसरणादेषां प्रामाण्यमिति निश्चितम्।।५।।

भावार्थ : हे महामुनि ! वेद, सांख्य आदि सगरी शास्त्रन में प्रधान बाटे। वेद के अनुसरण करे के कारन ई सांख्य आदि के प्रामाण्य निश्चित कईल गईल बाटे ॥५॥

पाञ्चरात्रस्य सांख्यस्य योगस्य च तथा मुने।
वेदैकदेशवर्तित्वं शैवं वेदमयं मतम्।।६।।

भावार्थ : हे मुनिजी ! पाञ्चरात्र, सांख्य आ जोग ई वेद के एक भाग के ही मानेले अतः ऊ अंशतः वैदिक आ आधावैदिक बाड़न किन्तु शैवसिद्धान्त पूर्णतया वेदमय अर्थात् पूरा वैदिक बाटे ।।६।।

वेदैकदेशवर्तिभ्यः सांख्यादिभ्यो महामुने।
सर्ववेदानुसारित्वाच्छैवतन्त्रं विशिष्यते।।७।।

भावार्थ : हे महामुने ! वेद के एगो भाग के मानेवाला सांख्य आदि के अपेक्षा सगरी वेद के अनुसरन करे वाला होखे के कारन शैवतन्त्र अर्थात् शैवशास्त्र विशिष्ट बाटे ।।७।।

शैवतन्त्रमिति प्रोक्तं सिद्धान्ताख्यं शिवोदितम्।
सर्ववेदार्थरूपत्वात् प्रामाण्यं वेदवत् सदा।।८।।

भावार्थ : शिव के द्वारा उपदेश कईल गईल सिद्धान्त नामक तन्त्र ही शैवतन्त्र कहल गईल बाटे । सगरी वेदसन के तात्पर्यरूप भईला के कारन एकर प्रामाण्य हमेशा वेदे जईसन बाटे ।।८।।

आगमा बहुधा प्रोक्ताः शिवेन परमात्मना।
शैवं पाशुपतं सोमं लाकुलं चेति भेदतः।।९।।

भावार्थ : परमातमा शिव शैव, पाशुपत, सोम, लाकुल भेद से अनेक तरह के आगम के उपदेश कईले बानी ।।९।।

तेषु शैवं चतुर्भेदं तन्त्रं सर्वविनिश्चितम्।
वामं च दक्षिणं चैव मिश्रं सिद्धान्तसंज्ञकम्।।१०।।

भावार्थ : ओईमें से शैवतन्त्र वाम, दक्षिन, मिश्र आ सिद्धान्त नाम से चार प्रकार के बाटे अईसन सबे केहू के निश्चय बाटे ।।१०।।

शक्तिप्रधानं वामाख्यं दक्षिणं भैरवात्मकम्।
सप्तमातृपरं मिश्रं सिद्धान्तं वेदसंमतम्।।११।।

भावार्थ : वाम नामक तन्त्र शक्ति के प्रधानता देता । दक्षिन तन्त्र भैरवप्रधान बाटे । मिश्र तन्त्र सब केहू के निश्चय बाटे ।।११।।

वेदधर्माभिधायित्वात् सिद्धान्ताख्यः शिवागमः।
वेदबाह्यविरोधित्वाद् वेदसंमत उच्यते।।१२।।

भावार्थ : सिद्धान्त नामक शिवागम वेद में कहल धरम के प्रतिपादक आ वेदबाह्य तन्त्र के विरोधी भईला के कारन वेदसम्मत कहल गईल बाटे ।।१२।।

वेदसिद्धान्तयोरैक्यमेकार्थप्रतिपादनात् ।
प्रामाण्यं सदृशं ज्ञेयं पण्डितैरेतयोः सदा।।१३।।

भावार्थ : एक अर्थ अर्थात् एक ही लेखा विषय के प्रतिपादन करे के कारन पण्डित लोग के वेद आ शैवसिद्धान्त ई दुनु के प्रामाण्य एके लेखा समझे के चाही ॥१३॥

सिद्धान्ताख्ये महातन्त्रे कामिकाद्ये शिवोदिते।
निर्दिष्टमुत्तरे भागे वीरशैवमतं परम्।।१४।।

भावार्थ : शिव के द्वारा उपदेश कईल गईल कामिक से लेकर वातुल तक के सिद्धान्त नामक महातन्त्र के उत्तर भाग में उत्कृष्ट वीरशैव मत के प्रतिपादन कईल गईल बाटे (आ पूर्वभाग शैवमत के प्रतिपादक बाटे) ॥१४॥

विद्यायां शिवरूपायां विशेषाद् रमणं यतः।
तस्मादेते महाभागा वीरशैवा इति स्मृताः।।१५।।

भावार्थ : चूँकि शिवरूपा विद्या में विशेष रमन होला एही से (वि=विशेष, र=रमण अर्थात् विशेष रमन करे वाला) महाभागशाली लोग वीरशैव कहल जाला ॥१५॥

वीशब्देनोच्यते विद्या शिवजीवैक्यबोधिका।
तस्यां रमन्ते ये शैवा वीरशैवास्तु ते मताः।।१६।।

भावार्थ : (आ चाहे) वी शब्द से शिवजीव के ऐक्यरूपा विद्या कहल जाले। जवन शैव ओईमें रमन करेले ऊ वीरशैव मानल गईल बाड़न ॥१६॥

विद्यायां रमते यस्मान्मायां हेयां श्ववद्रहेत्।
अनेनैव निरुक्तेन वीरमाहेश्वरः स्मृतः।।१७।।

भावार्थ : चूँकि विद्या में रमन करेला आ माया के कुकुर नीयर तियाग करेला ए निरुक्ति से (ऊ वीरशैव) वीर माहेश्वर[1] कहल जाला ॥१७॥

वेदान्तजन्यं यज्ज्ञानं विद्येति परिकीर्त्यते।
विद्यायां रमते तस्यां वीर इत्यभिधीयते।।१८।।

---

१. वी=विद्या, र=रमण, मा=माया, हे=त्या ('ओहाक्' त्यागे), श्व=कुकुर, र=तियाग दिहल।

भावार्थ : (आ चाहे) जवन ज्ञान वेदान्त से परगट होला ऊ विद्या कहल जाला। ओ विद्या में जवन साधक रमन करेला ऊ वीर कहल जाला ॥१८॥

शैवैर्माहेश्वरैश्चैव कार्यमन्तर्बहिःक्रमात्।
शिवो महेश्वरश्चेति नात्यन्तमिह भिद्यते।।१९।।

भावार्थ : शैव और माहेश्वर दुनु के द्वारा लिंगार्चन क्रमशः (हिया के) अन्दर आ बाहर करे के चाही। जवन प्रकार से शिव आ माहेश्वर में आत्यन्तिक भेद नईखे ओही प्रकार से शैवन आ माहेश्वरन में भी (एकान्तिक) भेद नईखे ॥१९॥

यथा तथा न भिद्यन्ते शैवा माहेश्वरा अपि।
शिवाश्रितेषु ते शैवा ज्ञानयज्ञरता नराः।।२०।।

भावार्थ : अईसे आ चाहे ओईसे आ माहेश्वर में भेद भी ना लऊकेला काहे से कि ऊ शिवाश्रित ज्ञान के जज्ञ में हमेशा लागल रहे ल सन ॥२०॥

माहेश्वराः समाख्याताः कर्मयज्ञरता भुवि।
तस्मादाभ्यन्तरे कुर्युः शैवा माहेश्वरा बहिः।।२१।।

भावार्थ : शिवाश्रित जे बाटे ओलोग में जे ज्ञानजज्ञ में लागल रहेला ओकरा के शैव कहल जाला। जे पृथ्वी पर कर्मजज्ञ में लागल रहेला ऊ माहेश्वर कहल जाले। एही से शैव लोग के आभ्यन्तर अर्थात् ज्ञानजज्ञ करे के चाही आ माहेश्वर साधक के बाह्य अर्थात् कर्मजज्ञ करे के चाही[१] ॥२१॥

वीरशैवाः षड्भेदाः

वीरशैवास्तु षड्भेदाः स्थलधर्मविभेदतः।
भक्तादिव्यवहारेण प्रोच्यन्ते शास्त्रपारगैः।।२२।।

भावार्थ : वीरशैव-भेद-निरूपण - षट्स्थल आ ओकरा आचार के भेद के कारन भक्त (माहेश्वर) अदि के व्यवहार से शास्त्र के जानकार वीरशैव के छः गो भेद बतलवले बाड़न ॥२२॥

शास्त्रं तु वीरशैवानां षड्विधं स्थलभेदतः।
धर्मभेदसमायोगाद् अधिकारिविभेदतः।।२३।।

---

१. जवना प्रकार से पक्षी आकाश में एगो पांख से उड़ नईखे सकत ओही प्रकार से शिवत्वलाभ खाली ज्ञान आ चाहे खाली क्रिया से नइखे हो सकत। अज्ञानी पुरुष आन्हर के नीयर आ क्रियारहित पुरुष लंगड़ के जईसन होला। संसार के आग में दुनु जल जाल सन।

भावार्थ : स्थल भेद आ धरम भेद सहित अधिकारी[1] के भेद से वीरशैव लोग के शास्त्र छह प्रकार के बाटे ॥२३॥

आदौ भक्तस्थलं प्रोक्तं ततो माहेश्वरस्थलम्।
प्रसादिस्थलमन्यत्तु प्राणलिङ्गिस्थलं ततः।।२४।।
शरणस्थलमाख्यातं षष्ठमैक्यस्थलं मतम्।

भावार्थ : पहिला भक्तस्थल ओकरा बाद माहेश्वर स्थल फेर प्रसादिस्थल ओकरा बाद प्राणिलिङ्गस्थल, शरणस्थल आ छठवाँ ऐक्यस्थल मानल गईल बाटे ॥२४॥

अंगस्थलान्तर्गत

भक्तस्थलम्

भक्तस्थलं प्रवक्ष्यामि प्रथमं कलशोद्भव।
तदवान्तरभेदांश्च समाहितमना: शृणु।।२५।।

भावार्थ : भक्तस्थल के वर्णन - हे कुम्भज ! (घड़ा से उत्पन्न अगस्त्य मुनि) पहिले भक्तस्थल आ ओकरा भीतरी के भेद के बताएम। चित के स्थिर कईके सुनी ॥२५॥

शैवी भक्तिः समुत्पन्ना यस्यासौ भक्त उच्यते।
तस्यानुष्ठेयधर्माणामुक्तिर्भक्तस्थलं मतम्।।२६।।

भावार्थ : जेकरा अन्दर शिव के प्रति भक्ति परगट होला ऊ भक्त कहल जाला। ओकर अनुष्ठेय धरमन के प्रतिपादित करेवाला स्थल भक्तस्थल मानल गईल बाटे ॥२६॥

अवान्तरस्थलान्यत्र प्राहुः पञ्चदशोत्तमाः।
पिण्डता पिण्डविज्ञानं संसारगुणहेयता।।२७।।

दीक्षा लिङ्गधृतिश्चैव विभूतेरपि धारणम्।
रुद्राक्षधारणं पश्चात् पञ्चाक्षरजपस्तथा।।२८।।

भक्तमार्गक्रिया चैव गुरोर्लिङ्गस्य चार्चनम्।
जङ्गमस्य तथा ह्येषां प्रसादस्वीकृतिस्तथा।।२९।।

---

१. प्रत्येक शास्त्र के अनुबन्धचतुष्टय होला। ई चार गो अधिकारी, विषय, सम्बन्ध आ परयोजन होला। एईमें मोक्ष के इच्छा रखे वाला (मुमुक्षु) अधिकारी, एक सौ एक गो स्थल (विषय) के ज्ञान विषय, प्रकाश्य प्रकाशक भाव सम्बन्ध आ शिवैक्यलाभ परयोजन बाटे।

अत्र दानत्रयं प्रोक्तं सोपाधि निरुपाधिकम्।
सहजं चेति निर्दिष्टं समस्तागमपारगैः।।३०।।

एतानि शिवभक्तस्य कर्तव्यानि प्रयत्नतः।

भावार्थ : विद्वान् लोग ई भक्तस्थल के पन्द्रह गो अवान्तर स्थल (भेद) बतलवले बाटे लो। ऊ हऊवन - (१) पिण्ड स्थल, (२) पिण्डज्ञान स्थल, (३) संसारहेय स्थल, (४) दीक्षाप्राप्तरूप गुरुकारुण्य स्थल, (५) लिङ्गधारण स्थल, (६) विभूतिधारण स्थल, (७) रुद्राक्षधारण स्थल, (८) पञ्चाक्षरजप स्थल, (९) भक्तमार्गक्रिया स्थल, (१०) उभयस्थल अर्थात् गुरु आ शिवलिंग के पूजा रूप उभयस्थल,[१] (११) त्रिविध सम्पत्ति के स्थल, (१२) चतुर्विधसाराय स्थल (एकर प्रसाद स्वीकृति) तीन प्रकार के दान कहल गईल बाटे। ऊ हऊवन (१३) सोपाधिदान स्थल, (१४) निरुपाधिक स्थल आ (१५) सहजदान स्थल सगरी आगमिक विद्वानन द्वारा निर्देश कईल गईल बाटे। शिव भक्त के चाही कि ऊ प्रयत्नपूर्वक एकनी के अभ्यास करे।।२७-३१।।

पिण्डस्थलम् – (१)

बहुजन्मकृतैः पुण्यैः प्रक्षीणे पापपञ्जरे।।३१।।
शुद्धान्तःकरणो देही पिण्डशब्देन गीयते ।

भावार्थ : पिण्डस्थल वर्णन - अनेक जनम में मिलल बहुते पून से जब पापपञ्जर के नाश हो जाला तब शुद्ध अन्तःकरण से संलग्न जीव पिण्ड कहल जाला।।३१।।

शिवशक्तिसमुत्पन्ने प्रपञ्चेऽस्मिन् विशिष्यते।।३२।।
पुण्याधिकः क्षीणपापः शुद्धात्मा पिण्डनामकः।

भावार्थ : शिव आ शक्ति से जनमल ई परपञ्च (संसार) में पापरहित आ अधिक पुण्य वाला पिण्ड नामक शुद्ध आत्मा सगरी से विलक्षन होला।।३२-३३।।

एक एव शिवः साक्षाच्चिदानन्दमयो विभुः।।३३।।

निर्विकल्पो निराकारो निर्गुणो निष्प्रपञ्चकः।
अनाद्यविद्यासम्बन्धात्तदंशो जीवनामकः।।३४।।

देवतिर्यङ्मनुष्यादिजातिभेदे व्यवस्थितः।
मायी महेश्वरस्तेषां प्रेरको हृदि संस्थितः।।३५।।

---

१. जवना प्रकार से एगो गमन क्रिया दुगो गोड़ से, एगो दर्शन क्रिया दुगो आँख से होला ओही प्रकार एगो आत्मलाभ गुरोपदेश आ स्वानुभाव दुनु के द्वारा ही सम्पादित होला।

भावार्थ : शिव एके गो बाड़न। ऊ साक्षात् चित्, आनन्दमय, व्यापक, निर्विकल्पक, निराकार, निर्गुन आ परपञ्च से रहित बाड़न। अनादि अविद्या के सम्बन्ध के कारन जीव नामवाला उनकर वंश देव, तिर्यक्, मनुष्य आदि जातिभेद के रूप में स्थित बाड़न। ओकनी (जीवसन) के प्रेरक महेश्वर अर्थात् मायाशाली ईश्वर ओकनी के हिया में समाईल बानी ॥३४-३५॥

चन्द्रकान्ते यथा तोयं सूर्यकान्ते यथानलः।
बीजे यथाङ्कुरः सिद्धस्तथात्मनि शिवः स्थितः।।३६।।

भावार्थ : जवना तरह से चन्द्रकान्त मणि में पानी, सूर्यकान्त मणि में अग्नि बीज में अंकुर पहिले से ही रहेला ओहिंगा आतमा में शिवजी स्थित रहेनी ॥३६॥

आत्मत्वमीश्वरत्वं च ब्रह्मण्येकत्र कल्पितम्।
बिम्बत्वं प्रतिबिम्बत्वं यथा पूषणि कल्पितम्।।३७।।

भावार्थ : जवना तरह से एक ही पूषा अर्थात् सुरूज में बिम्बत्व आ प्रतिबिम्बत्व दुनु स्थित रहेला ओहिंगा एक ही ब्रह्म में आत्मत्व आ ईश्वरत्व दुनु के कल्पना कईल बाटे (माया में प्रतिबिम्बित ब्रह्म ईश्वर आ अविद्या में प्रतिबिम्बित ब्रह्म जीव कहल जाले) ॥३७॥

गुणत्रयविभेदेन परतत्त्वे चिदात्मनि।
भोक्तृत्वं चैव भोज्यत्वं प्रेरकत्वं च कल्पितम्।।३८।।

भावार्थ : (सत्त्व, रजस् आ तमस् ए) तीनु गुणन के भेद से चित्सरूप परतत्त्व में भोक्तृत्व, भोज्यत्व से ओ ब्रह्म में तीन प्रकार के प्रदार्थ उत्पन्न होले ॥३८॥

गुणत्रयात्मिका शक्तिर्ब्रह्मनिष्ठा सनातनी।
तद्वैषम्यात् समुत्पन्ना तस्मिन् वस्तुत्रयाभिधा।।३९।।

भावार्थ : ब्रह्म में रहेवाली त्रिगुणात्मिका शक्ति सनातनी अर्थात् नित्य बाड़ी। ओ गुणन के वैषम्य से ओ ब्रह्म में तीन प्रकार के पदार्थ उत्पन्न होले ॥३९॥

किञ्चित्सत्त्वरजोरूपं भोक्तृसंज्ञकमुच्यते।
अत्यन्ततामसोपाधिर्भोज्यमित्यभिधीयते।।
परतत्त्वमयोपाधिर्ब्रह्मचैतन्यमीश्वरः ।।४०।।
भोक्ता भोज्यं प्रेरयिता वस्तुत्रयमिदं स्मृतम्।
अखण्डे ब्रह्मचैतन्ये कल्पितं गुणभेदतः।।४१।।

भावार्थ : कुछु सत्वगुन आ कुछु रजोगुन के मिश्रन से उपहित चैतन्य भोक्ता कहल जाला। अत्यन्त तमस् उपाधिवाला ब्रह्म भोज्य कहल जाला। परतत्त्वरूप सत्त्व के उपाधि से युक्त चैतन्य ईश्वर प्रेरक हऊवन। ए प्रकार से भोक्ता, भोज्य आ प्रेरक ई तीन गो पदार्थ मानल गईल बाड़न। (ई पदारथ) अखण्ड ब्रह्म चैतन्य में गुणभेद से कल्पना कईल गईल बाटे ॥४०-४१॥

अत्र प्रेरयिता शम्भुः शुद्धोपाधिर्महेश्वरः।
संमिश्रोपाधयः सर्वे भोक्तारः पशवः स्मृताः।।४२।।

भोज्यमव्यक्तमित्युक्तं शुद्धतामसरूपकम्।

भावार्थ : ई तीनुन में शुद्ध सत्त्वोपाधिवाला महेश्वर अर्थात् शम्भु प्रेरयिता है। कुछु सत्त्व आ तमोगुन से मिश्रित रजत् उपाधिवाले सगरी भोक्ता पशु मानल गईल बाड़न। शुद्ध तामसरूप अव्यक्त अर्थात् गूढ़ चैतन्य भोज्य कहल गईल बाटे ॥४२॥

सर्वज्ञः प्रेरकः शम्भुः किञ्चिज्ज्ञो जीव उच्यते।
अत्यन्तगूढचैतन्यं जडमव्यक्तमुच्यते।।४३।।

भावार्थ : प्रेरक शिव सबकुछु जानेवाला बानी। जीव अल्पज्ञ बाटे। अत्यन्त गूढ़ चैतन्य जड़ अव्यक्त कहल जाला। पेड़ खूंट में खाली पियास रहेला, हरिहर फसल आ पत्थर आदि में बढ़ोतरी देखल जाला एही से इ माने के पड़ेला कि ओकनी में चैतन्य अत्यन्त गूढ़ बाटे ॥४३॥

उपाधिः पुनराख्यातः शुद्धाशुद्धविभेदतः।
शुद्धोपाधिः परा माया स्वाश्रया मोहकारिणी।।४४।।

भावार्थ : उपाधि शुद्ध आ अशुद्ध उपाधि भेद से (दु प्रकार के) कहल गईल बाटे। शुद्ध उपाधि माया[1] बिया जवन अपना में ही आश्रित रहेले। ऊ ईश्वर के मोह में ना डाल सकतिया आ नाही डालेले[2] ॥४४॥

अशुद्धोपाधिरप्येवमविद्याश्रयमोहिनी ।
अविद्याशक्तिभेदेन जीवा बहुविधाः स्मृताः।।४५।।

---

१. निरुपाधि परमेसर जब शुद्धमायोपाधि से सम्बलित होले तब ऊ सद्योजात, वामदेव, अघोर, तत्पुरुष आ ईशान के रूप में अपना आभासित करेले। तन्त्रशास्त्र में ई पाँच सदाशिव के पाँच गो मुँह कहल गईल बाटे।

२. ईश्वर यदि अपना इच्छा से मोह में पड़ेले त ऊ ईश्वर के ऐश्वर्य हटे।

भावार्थ : अशुद्ध उपाधि अविद्या हटे। ऊ अपना आश्रय (जीव) के मोह में डालेले। अविद्या के शक्ति के भेद से जीव अनेक प्रकार के मानल गईल बाड़न ॥४५॥

मायाशक्तिवशादीशो नानामूर्तिधरः प्रभुः।
सर्वज्ञः सर्वकर्ता च नित्यमुक्तो महेश्वरः।।४६।।

भावार्थ : भगवान् शिवजी माया नामक शक्ति के कारन अनेक रूप धारन करेनी। ऊ परमेसर सब कुछु जानेवाला, सब कुछु करेवाला आ हमेशा खातिर मुक्त बानी ॥४६॥

किञ्चित्कर्ता च किञ्चिज्ज्ञो बद्धोऽनादिशरीरवान्।
अविद्यामोहिता जीवा ब्रह्मैक्यज्ञानवर्जिताः।।४७।।

भावार्थ : अनादिशरीरवाला परमेसर जब माया से बन्हा जाले तब ऊ किञ्चित्कर्ता आ अल्पज्ञ अर्थात् जीव हो जाले ॥४७॥

परिभ्रमन्ति संसारे निजकर्मानुसारतः।
देवतिर्यङ्मनुष्यादिनानायोनिविभेदतः ।।४८।।

भावार्थ : अविद्या के कारन मोह से युक्त जीव स्वात्मब्रह्मैक्यज्ञान से रहित होके अपना करम के अनुसार देव, तिर्यक्, मनुष्य आदि अनेक जोनि के भेद से संसार में घुमेला ॥४८॥

चक्रनेमिक्रमेणैव भ्रमन्ति हि शरीरिणः।
जात्यायुर्भोगवैषम्यकारणं[२] कर्म केवलम्।।४९।।

भावार्थ : शरीरधारी अर्थात् जीव चक्र के मस्तक पर स्थित गोला के नीयर क्रम से (संसार में) भरमन करत रहेला। जनम, आयु आ भोग के विषमता के कारन खाली करम हटे ॥४९॥

एतेषां देहिनां साक्षी प्रेरकः परमेश्वरः।
एतेषां भ्रमतां नित्यं कर्मयन्त्रनियन्त्रणे।।५०।।

भावार्थ : हरदम भरमन करेवाला जीवसन के करमरूपी मशीन के नियंत्रण के प्रेरणा देबेवाला परमेसर ही एकनी के साक्षी बानी ॥५०॥

देहिनां प्रेरकः शम्भुर्हितमार्गोपदेशकः।
पुनरावृत्तिरहितमोक्षमार्गोपदेशकः ।।५१।।

भावार्थ : शिव ही देहीवर्ग के प्रेरक आ हितकारी रास्ता के उपदेशक बानी। ऊहाँ के ही पुनर्जनम से रहित अर्थात् एकान्तिक आ आत्यन्तिक मोक्ष के उपदेश करेवाला बानी ।।५१।।

स्वकर्मपरिपाकेन प्रक्षीणमलवासनः।
शिवप्रसादाज्जीवोऽयं जायते शुद्धमानसः।।५२।।

भावार्थ : अपना करम के पूरा पाक गईला से जीव के मल आ वासना ही क्षीन हो जाले। तब शिव के किरिपा से ई जीव शुद्ध चित्तवाला हो जाला ।।५२।।

शुद्धान्तःकरणे जीवे शुद्धकर्मविपाकतः।
जायते शिवकारुण्यात् प्रस्फुटा भक्तिरैश्वरी।।५३।।

भावार्थ : शुद्ध अन्तःकरण वाला जीव के भीतर शुद्ध करम के परिपाक से शिवजी के करुणावश शिव के प्रति स्पष्ट भक्ति उत्पन्न हो जाले ।।५३।।

जन्तुरन्त्यशरीरोऽसौ पिण्डशब्दाभिधेयकः।।५४।।

भावार्थ : अन्तिम शरीर वाला ई जीव पिण्ड शब्द के वाच्य होला ।।५४।।

पिण्डज्ञानस्थलम् – (२)

शरीरात्मविवेकेन[1] पिण्डज्ञानी स कथ्यते।
शरीरमेव चार्वाकैरात्मेति परिकीर्त्यते।।५५।।

भावार्थ : **पिण्डज्ञानस्थल के वर्णन** - जे शरीर आ आतमा के भेद के जानेला ऊ पिण्डज्ञानी कहल जाला। चार्वाक् लोग शरीर के ही आतमा मानेला ।।५५।।

इन्द्रियाणां तथात्मत्वमपरैः परिभाष्यते।
बुद्धितत्त्वगतैर्बौद्धैर्बुद्धिरात्मेति गीयते।।५६।।

भावार्थ : ओही लेखा अन्य (चार्वाक्) इन्द्रियन के आतमा कहेलेसन। बुद्धि तत्त्व के मूल मानेवाला बौद्ध बुद्धि (विज्ञान) के ही आतमा कहेलसन ।।५६।।

नेन्द्रियाणां न देहस्य न बुद्धेरात्मता भवेत्।
अहंप्रत्ययवेद्यत्वाद् अनुभूतस्मृतेरपि।।५७।।

भावार्थ : न इन्द्रिय, न देह आ ना बुद्धि ही आतमा हटे काहे से कि (आतमा) अहं अहं (हम हम) कईके जवन ज्ञान होला ओकर विषय हटे, आ अनुभूत विषय के स्मरण इन्द्रिय आदि के ना होला ।।५७।।

शरीरेन्द्रियबुद्धिभ्यो व्यतिरिक्तः सनातनः।
आत्मस्थितिविवेकी यः पिण्डज्ञानी स कथ्यते।।५८।।

भावार्थ : एही से जवन शरीर, इन्द्रिय, बुद्धि से अलगा आ सनातन अर्थात् नित्य बाटे ऊहे आतमा हटे। एह प्रकार के आत्मस्थिति के विवेक रखेवाला पिण्डज्ञानी कहल जाला ॥५८॥

नश्वराणि शरीराणि नानारूपाणि कर्मणा।
आश्रितो नित्य एवासाविति जन्तोर्विवेकिता।।५९।।

भावार्थ : ई देह के नाश हो जाई आ करम के अनुसार ई अनेक रूपवाला बाटे। ई आतमा शरीर में आश्रित रहेवाला आ नित्य बाटे (जबकि देह अनित्य बाटे)। ईहे जीव के विवेक हटे ॥५९॥

शरीरात् पृथगात्मानमात्मभ्य: पृथगीश्वरम्।
प्रेरकं यो विजानाति पिण्डज्ञानीति कथ्यते।।६०।।

भावार्थ : आत्मा शरीर से अलगा बाटे आ ओकर प्रेरक ईश्वर आत्मासन से अलगा बानी अईसन जे जानता ऊ पिण्डज्ञानी कहल जाला ॥६०॥

संसारहेयस्थल - (३)

निरस्तहृत्कलङ्कस्य नित्यानित्यविवेकिन:।
संसारहेयताबुद्धिर्जायते वासनाबलात्।।६१।।

भावार्थ : संसार हेयस्थल के वर्णन— जेकरा हिया के कंलक अर्थात् मलिनवासना हट चुकल बाटे, जे नित्य आ अनित्य के भेद के जानेला, वासना के बल से ओकरा भीतर ई संसार हेय अर्थात् तियागे जोग बाटे अईसन बुद्धि उत्पन्न होला ॥६१॥

ऐहिके क्षणिके सौख्ये पुत्रदारादिसंभवे।
क्षयित्वादियुते स्वर्गे कस्य वाञ्छा विवेकिन:।।६२।।

भावार्थ : बेटा, मेहरारू आदि से जनमल ई संसार के क्षणिक सुख आ क्षय (अतिशय) आदि से युक्त स्वर्ग (सुख) के खातिर कवना विवेकी के इच्छा हो सकेला अर्थात् केहू के भी ना हो सकेला ॥६२॥

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।
जन्तुर्मरणजन्मभ्यां परिभ्रमति चक्रवत्।।६३।।

भावार्थ : जे जनम लेला ओकर मरल आ जे मरेला ओकर जनम निश्चित बाटे। मरला आ जनम लिहला से ही जीव चक्का के नीयर घूमत रहेला ॥६३॥

मत्स्यकूर्मवराहाङ्गैर्नृसिंहमनुजादिभिः ।
जातेन निधनं प्राप्तं विष्णुनापि महात्मना।।६४।।

भावार्थ : महात्मा विसनुजी भी मत्स्य (मछरी)[१], कच्छप (कछुआ)[२], शूकर (सूअर)[३], नरसिंह[४], एवं मनुष्य[५] आदि के रंग अर्थात् देह धारन कईला पर अर्थात् उनके रूप में अवतार लिहला पर मृत्यु के प्राप्त भईनी ।।६४।।

भूत्वा कर्मवशाज्जन्तुर्ब्राह्मणादिषु जातिषु।
तापत्रयमहावह्निसन्तापाद् दह्यते भृशम्।।६५।।

भावार्थ : जीव (अपना पूर्वजनम के कईल) करम के कारन ब्राह्मन आदि जातिलोग में उत्पन्न होके (आध्यात्मिक, आधिदैविक आ आधिभौतिक) तीनु ताप के बड़हन आग में अतिशय रूप से जरत रहेला ।।६५।।

कर्ममूलेन दुःखेन पीड्यमानस्य देहिनः।
आध्यात्मिकादिना नित्यं कुत्र विश्रान्तिरिष्यते।।६६।।

भावार्थ : करम से जनमल आध्यात्मिक आदि दुःख से हमेशा पीड़ित होखेवाला जीव के शान्ति कहाँ से मिल सकेला अर्थात् कही ना मिल सकेला ।।६६।।

आध्यात्मिकं तु प्रथमं द्वितीयं चाधिभौतिकम्।
आधिदैविकमन्यच्च दुःखत्रयमिदं स्मृतम्।।६७।।

भावार्थ : पहिला आध्यात्मिक[६], दूसरा आधिदैविक[७] आ तीसरा आधिभौतिक[८] ई तीन प्रकार के दुःख मानल गईल बाटे ।।६७।।

---

१. भगवान् विसनुजी मार्कण्डेय मुनि के परलय के सरूप के देखावे खातिर मछरी के अवतार लेहले रहनी ।
२. समुन्दर के मथे के समय में ऊह विसनुजी कछुआ के रूप धके मन्दराचल पहाड़ के सम्भलले रहनी ।
३. हिरण्याक्ष द्वारा चोरावल गईल पृथिवी लावे खातिर ऊहे विसनुजी सूअर के अवतार धारन कईले रहनी ।
४. भगत पहलाद के रक्षा आ हिरण्यकशियपु के संहार कईला खातिर भगवान् विसनुजी नृसिंह अवतार धारन कईले रहनी ।
५. ऊहाँ के राम, कृष्ण आ वामन आदि अवतार मनुष्य के रूप में भईल रहे ।
६. ई दु प्रकार के होला - शारीरिक आ मानसिक ।
७. राजा, शत्रु आदि के द्वारा दिहल दुःख ।
८. सूखा, बाढ़, बिजुरी के गिरल, भूकम्प आदि से उत्पन्न दुःख ।

आध्यात्मिकं द्विधा प्रोक्तं बाह्याभ्यन्तरभेदतः।
वातपित्तादिजं दुःखं बाह्यमाध्यात्मिकं मतम्।।६८।।

भावार्थ : बाह्य आभ्यन्तर भेद से आध्यात्मिक दुःख दु प्रकार के कहल गईल बाटे। वात, पित्त, श्लेष्मा आदि से उत्पन्न दुःख बाह्य आध्यात्मिक दुःख मानल गईल बाटे ।।६८।।

रागद्वेषादिसम्पन्नमान्तरं परिकीर्त्यते।
आधिभौतिकमेतद्धि दुःखं राजादिभूतजम्।।६९।।

भावार्थ : राग, द्वेष आदि से मिलल दुःख भीतरी आध्यात्मिक दुःख कहल जाला। जवन दुःख राजा आदि के कारन उत्पन्न होला ऊ आधिभौतिक दुःख कहल जाला ।।६९।।

आधिदैविकमाख्यातं ग्रहयक्षादिसम्भवम्।
दुःखैरेतैरुपेतस्य कर्मबद्धस्य देहिनः।।
स्वर्गे वा यदि वा भूमौ सुखलेशो न विद्यते।।७०।।

भावार्थ : गरह, यक्ष आदि से जनमल दुःख आधिदैविक दुःख हटे। ई दुःखन से युक्त आ करम से बन्हाईल जीव के खातिर सरग में आ पृथिवी पर तनिको सुख नईखे ।।७०।।

तटित्सु वीचिमालासु प्रदीपस्य प्रभासु च।
सम्पत्सु कर्ममूलासु कस्य वा स्थिरतामतिः।।७१।।

भावार्थ : आकाशीय बिजुरी प्रदीप के चमक आ करम से पावल सम्पत्ति के कवन स्थिर समझेला (अर्थात्) केहू नाही ।।७१।।

मलकोशे शरीरेऽस्मिन् महादुःखविवर्धने।
तडिदङ्कुरसङ्काशे को वा रुच्येत पण्डितः।।७२।।

भावार्थ : मल के भण्डार के महादुःख के बढ़ावेवाला बिजुरी के अंकुर के नीयर ए शरीर के विषय में कवन बुद्धिमान् प्रेम करी लो ।।७२।।

नित्यानन्दचिदाकारमात्मतत्त्वं विहाय कः।
विवेकी रमते देहे नश्वरे दुःखभाजने।।७३।।

भावार्थ : नित्य आनन्द आ चित्सरूप आत्मतत्त्व के छोड़के कवन बुद्धिमान् नश्वर आ दुःख के पात्रभूत ए देह में रमन करी ।।७३।।

विवेकी शुद्धहृदयो निश्चितात्मसुखोदयः।
दुःखहेतौ शरीरेऽस्मिन् कलत्रे च सुतेषु च।।७४।।

सुहृत्सु बन्धुवर्गेषु धनेषु कुलपद्धतौ।
अनित्यबुद्ध्या सर्वत्र वैराग्यं परमश्नुते।।७५।।

भावार्थ : विवेकवान् शुद्ध हियावाला आ आत्मसुख के निश्चयवाला मनुष्य दुःख के कारनभूत ए देह, मेहरारू, बेटा, संघतिया, भाईलोग, धन आ कुल परम्परा के अनित्य बुद्धि के कारन सब जगहा परम वैराग्य के अनुभव करत रहता ।।७४-७५।।

विवेकिनो विरक्तस्य विषयेष्वात्मरागिणः।
संसारदुःखविच्छेदहेतौ बुद्धिः प्रवर्तते।।७६।।

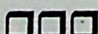
भावार्थ : विवेकी विषयलोग के प्रति विरक्त आतमा में अनुरक्त मनुष्य के बुद्धि संसार दुःख के नाश करे खातिर प्रवृत्त होले ।।७६।।

नित्यानित्यविवेकिनः सुकृतिनः शुद्धाशयस्यात्मनो
ब्रह्मोपेन्द्रमहेन्द्रमुख्यविभवेष्वस्थायितां पश्यतः।
नित्यानन्दपदे निराकृतजगत्संसारदुःखोदये
साम्बे चन्द्रशिरोमणौ समुदयेद्भक्तिर्भवध्वंसिनी।।७७।।

भावार्थ : नित्यानित्य के विवेक से युक्त, पुण्यवान्, पवित्र हृदयवाला, ब्रह्मा, विसनु आ इन्द्र आदि के वैभव के अस्थायी समझे वाला मनुष्य के नित्यानन्द के स्थानभूत, जंगम आ संसरणशील मृत्युलोक के दुःख के दूर करेवाला अम्बा के साथे चन्द्रमौलि के प्रति संसार के दूर करेवाली भक्ति उत्पन्न होले (अथवा उत्पन्न होखे के चाही) ।।७७।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां
शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये
श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ
भक्तस्थले पिण्डादिस्थलत्रयप्रसङ्गो
नाम पञ्चमः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के भक्तस्थल में पिण्डादिस्थलत्रय नामवाला पाँचवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।५।।



षष्ठ: परिच्छेद: (छठवाँ परिच्छेद)

दीक्षालक्षणगुरुकारुण्यस्थल - (४)

ततो विवेकसम्पन्नो विरागी शुद्धमानसः।
जिज्ञासुः सर्वसंसारदोषध्वंसकरं शिवम्।।१।।

उपैति लोकविख्यातं लोभमोहविवर्जितम्।
आत्मतत्त्वविचारज्ञं विमुक्तविषयभ्रमम्।।२।।

शिवसिद्धान्ततत्त्वज्ञं छिन्नसन्देहविभ्रमम्।
सर्वतन्त्रप्रयोगज्ञं धार्मिकं सत्यवादिनम्।।३।।

कुलक्रमागताचारं कुमार्गाचारवर्जितम्।
शिवध्यानपरं शान्तं शिवतत्त्वविवेकिनम्।।४।।

भस्मोद्धूलननिष्णातं भस्मतत्त्वविवेकिनम्।
त्रिपुण्ड्रधारणोत्कण्ठं धृतरूद्राक्षमालिकम्।।५।।

लिङ्गधारणसंयुक्तं लिङ्गपूजापरायणम्।
लिङ्गाङ्गयोगतत्त्वज्ञं निरूढाद्वैतवासनम्।।६।।

लिङ्गाङ्गस्थलभेदज्ञं श्रीगुरुं शिववादिनम्।

भावार्थ : दीक्षालक्षण-गुरुकारुण्यस्थल के वर्णन - एकरा बाद विवेक सम्पन्न विरागी शुद्ध चित्तवाला जिज्ञासु शिष्य गुरु के लगे जाला। गुरु के वैशिष्ट्य नीचे लिखल बाटे —

ऊ गुरु सगरी संसार के दोष (दु:ख) के नाश करेवाला, कल्यान करेवाला, लोक में परसिद्ध, लोभ, मोह से रहित, आत्मतत्त्व के विचार करेवाला, विषय के भरम से मुक्त, शिवाद्वैत सिद्धान्त के तत्त्व के जानेवाला, सन्देह रहित, सगरी तत्त्वन के प्रयोग के जानकार, धारमिक, सांच बोलेवाला, कुलक्रम आ गुरुवंशपरम्परा से मिलल आचार के पालन करेवाला, खराब रास्ता के अनुसरन ना करेवाला, शिवजी के ध्यान में लागल, शान्त, शिवतत्त्वविवेकवाला, भसम लगावे में कुशल, भसम तत्त्व के जानकार, त्रिपुण्ड के धारन करे के खातिर उत्सुक, रुद्राक्ष माला के धारन करेवाला, लिङ्गधारन से युक्त, लिङ्गपूजापरायन, लिङ्गाङ्गजोग के भेद के जानकार आ शिववादी होले ।।१-६।।

सेवेत परमाचार्यं शिष्यो भक्तिभयान्वित:।।७।।
षण्मासान् वत्सरं वापि यावदेष प्रसीदति।

भावार्थ : भक्ति आ भय से युक्त शिष्य परमाचार्य के छह महीना अथवा एक साल तक जब तक गुरु खुश ना होईं, सेवा करे ।।७-८।।

प्रसन्नं परमाचार्यं भक्त्या मुक्तिप्रदर्शकम्।
प्रार्थयेदग्रत: शिष्य: प्राञ्जलिर्विनयान्वित:।
भो कल्याण महाभाग शिवज्ञानमहोदधे।।९।।
आचार्यवर्य सम्प्राप्तं रक्ष मां भवरोगिणम्।

भावार्थ : खुशी आ मोक्ष के रास्ता के देखावेवाला परमाचार्य के आगे खड़ा होके शिष्य भक्ति के साथे हाथ जोड़के नम्रतापूर्वक प्रार्थना करे — हे कल्यान करेवाला, महाभागशाली, शिवज्ञान के समुन्दर आचार्यश्रेष्ठ रऊवा लगे आईल संसार के रोगी हमार रक्षा करी ।।८-९।।

इति शुद्धेन शिष्येण प्रार्थित: परमो गुरु:।।१०।।
शक्तिपातं समालोक्य दीक्षया योजयेदमुम्।

भावार्थ : गुरु शिष्य के द्वारा ए प्रकार से प्रार्थना कईल परम गुरु शक्तिपात के चिह्न के परीक्षा करके ओ शिष्य के दीक्षा से युक्त करीं ।।१०।।

दीयते च शिवज्ञानं क्षीयते पाशबन्धनम्।।११।।
यस्मादत: समाख्याता दीक्षेतीयं विचक्षणै:।

भावार्थ : जवना कारन एकरा द्वारा शिव के ज्ञान के दिहल जाला आ पाशबन्धन के नाश होला एही से विद्वान् लोग ए (संस्कारात्मक प्रक्रिया) के दीक्षा कहेला लो ।।११।।

सा दीक्षा त्रिविधा प्रोक्ता शिवागमविशारदै:।।१२।।
वेधारूपा क्रियारूपा मन्त्ररूपा च तापस।

भावार्थ : हे तपस्वी अगस्त्य ऋषि ! शैवागम के विद्वान् लोग ए दीक्षा के तीन प्रकार से बतलावेला— वेधरूपा, क्रियारूपा आ मन्त्ररूपा ।।१२।।

गुरोरालोकमात्रेण हस्तमस्तकयोगत:।।१३।।
य: शिवत्वसमावेशो वेधादीक्षेति सा मता।
मान्त्री दीक्षेति सा प्रोक्ता मन्त्रमात्रोपदेशिनी।।१४।।

भावार्थ : गुरु-शिष्य के देखत आपन हाथ ओकरा माथा पर रखेला। एही प्रकार शिष्य के भीतर जवन शिवत्व के समावेश होला ऊ वेधा दीक्षा मानल गईल बाटे। मन्त्र के खाली उपदेश देहल मान्त्री दीक्षा कहल गईल बाटे ॥१३-१४॥

कुण्डमण्डलिकोपेता क्रियादीक्षा क्रियोत्तरा।
शुभमासे शुभतिथौ शुभकाले शुभेऽहनि।।१५।।

विभूतिं शिवभक्तेभ्यो दत्त्वा ताम्बूलपूर्वकम्।
यथाविधि यथायोगं शिष्यमानीय देशिकः।।१६।।

स्नातं शुक्लाम्बरधरं दन्तधावनपूर्वकम्।
मण्डले स्थापयेच्छिष्यं प्राङ्मुखं तमुदङ् मुखः।।१७।।

शिवस्य नाम कीर्तिं च चिन्तामपि च कारयेत्।

भावार्थ : कुण्ड आ मण्डल से युक्त क्रियाप्रधान दीक्षा क्रिया दीक्षा होला। गुरु, शुभ मास, शुभ तिथि आ शुभ काल में पानसहित भसम के शिवभक्तन के निमंत्रन के निमित्त देके शास्त्रोक्त विधि के अनुसार शिष्य के लियावे। आवे के पहिले शिष्य दतुवन आ स्नान करके श्वेतवस्त्र के धारन क चुकल होखे। आचार्य शिष्य के मण्डप के भीतर पूरब के ओर मुँह करके बिठावस आ अपने उत्तराभिमुख बईठे। ऊ शिष्य के शिव के ध्यान आ शिव नाम के उच्चारण करावे ॥१५-१८॥

विभूतिपट्टं दत्त्वाग्रे यथास्थानं यथाविधि।।१८।।

पञ्चब्रह्ममयैस्तत्र स्थापितैः कलशोदकैः।
आचार्यः सममृत्विग्भिस्त्रिः शिष्यमभिषिञ्चयेत्।।१९।।

भावार्थ : एकरा बाद यथास्थान आ विधान के अनुसार आगे भसम के त्रिपुण्ड धारन करावे। पुनः आचार्य ओईजा स्थापित पञ्चब्रह्मवाला[1] कलशसन में जल से ऋत्विजसन द्वारा तीन बार अभिषेक करे ॥१८-१९॥

अभिशिच्य गुरुः शिष्यमासीनं परितः शुचिम्।
ततः पञ्चाक्षरीं शैवीं संसारभयतारिणीम्।।२०।।

तस्य दक्षिणकर्णे तु निगूढमपि कीर्तयेत्।
छन्दो रूपमृषिं चास्य दैवतान्यासपद्धतिम्।।२१।।

---

१. सद्योजात, वामदेव, अघोर, तत्पुरुष आ ईशान पञ्चब्रह्म हवे लो। मतान्तर में ब्रह्मा, विसनु, रुद्र, ईश्वर आ सदाशिव ई पञ्चब्रह्म कहल जाले।

भावार्थ : पुनः ऊहाँ बईठल सब प्रकार से शुद्ध शिष्य के दहिना कान में संसार के डर के दूर करेवाली पञ्चाक्षरी विद्या (ॐ नमः शिवाय) के गुप्त रूप से कही। साथे साथे एह विद्या के छन्द, सरूप, ऋषि, देवता आ न्यासपद्धति के भी बतलावे ॥२०-२१॥

लिङ्गधारणस्थल - (५)

स्फाटिकं शैलजं वापि चन्द्रकान्तमयं तु वा।
बाणं वा सूर्यकान्तं वा लिङ्गमेकं समाहरेत्।।२२।।

भावार्थ : लिङ्गधारण स्थल के वर्णन— (एकरा बाद गुरु) स्फटिक पत्थर चन्द्रकान्त मणि, नर्मदेश्वर, अथवा सूरूजकान्तमणी से बनल एगो लिङ्ग लेके आवे ॥२२॥

सर्वलक्षणसंपन्ने तस्मिंल्लिङ्गे विशोधिते।
पीठस्थितेऽभिषिक्ते च गन्धपुष्पादिपूजिते।।२३।।

मन्त्रपूते कलां शैवीं योजयेद्विधिना गुरुः।

भावार्थ : सगरी लछन से संपन्न ओ लिङ्ग के शुद्धकके पीठ पर रखला के बाद ओकर अभिषेक करी। गन्ध, फूल आदि से ओकर पूजा कईला के बाद मन्त्र से पवित्र ओईमें विधिपूर्वक शैवी कला के संयोजन करी ॥२३-२४॥

शिष्यस्य प्राणमादाय लिङ्गे तत्र निधापयेत्।।२४।।

तल्लिङ्गं तस्य तु प्राणे स्थापयेदेकभावतः।
एवं कृत्वा गुरुर्लिङ्गं शिष्यहस्ते निधापयेत्।।२५।।

भावार्थ : फेर से शिष्य के प्रान के लेके अर्थात् अंकुश मुद्रा के द्वारा खींच के ओह लिङ्ग में स्थापित करी। ओकरा बाद ओ लिङ्ग के शिष्य के प्रान में एकीभाव से स्थापित करी। एह प्रकार के अनुष्ठान कईला के बाद गुरु लिङ्ग के शिष्य के हाथ में रख दी ॥२४-२५॥

प्राणवद्धारणीयं तत्प्राणलिङ्गमिदं तव।
कदाचित्कुत्रचिद्वापि न वियोजय देहतः।।२६।।

भावार्थ : (एकरा बाद गुरु शिष्य के आज्ञा दी कि) तू ए प्राणलिङ्ग के अपना प्रान के नीयर अपना देह से लगवले ऱखीह। कही भी आ कबो एकरा के अपना देह से अलगा मत करीह ॥२६॥

यदि प्रमादात्पतिते लिङ्गे देहान्महीतले।
प्राणान् विमुञ्च सहसा प्राप्तये मोक्षसम्पदः।।२७।।

भावार्थ : यदि असावधानीवश ई लिङ्ग देह से अलगा होके जमीन पर गिर जाव त मोक्ष के पावे खातिर अचानके आपन परान के तियाग दिह ॥२७॥

इति सम्बोधितः शिष्यो गुरुणा शास्त्रवेदिना।
धारयेच्छाङ्करं लिङ्गं शरीरे प्राणयोगतः।।२८।।

भावार्थ : शास्त्र के जानकार गुरु के द्वार एह प्रकार से समझावल गईल ऊ चेला ओह शिवलिङ्ग के प्राणधारन ले शरीर से लगवले रखे ॥२८॥

लिङ्गस्य धारणं पुण्यं सर्वपापप्रणाशनम्।
आदृतं मुनिभिः सर्वैरागमार्थविशारदैः।।२९।।

भावार्थ : (एह प्रकार) लिङ्ग के धारन पुण्य के प्रदान करेवाला आ सगरी पापन के नाश करेवाला होला। आगम तत्त्व के सगरी पण्डित आ मुनिलोग एकरा के आदर के साथ स्वीकार कईले बा लो ॥२९॥

लिङ्गधारणमाख्यातं द्विधा सर्वार्थसाधकैः।
बाह्यमाभ्यन्तरं चेति मुनिभिर्मोक्षकाङ्क्षिभिः।।३०।।

भावार्थ : सब कुछ के साधेवाला साधक ई लिङ्गधारन मोक्ष के इच्छा रखेवाला मुनिलोग के द्वारा बाह्य आ आभ्यन्तर दु प्रकार के कहल गईल बाटे ॥३०॥

चिद्रूपं परमं लिङ्गं शाङ्करं सर्वकारणम्।
यत्तस्य धारणं चित्ते तदान्तरमुदाहृतम्।।३१।।

भावार्थ : संगरी संसार के कारन, शंकरजी के चिद्रूप लिङ्ग श्रेष्ठ बाटे। चित्त में ओकरा के धारन कईल ही आन्तर धारन कहल गईल बाटे ॥३१॥

चिद्रूपं हि परं तत्त्वं शिवाख्यं विश्वकारणम्।
निरस्तविश्वकालुष्यं निष्कलं निर्विकल्पकम्।।३२।।

सत्तानन्दपरिस्फूर्तिसमुल्लासकलामयम्।
अप्रमेयमनिर्देश्यं मुमुक्षुभिरुपासितम्।।३३।।

परं ब्रह्म महालिङ्गं प्रपञ्चातीतमव्ययम्।

भावार्थ : शिव नामक चिद्रूप परमतत्त्व विश्व के कारन बानी। सगरी मलिनता से रहित ऊ निष्कल आ निर्विकल्प बानी, सत्, चित् आ आनन्द के स्फुरण के समुल्लास वाला कला से युक्त बानी, अप्रमेय, अनिर्देश आ मोक्षार्थी लोग से उपासित बानी। अईसन प्रपञ्चातीत अर्थात् संसार से परे परब्रह्म रूप लिङ्ग महालिङ्ग हई ॥३२-३३॥

तदेव सर्वभूतानामन्तस्त्रिस्थानगोचरम्।।३४।।
मूलाधारे च हृदये भ्रूमध्ये सर्वदेहिनाम्।
ज्योतिर्लिङ्गं सदा भाति यद्ब्रह्मेत्याहुरागमाः।।३५।।

भावार्थ : ऊहे सगरी प्राणी लोग के शरीर के भीतर तीनु जगहा में रहेला। ऊ स्थान हटे— सगरी शरीरधारी लोग में स्थित मूलाधार, हृदय आ भ्रूमध्य। ऊ ज्योतिरूपी लिङ्ग एकनी में हमेशा प्रकाशित रहेला। आगमशास्त्र एही के ब्रह्म कहेला ।।३४-३५।।

अपरिच्छिन्नमव्यक्तं लिङ्गं ब्रह्म सनातनम्।
उपासनार्थमन्तःस्थं परिच्छिन्नं स्वमायया।।३६।।

भावार्थ : अपरिच्छिन्न अव्यक्त सनातन ब्रह्मरूप लिङ्ग (प्राणिलोग के द्वारा) उपासना के खातिर अपना माया से (मूलाधार आदि के) भीतर स्थित आ परिच्छिन्न हो गईल ।।३६।।

लयं गच्छति यत्रैव जगदेतच्चराचरम्।
पुनः पुनः समुत्पत्तिं तल्लिङ्गं ब्रह्म शाश्वतम्।।३७।।

भावार्थ : जवना में ई चर आ अचर जगत् लीन हो जाला आ फेर उत्पन्न होला ऊ शाश्वत (नित्य) ब्रह्मरूपी लिङ्ग हटे ।।३७।।

तस्माल्लिङ्गमिति ख्यातं सत्तानन्दचिदात्मकम्।
बृहत्वाद् बृहणत्वाच्च ब्रह्मशब्दाभिधेयकम्।।३८।।

भावार्थ : एही कारन ऊ चिद् आनन्दमयी सत्ता लिङ्ग कहल जाले। सबकर अपेक्षा बृहत् (बड़हन) होखेला आ सगरी लोग के पाले पोसे के कारन ऊ सच्चिदानन्द तत्त्व ब्रह्म शब्द के वाच्य होला। एह प्रकार परब्रह्म ही महालिङ्ग आ महालिङ्ग ही परब्रह्म हऊवन ।।३८।।

आधारे हृदये वापि भ्रूमध्ये वा निरन्तरम्।
ज्योतिर्लिङ्गानुसन्धानमान्तरं लिङ्गधारणम्।।३९।।

भावार्थ : मूलाधार, हृदय आ चाहे भ्रूमध्य में ओ ज्योतिर्लिङ्ग के लगातार अनुसन्धान आन्तर लिङ्गधारन कहल गईल बाटे ।।३९।।

आधारे कनकप्रख्यं हृदये विद्रुमप्रभम्।
भ्रूमध्ये स्फटिकच्छायं लिङ्गं योगी विभावयेत्।।४०।।

भावार्थ : जोगी लोग के द्वारा मूलाधार, हृदय आ चाहे भ्रूमध्य में ओ ज्योतिर्लिङ्ग के लगातार अनुसन्धान आन्तर लिङ्गधारन कहल गईल बाटे ।।४०।।

निरुपाधिकमाख्यातं लिङ्गस्यान्तरधारणम्।
विशिष्टं कोटिगुणितं बाह्यलिङ्गस्य धारणात्।।४१।।

भावार्थ : ऊ निरूपाधिक लिङ्ग के आन्तर धारन बाह्य लिङ्ग धारन के अपेक्षा करोड़न गुना श्रेष्ठ बाटे ।।४१।।

ये धारयन्ति हृदये लिङ्गं चिद्रूपमैश्वरम्।
न तेषां पुनरावृत्तिर्घोरसंसारमण्डले।।४२।।

भावार्थ : जे लोग अपना हिया में चिद्रूप शिवलिङ्ग के धारन करेला ओ लोग के घोर संसारमण्डल में फेर जनम ना होला ।।४२।।

अन्तर्लिङ्गानुसन्धानमात्मविद्यापरिश्रमः ।
गुरूपासनशक्तिश्च कारणं मोक्षसम्पदाम्।।४३।।

भावार्थ : अन्तर्लिङ्ग के ध्यान, आत्मविद्या में परिश्रम (अर्थात् आत्मज्ञान सम्बन्धी शास्त्रन के सुनल) आ गुरु के सेवा के सामर्थ्य ई तीनु मोक्ष के पवला के कारन हऊवन सन ।।४३।।

वैराग्यज्ञानयुक्तानां योगिनां स्थिरचेतसाम्।
अन्तर्लिङ्गानुसन्धाने रुचिर्बाह्ये न जायते।।४४।।

भावार्थ : एही कारन ज्ञान आ वैराग्य से युक्त स्थिरचित्त जोगिलोग के रुचि अन्तर्लिङ्गानुसन्धान में होला बाह्यलिङ्गानुसन्धान में ना ।।४४।।

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च वासवाद्याश्च लोकपाः।
मुनयः सिद्धगन्धर्वा दानवा मानवास्तथा।।४५।।

सर्वे च ज्ञानयोगेन सर्वकारणकारणम्।
पश्यन्ति हृदये लिङ्गं परमानन्दलक्षणम्।।४६।।

भावार्थ : ब्रह्मा, विसनुजी आ रुद्र (अवर कोटि के रुद्र) इन्द्र आदि लोकपाल मुनिगण, सिद्ध, गन्धर्व, दानव, मानव सब केहू ज्ञानजोग के द्वारा सगरी कारनन के कारन परमानन्दसरूप लिङ्ग के हृदय में साक्षात्कार करेला लो ।।४५-४६।।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन शाङ्करं लिङ्गमुत्तमम्।
अन्तर्विभावयेद्विद्वान् अशेषक्लेशमुक्तये।।४७।।

भावार्थ : एही से विद्वान् सगरी दुःख से मुक्ति खातिर सारा प्रयास से उत्तम शिवलिङ्ग के ध्यान अपना भीतरी करे लो ।।४७।।

अन्तर्धारयितुं लिङ्गमशक्तः शक्त एव वा।
बाह्यं च धारयेल्लिङ्गं तद्रूपमिति निश्चयात्।।४८।।

भावार्थ : अन्तर्लिङ्ग के धारन करे में समरथ हो आ असमरथ बाह्यलिङ्ग के अन्तर्लिङ्ग के रूप में समझ के ओकरा के धारन अवश्य करे के चाही ।।४८।।

लिङ्गं तु त्रिविधं प्रोक्तं स्थूलं सूक्ष्मं परात्परम्।
इष्टलिङ्गमिदं स्थूलं यद्बाह्ये धार्यते तनौ।।४९।।
प्राणलिङ्गमिदं सूक्ष्मं यदन्तर्भावनामयम्।
परात्परं तु यत्प्रोक्तं तृप्तिलिङ्गं तदुच्यते।।५०।।

भावार्थ : ई लिङ्ग स्थूल, सूक्ष्म आ परात्पर के भेद से तीन प्रकार के कहल गईल बाटे। जवन बाहर शरीर में धारन कईल जाला ऊ इष्टलिङ्ग स्थूल हटे। प्राणलिङ्ग सूक्ष्म बाटे जवन कि ।।४९-५०।।

भावनातीतमव्यक्तं परब्रह्म शिवाभिधम्।
इष्टलिङ्गमिदं साक्षादनिष्टपरिहारतः।।
धारयेदवधानेन शरीरे सर्वदा बुधः।।५१।।

भावार्थ : भावना से परे अतएव अव्यक्त शिव नामक परब्रह्म अनिष्ट से परिवार के कारन साक्षात् इष्टलिङ्ग हऊवन। विद्वान् के चाही कि वह सावधान होके सर्वदा शरीर से एकरा के धारन करे ।।५१।।

मूर्ध्नि वा कण्ठदेशे वा कक्षे वक्षःस्थलेऽपि वा।
कुक्षौ हस्तस्थले वापि धारयेल्लिङ्गमैश्वरम्।।५२।।

भावार्थ : शिर पर, कण्ठ में, बगल में अथवा वक्षःस्थल पर या कुक्षि अर्थात् पेट के ऊपर अथवा हथेली में शिवलिङ्ग के धारन करे के चाही ।।५२।।

नाभेरधस्ताल्लिङ्गस्य धारणं पापकारणम्।
जटाग्रे त्रिकभागे च मलस्थाने न धारयेत्।।५३।।

भावार्थ : नाभि के नीचे लिङ्ग के धारन पाप के कारन होला। जटा के आगे वाले भाग में पीठ पर आ मलस्थान में लिङ्ग के धारन ना करे के चाही ।।५३।।

लिङ्गधारी सदा शुद्धो निजलिङ्गं मनोरमम्।
अर्चयेद् गन्धपुष्पाद्यैः करपीठे समाहितः।।५४।।

भावार्थ : लिङ्ग के धारन करेवाला हमेशा शुद्ध होला। ओकरा के चाही कि ऊ समाहित अर्थात् एकाग्रचित्त वाला होके अपना मनोरम लिङ्ग के कररूपी पीठ पर गन्ध, फूल आदि से पूजा करे ।।५४।।

बाह्यपीठार्चनादेतत् करपीठार्चनं वरम्।
सर्वेषां वीरशैवानां मुमुक्षूणां निरन्तरम्।।५५।।

भावार्थ : मोक्ष के चाहेवाला सगरी वीरशैवन के खातिर ऊ करपीठार्चन बाह्यपीठार्चन के अपेक्षा हमेशा खातिर श्रेष्ठ होला ।।५५।।

ब्रह्मविष्ण्वादयो देवा मुनयो गौतमादयः।
धारयन्ति सदा लिङ्गमुत्तमाङ्गे विशेषतः।।५६।।

लक्ष्म्यादिशक्तयः सर्वाः शिवभक्तिविभाविताः।
धारयन्त्यलिकाग्रेषु शिवलिङ्गमहर्निशम्।।५७।।

भावार्थ : ब्रह्मा, विसनु आदि देवतागन, गौतम आदि मुनिलोग विशेष रूप से ए लिङ्ग के उत्तमाङ्ग अर्थात् शिर पर धारन करेला लो। शिवभक्ति से भरल लछिमी आदि सगरी शक्तिलोग भी ए शिवलिङ्ग के रातो-दिन मस्तक पर धारन कईले रहेला लो ।।५६-५७।।

वेदशास्त्रपुराणेषु कामिकाद्यागमेषु च।
लिङ्गधारणमाख्यातं वीरशैवस्य निश्चयात्।।५८।।

भावार्थ : वेद, शास्त्र, पुरान आ कामिक आदि आगमन में वीरशैव खातिर लिङ्गधारन आवश्यक कहल गईल बाटे ।।५८।।

ऋगित्याह पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते।
तस्मात्पवित्रं तल्लिङ्गं धार्यं शैवमनामयम्।।५९।।

भावार्थ : ऋग्वेद में कहल गईल— हे ब्रह्मणस्पते ! (ब्रह्मन्) ई शिवलिङ्ग वितत अर्थात् शिवादि धरण्यन्त छत्तीस तत्त्वन में व्याप्त बाटे अतः तहरा खातिर पवित्र बाटे। ए कारन ए अनामय शिवलिङ्ग के धारन करे के चाही ।।५९।।

ब्रह्मेति लिङ्गमाख्यातं ब्रह्मणः पतिरीश्वरः।
पवित्रं तद्धि विख्यातं तत्सम्पर्कात्तनुः शुचिः।।६०।।

भावार्थ : लिङ्ग के ब्रह्म कहल गईल बाटे। ब्रह्मा के पति ईश्वर अर्थात् शिवजी हईं। एह प्रकार लिङ्ग पवित्र कहल गईल बाटे। ओकरा सम्पर्क से ओकरा के धारन करेवाला के शरीर भी शुद्ध हो जाला ।।६०।।

अतप्ततनुरज्ञो वै आमः संस्कारवर्जितः।
दीक्षया रहितः साक्षान्नाप्नुयाल्लिङ्गमुत्तमम्।।६१।।

भावार्थ : तपस्या से रहित अज्ञानी आम (काच) अर्थात् बिना पाकल अन्त:करण वाला संस्कार से हीन आ दीक्षा से रहित मनुष्य के उत्तम लिङ्ग के अपने से धारन ना करे के चाही । अपना इच्छा से लिङ्ग के धारन कईल पाप के कारन होला ।।६१।।

अघोराऽपापकाशीति या ते रुद्र शिवा तनूः ।
यजुषा गीयते यस्मात् तस्माच्छैवोऽघवर्जितः ।।६२।।

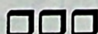
भावार्थ : यजुर्वेद कहेला— हे रुद्र ! राऊर देह अघोर पापरहित आ मङ्गलकारी बाटे । एही से लिङ्ग के धारन करेवाला शिवोपासक निष्पाप (बिना पाप के) ही होला ।।६२।।

यो लिङ्गधारी नियतान्तरात्मा
नित्यं शिवाराधनबद्धचित्तः ।
स धारयेत् सर्वमलापहत्यै
भस्मामलं चारु यथाप्रयोगम् ।।६३।।

भावार्थ : जवन लिङ्गधारन करेवाला संयतचित्त वाला नित्य शिवाराधन में मन के लगवले बाटे ऊ सगरी पाप सन के नाश के खातिर सुन्दर आ निर्मल भसम के विधि-विधान के अनुसार धारन करे ।।६३।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां
शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये
श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ
भक्तस्थले गुरुकारुण्यस्थललिङ्गधारणस्थल-
प्रसङ्गो नाम षष्ठः परिच्छेदः ।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के भक्तस्थल में गुरूकारूण्यलिङ्गधारणस्थलप्रसङ्ग नामवाला छठवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।६।।



सप्तम: परिच्छेद: (सातवाँ परिच्छेद)

भस्मधारणस्थल - (६)

भस्मधारणसंयुक्त: पवित्रो नियताशय:।
शिवाभिधानं यत्प्रोक्तं भासनाद्भसितं तथा।।१।।

महाभस्मेति सञ्चिन्त्य महादेवं प्रभामयम्।
वर्तन्ते ये महाभागा मुख्यास्ते भस्मधारिण:।।२।।

भावार्थ : भस्मधारणस्थल वर्णन— भसम धारन से युक्त मनुष्य निश्चित आशयवाला आ पवित्र होला। जवन शिव के पञ्चाक्षर रूप नाम कहल गईल बाटे शिव के भासन अर्थात् प्रकाशन कईला के कारन 'भसित अर्थात् महाभसम बाटे। अईसन चमकवाला महादेव के जे लोग ध्यान करत (मन्त्र, जप आदि) दोसर काम करे ला लो ऊहे लोग प्रमुख भसमधारी होला लो ॥१-२॥

शिवाग्न्यादिसमुत्पन्नं मन्त्रन्यासादियोगत:।
तदुपाधिकमित्याहुर्भस्मतन्त्रविशारदा: ।।३।।

भावार्थ : (जवन भसम) मन्त्र, न्यास आदि के जोग से शिवाग्नि से उत्पन्न भसम शास्त्र के विद्वान् ओकरा के सोपाधिक भसम कहेला लो ॥३॥

विभूतिर्भसितं भस्म क्षारं रक्षेति भस्मन:।
एतानि पञ्चनामानि हेतुभि: पञ्चभिर्भृशम्।।४।।

भावार्थ : भसम के विभूति, भसित, भस्म, क्षार आ रक्षा ई पाँचु नाम निश्चित रूप से पाँच गो कारन से बाड़न ॥४॥

विभूतिर्भूतिहेतुत्वाद् भसितं तत्त्वभासनात्।
पापानां भर्त्सनाद्भस्म क्षरणात् क्षारमापदाम्।।५।।
रक्षणात् सर्वभूतेभ्यो रक्षेति परिगीयते।

भावार्थ : भूति अर्थात् ऐश्वर्य के कारन होखला से एकरा के विभूति कहल गईल बाटे। एकर भसित नाम तत्त्व के भासन करे के कारन बाटे। पाप के भर्त्सन (नाश) करे के कारन ई भसम आ आपत्तिसन से रक्षा के कारन क्षार कहल जाला। सगरी प्राणीलोग के रक्षा कईला से ई रक्षा कहल जाला ॥५-६॥

नन्दा भद्रा च सुरभिः सुशीला सुमनास्तथा।।६।।
पञ्च गावो विभोर्जाताः सद्योजातादिवक्त्रतः।

भावार्थ : नन्दा, भद्रा, सुरभि, सुशीला आ सुमना ई पाँचु गाय परमेसर के सद्योजात आदि पाँच गो मुँह से उत्पन्न भईल लो (ओकनी में सद्योजात से नन्दा, वादमेव से भद्रा, अघोर से सुरभि, तत्पुरुष नामक मुँह से सुशीला आ ईशान नामक मुँह से सुमना नाम के गाय उत्पन्न भईली) ।।६।।

कपिला कृष्णा च धवला धूम्रा रक्ता तथैव च।।७।।
नन्दादीनां गवां वर्णाः क्रमेण परिकीर्तिताः।

भावार्थ : ओ नन्दा आदि गाय सन के रंग क्रम से कपिल, कृष्ण (करिया), श्वेत (उजर), धूम्र (धुआँ लेखा) आ रक्त (लाल) बतलावल गईल बाटे ।।७।।

सद्योजाताद्विभूतिश्च वामाद्भसितमेव च।।८।।
अघोराद्भस्म संजातं तत्पुरुषात्क्षारमेव च।
रक्षा चेशानवक्त्राच्च नन्दादिद्वारतोऽभवत्।।९।।

भावार्थ : सद्योजात से विभूति, वामदेव से भसित, अघोर से भसम, तत्पुरुष से क्षार आ ईशान मुँह से रक्षा नामक भसम नन्दा आदि के द्वारा उत्पन्न कईल गईल बाटे ।।८-९।।

धारयेन्नित्यकार्येषु विभूतिं च प्रयत्नतः।
नैमित्तिकेषु भसितं क्षारं काम्येषु सर्वदा।।१०।।
प्रायश्चित्तेषु सर्वेषु भस्म नाम यथाविधि।
रक्षा च मोक्षकार्येषु प्रयोक्तव्या सदा बुधैः।।११।।

भावार्थ : नित्य करम में विभूति, नैमित्तिक करम में भसित, काम्यकरम में क्षार, प्रायश्चित्त करम में भसम आ मोक्ष के काम में विद्वान् लोग रक्षा नामक भसम सन के विधि के अनुसार धारन करे लो ।।१०-११।।

नन्दादीनां तु ये वर्णाः कपिलाद्याः प्रकीर्तिताः।
त एव वर्णा विख्याता भूत्यादीनां यथाक्रमम्।।१२।।

भावार्थ : नन्दा आदि गाय सन के जवन कपिल आदि रंग सन के चर्चा पहिले कहल गईल बाटे भूति आदि के भी क्रम से ऊहे रंग कहल गईल बाटे ।।१२।।

भस्मोत्पादनमुद्दिष्टं चतुर्धा तन्त्रवेदिभिः।
कल्पं चैवानुकल्पं तु उपकल्पमकल्पकम्।।१३।।

एषामादिममुत्कृष्टमन्यत् सर्वमभावतः।

भावार्थ : तन्त्रशास्त्र के जानकार विद्वान लोग भसम के उत्पादन के चार प्रकार बतवले बा लो कल्प, अनुकल्प, उपकल्प। ओईमें से पहिलका श्रेष्ठ बाटे। ओकरा अभाव में बाकी सब ग्रहण करे जोग बाटे ॥१३॥

यथाशास्त्रोक्तविधिना गृहीत्वा गोमयं नवम्।।१४।।

सद्येन वामदेवेन कुर्यात् पिण्डमनुत्तमम्।
शोषयेत्पुरुषेणैव दहेद् घोराच्छिवाग्निना।।१५।।

कल्पं तद्भस्म विज्ञेयमनुकल्पमथोच्यते।
वनेषु गोमयं यच्च शुष्कं चूर्णीकृतं तथा।।१६।।

दग्धं चैवानुकल्पाख्यमापणादिगतं तु यत्।
वस्त्रेणोत्तारितं भस्म गोमूत्राबद्धपिण्डितम्।।१७।।

दग्धं प्रागुक्तविधिना भवेद्भस्मोपकल्पकम्।
अन्यैरापादितं भस्माप्यकल्पमिति निश्चितम्।।१८।।

भावार्थ : भस्मोपादन विधि[1]— शास्त्र में कहल गईल विधि से सद्योजात मन्त्र के उच्चारन करत गाय के ताजा गोबर लेके तत्काल वामदेव मन्त्र के उच्चारन करत ओकर नीमन पिण्ड बनावे। तत्पुरुष मन्त्र से ओकरा के (धूप में) सुखावे आ ओहीजा अघोर मन्त्र के उच्चारन करत ओकरा के जलावे। ए विधि से तईयार कईल गईल भसम कल्प कहल जाला। एकरा बाद अनुकल्प के बतलावल जाता। वन में गाय के सूखा आ चूर्ण कईल गईल गोबर होला ओकरा के जरावला से अनुकल्प नामक भसम बनेला। जवन भसम दोकान से ले ओके कपड़ा से छानके गाय के मूत से पिण्ड बनाके पहिले कहल विधि से जरावल जाव ऊ उपकल्प भसम होला। अऊरी दोसर (विधान के ना जानेवाला) विधान से तईयार कईल गईल भसम अकल्प कहल जाला। (अईसन शास्त्रसन के) निश्चय बाटे ॥१४-१८॥

एष्वेकतममादाय पात्रेषु कलशादिषु।
त्रिसन्ध्यमाचरेत्स्नानं यथासंभवमेव वा।।१९।।

---

१. ई विधि भस्मबाजालोपनिषद् में कहल गईल बाटे।

भावार्थ : कलश आदि बर्तन में रखल गईल भसम सन में से कवनो एगो भसम के लेके तीनु सन्ध्या (प्रातः सन्ध्या, मध्याह्न सन्ध्या आ सायं सन्ध्या) में तीन बार नहावे अथवा यथाशक्ति एक बार नहाये ॥१९॥

स्नानकाले करौ पादौ प्रक्षाल्य विमलाम्भसा।
वामहस्ततले भस्म क्षिप्त्वाच्छाद्यान्यपाणिना।।२०।।
अष्टकृत्वाथ मूलेन मौनी भस्माभिमन्त्र्य च।
शिर ईशानमन्त्रेण पुरुषेण मुखं तथा।।२१।।
हृत्प्रदेशमघोरेण वामदेवेन गुह्यकम्।
पादौ सद्येन सर्वाङ्गं प्रणवेनैव सेचयेत्।।२२।।

भावार्थ : भसम से नहाये के बेरा पहिले स्वच्छ जल में दुनु हाथ आ दुनु गोड़ के धोके बायाँ हाथ के तरहथी पर भसम के रखे। दाहिना हाथ से ओकरा के ढँक के आठ बार मूल मन्त्र (ॐ नमः शिवाय) से चुप रहके भसम के अभिमन्त्रण करे। फेर ईशान मन्त्र[१] से शिर, तत्पुरुष मन्त्र[२] से मुँह, अघोर मन्त्र[३] से हृदय, वामदेव मन्त्र[४] से गुह्य आ सद्योजात मन्त्र[५] से गोड़ आ ओंकार मन्त्र से सब अंग के अभिषेक करे के चाही ॥२०-२२॥

भस्मना विहितं स्नानमिदमाग्नेयमुत्तमम्।
स्नानेषु वारुणाद्येषु मुख्यमेतन्मलापहम्।।२३।।

भावार्थ : भसम से ई कईल गईल स्नान आग्नेय स्नान कहल जाला। वारुण आदि सात प्रकार के स्नान[६] में ई मुख्य आ आभ्यन्तर-बाह्य मल (भीतरी बाहरी मईल) के दूर करेवाला हवे ॥२३॥

---

१. ईशान मन्त्र - ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम्। ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मेऽस्तु सदाशिवोऽहम्।

२. तत्पुरुष मन्त्र - तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।

३. अघोर मन्त्र - अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वसर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररुपेभ्यः।

४. वामदेवाय मन्त्र - वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः।

५. सद्योजात मन्त्र - सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय नमो नमः। भवे भवेनातिभवे भवस्वमां भवोद्भवाय नमः।

६. मान्त्र, भौम, आग्नेय, वायव्य, दिव्य, वारुण आ मानस ई सात तरह के स्नान होला।

भस्मस्नानवतां पुंसां यथायोगं दिनेदिने।
वारुणाद्यैरलं स्नानैर्बाह्यदोषापहारिभिः।।२४।।

भावार्थ : रोज शास्त्रानुसार भसम से नहायेवाला लोग खातिर बाह्य दोषन के हटावे वाला वारुण आदि स्नानसन के कवनो आवश्यकता ना होला ।।२४।।

आग्नेयं भस्मना स्नानं यतिभिस्तु विधीयते।
आर्द्रस्नानात्परं भस्म आर्द्रे जन्तुवधो ध्रुवम्।।२५।।

भावार्थ : यती लोग भसम के द्वारा आग्नेय स्नान करेला। भसम स्नान आर्द्र स्नान अर्थात् जल स्नान से श्रेष्ठ होला काहे से कि जल में प्राणीलोग के हिंसा निश्चित होला ।।२५।।

आर्द्रं तु प्रकृतिं विद्यात् प्रकृतिं बन्धनं विदुः।
प्रकृतेस्तु प्रहाणार्थं भस्मना स्नानमिष्यते।।२६।।

भावार्थ : पानी के प्रकृति बुझे के चाही। विद्वान् लोग प्रकृति से बन्हाईला के मानेला। ई प्रकृति के अर्थात् बन्हाईला के तियाग करे खातिर भसम से नहाईल जाला ।।२६।।

ब्रह्माद्या विबुधाः सर्वे मुनयो नारदादयः।
योगिनः सनकाद्याश्च बाणाद्या दानवा अपि।।२७।।

भस्मस्नानयुताः सर्वे शिवभक्तिपरायणाः।
निर्मुक्तदोषकलिला नित्यशुद्धा भवन्ति हि।।२८।।

भावार्थ : ब्रह्मा आदि देवतालोग, नारद आदि मुनिलोग, सनक आदि जोगीलोग, बाण आदि राछसलोग ई सब भसमस्नान से युक्त आ शिवजी के भक्ति में सराबोर होके दोषरूपी कीचड़ (अथवा दोषसमूह) से मुक्त भईल लोग आ हमेशा खातिर शुद्ध हो गईल लोग ।।२७-२८।।

नमःशिवायेति भस्म कृत्वा सप्ताभिमन्त्रितम्।
उद्धूलयेत्तेन देहं त्रिपुण्ड्रं चापि धारयेत्।।२९।।

भावार्थ : 'ॐ नमः शिवाय' ए मन्त्र से भसम के सात बेर अभिमन्त्रित करे के चाही। फेर से ओकर (अभिमन्त्रित भसम के) शरीर पर उद्धूलन (ऊड़ावल आ चाहे लेप) करे के चाही। साथे साथे त्रिपुण्ड्र के धारन करे के भी चाही ।।२९।।

सर्वाङ्गोद्धूलनं चापि न समानं त्रिपुण्ड्रकैः।
तस्मात् त्रिपुण्ड्रमेवैकं लिखेदुद्धूलनं विना।।३०।।

भावार्थ : सगरी देह के भसम से उद्धूलित (लेप) कईल भी त्रिपुण्ड्र के बराबर ना होला। एही कारन (यदि इच्छा ना होखे त) उद्धूलन के बिना भी खाली त्रिपुण्ड्र के धारन करे के चाही ॥३०॥

त्रिपुण्ड्रं धारयेन्नित्यं भस्मना सलिलेन च।
स्थानेषु पञ्चदशसु शरीरे साधकोत्तमः॥३१॥

भावार्थ : उत्तम कोटि के साधक के चाही कि ऊ रोजे भसम आ पानी मिलाके देह में पनरह (१५) गो जगहा पर त्रिपुण्ड्र के धारन करे ॥३१॥

उत्तमाङ्गे ललाटे च श्रवणद्वितये तथा।
गले भुजद्वये चैव हृदि नाभौ च पृष्ठके॥३२॥

बाहुयुग्मे ककुद्देशे मणिबन्धद्वये तथा।
त्रिपुण्ड्रं भस्मना धार्यं मूलमन्त्रेण साधकैः॥३३॥

भावार्थ : उत्तम साधक लोग मूलमन्त्र के उच्चारन करत शिर, ललाट, दुनु कान, गरदन, दुनु बाँह, हिरिदय, नाभि, पीठ, दुनु बाँह, (ककुद) कान्ह के बीचला भाग, दुनु मणिबन्ध में भसम के द्वारा त्रिपुण्ड्र के धारन करे ॥३२-३३॥

वामहस्ततले भस्म क्षिप्त्वाच्छाद्यान्यपाणिना।
अग्निरित्यादिमन्त्रेण स्पृशन् वाराभिमन्त्र्य च॥३४॥

त्रिपुण्ड्रमुक्तस्थानेषु दध्यात् सजलभस्मना।
शिवं शिवङ्करं शान्तं स प्राप्नोति न संशयः॥३५॥

भावार्थ : एकरा बाद जवन भक्त बायाँ हाथ के तरहथी पर भसम रखके दहिना हाथ से ओकरा के ढँक के "अग्निरिति भस्म" मन्त्र से जल के द्वारा अभिमन्त्रित करके (शरीर के) कहल स्थानन में जल के साथे भस्म से त्रिपुण्ड्र के धारन करेला, ऊहे शान्त, शिव शंकर के प्राप्त करेला एई में कवनों शंका नईखे ॥३४-३५॥

मध्याङ्गुलित्रयेणैव स्वदक्षिणकरस्य तु।
षडङ्गुलायतं मानमपि वाऽलिकमानकम्॥३६॥

नेत्रयुग्मप्रमाणेन फाले दध्यात् त्रिपुण्ड्रकम्।

भावार्थ : अपना दहिना हाथ के तर्जनी, मध्यमा, अनामिका ई तीनु अंगुरी से छह आंगुर लाम आ चाहे मस्तक जेतना लाम त्रिपुण्ड मस्तक पर लागवे के चाही ॥३६॥

मध्यमाऽनामिकाङ्गुष्ठैरनुलोमविलोमतः ॥३७॥

धारयेद्यस्त्रिपुण्ड्राङ्कं स रुद्रो नात्र संशयः।

भावार्थ : जवन मनुष्य मध्यमा, अनामिका आ अंगूठा से अनुलोम-विलोम विधि से उलटा सीधा त्रिपुण्ड के धारन करेला ऊ रुद्र हो जाला। एईमें कवनो सेन्दह नईखे ॥३७॥

ऋजु श्वेतमनुव्याप्तं स्निग्धं श्रोत्रप्रमाणकम्।।३८।।

एवं सल्लक्षणोपेतं त्रिपुण्ड्रं सर्वसिद्धिदम्।

भावार्थ : सरल, ऊजर, आपस में सटल, चिकन आ कान तक खिंचल एह प्रकार के उत्तम लक्षन से युक्त त्रिपुण्ड सगरी सिद्धिसन के देबेवाला होला ॥३८॥

प्रातःकाले च मध्याह्ने सायाह्ने च त्रिपुण्ड्रकम्।।३९।।
कदाचिद्भस्मना कुर्यात् स रुद्रो नात्र संशयः।
एवंविधं विभूत्या च कुरुते यस्त्रिपुण्ड्रकम्।।
स रौद्रधर्मसंयुक्तस्त्रयीमय इति श्रुतिः।।४०।।

भावार्थ : सबेरे, दुपहरिया आ सांझी खां कवनो भी समय कम से कम एक बार भसम से (नहायेवाला आ चाहे त्रिपुण्ड लगावेवाला मरदाना) रुद्र हो जाला, एईमें कवनो भी सन्देह नईखे। एह प्रकार से जवन भसम से त्रिपुण्ड लगावेला ऊ रुद्रधर्म से युक्त आ वेद नीयर हो जाला अईसन श्रुति कहेले ॥३९-४०॥

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च देवाः शक्रपुरोगमाः।
त्रिपुण्ड्रं धारयन्त्येव भस्मना परिकल्पितम्।।४१।।
वसिष्ठाद्या महाभागा मुनयः श्रुतिकोविदाः।
धारयन्ति सदाकालं त्रिपुण्ड्रं भस्मना कृतम्।।४२।।

भावार्थ : ब्रह्मा, विसनुजी, रुद्र आ इन्द्र आदि देवतालोग भसम से बनावल त्रिपुण्ड के धारन करबे करेला लो। वेदशास्त्र में पारंगत वशिष्ठ आदि विद्वान् भी भसम से बनावल गईल त्रिपुण्ड के हमेशा धारन करेला लो ॥४१-४२॥

शैवागमेषु वेदेषु पुराणेष्वखिलेषु च।
स्मृतीतिहासकल्पेषु विहितं भस्मपुण्ड्रकम्।।
धारणीयं समस्तानां शैवानां च विशेषतः।।४३।।

भावार्थ : शैवागम, सगरी वेद, पुरान, स्मृति, इतिहास आ कल्पग्रन्थन में भसम त्रिपुण्ड के विधान के वर्णन कईल गईल बाटे। एही से एकरा के सबलोग के विशेष रूप से शैवलोग (शिवजी के भक्तन) के जरूर धारन करे के चाही ॥४३॥

नास्तिको भिन्नमर्यादो दुराचारपरायणः।
भस्मत्रिपुण्ड्रधारी चेन्मुच्यते सर्वकिल्बिषैः।।४४।।

भावार्थ : नास्तिक, शास्त्रीय नियम के उल्लङ्घन करेवाला, खराब आचरण करेवाला (दुराचारी) भी यदि भसम से बनल त्रिपुण्ड के धारन करेवाला बा त ऊ सगरी पाप से छूट जाई ।।४४।।

रुद्राक्षधारणस्थल - (७)

भस्मना विहितस्नानस्त्रिपुण्ड्राङ्कितमस्तकः।
शिवार्चनपरो नित्यं रुद्राक्षमपि धारयेत्।।४५।।

भावार्थ : रुद्राक्षधारणस्थल वर्णन— जे भसम से नहईले होखे, मस्तक पर त्रिपुण्ड भी धारन कईले होखे आ रोजे शिवजी के पूजा करत होखे ओकरा रुद्राक्ष भी धारन करे के चाही ।।४५।।

रुद्राक्षधारणादेव मुच्यन्ते सर्वपातकैः।
दुष्टचित्ता दुराचारा दुष्प्रज्ञा अपि मानवाः।।४६।।

भावार्थ : जेकर मन दूषित होखे, जे खराब आचार-वेवहार करत होखे, जेकर बुद्धि भ्रष्ट हो गईल होखे ऊ मनुष्य भी खाली रुद्राक्ष के धारन कईल से सगरी पापन से मुक्त हो जाला ।।४६।।

पुरा त्रिपुरसंहारे त्रिनेत्रो जगतां पतिः।।
उदपश्यत् पुरां योगमुन्मीलितविलोचनः।।४७।।
निपेतुस्तस्य नेत्रेभ्यो बहवो जलबिन्दवः।
तेभ्यो जाता हि रुद्राक्षा रुद्राक्षा इति कीर्तिताः।।४८।।

भावार्थ : पुरान समय में ई संसार के स्वामी भगवान् शंकर त्रिपुरसंहार के समय आँख खोलके यौगिक दृष्टि से (शाम्भवी मुद्रा) से चिरकाल तक ओकर (त्रिपुर नामक राछस के) जोग के देखले त शिवजी के आँख से आँसू धरती पर गिरल आ ऊहे रुद्राक्ष बन गईल। (आ रुद्र के आँख से जनमल होखला के कारन ई संसार में) रुद्राक्ष नाम से परसिद्ध भईल ।।४७-४८।।

रुद्रनेत्रसमुन्पन्ना रुद्राक्षा लोकपावनाः।
अष्टत्रिंशत्प्रभेदेन भवन्त्युत्पत्तिभेदतः।।४९।।

भावार्थ : रुद्र के आँख से जनमल आ लोकपावन ई रुद्राक्ष उत्पत्ति के भेद से अँड़तीस प्रकार के होलन ।।४९।।

नेत्रात्सूर्यात्मनः शम्भोः कपिला द्वादशोदिताः।
श्वेताः षोडशसञ्जाताः सोमरूपाद्विलोचनात्।।५०।।

कृष्णा दशविधा जाता वह्निरूपाद्विलोचनात्।
एवमुत्पत्तिभेदेन रुद्राक्षा बहुधा स्मृता।।५१।।

भावार्थ : शिवजी के सूरूजात्मक आँख से बारह[1] गो कपिल करने के रुद्राक्ष कहल गईल बाड़न। शिवजी के चनरमारूपी आँख से ऊजर रंग के सोलह[2] रुद्राक्ष भईलन। शिवजी के आगरूपी आँख से दस[3] प्रकार के करिया रंग के रुद्राक्ष उत्पन्न भईलन। एही तरह से उत्पत्ति के भेद से रुद्राक्ष अनेक (१२+१६+१०=३८) प्रकार के बाड़न ।।५०-५१।।

अच्छिद्रं कनकप्रख्यमनन्यधृतमुत्तमम्।
रुद्राक्षं धारयेत् प्राज्ञः शिवपूजापरायणः।।५२।।

भावार्थ : छेद रहित अर्थात् जवना के कीरा ना खईले होखन सन अईसन सोना के रंगवाला आ जेकरा के केहू कबो ना धारन कईले होखे ऊ रुद्राक्ष उत्तम होला। शिवजी के पूजा में मन लगावेवाला बुद्धिमान् के अईसने रुद्राक्ष धारन करेके चाही ।।५२।।

यथास्थानं यथावक्त्रं यथायोगं यथाविधि।
रुद्राक्षधारणं वक्ष्ये रुद्रसायुज्यसिद्धये।।५३।।

भावार्थ : (अब हम) शिवसायुज्य[4] खातिर स्थान, मुखशास्त्र आ विधान के दृष्टि से रुद्राक्षधारन के कहेम ।।५३।।

शिखायामेकमेकास्यं रुद्राक्षं धारयेद् बुधः।
द्वित्रिद्वादशवक्त्राणि शिरसि त्रीणि धारयेत् ।।५४।।

---

१. सूरूज के तापिनी आदि बारह गो कला होला आ ओकनीसन से जनमल रुद्राक्षन के संख्या बारह गो बाटे।

२. चनरमा आदि के अमृता आदि सोरह गो कलासन से ऊजर रंग के सोरह गो रुद्राक्ष उत्पन्न भईले।

३. अग्नि के दस गो कला बाटे। धूम्रार्चिष आदि ओ कलासन के रंग करिया बाटे। एही से दस गो करिया रंग के रुद्राक्ष सन के जनम भईल।

४. मुक्ति के चार गो भेद शास्त्रन में कहल गईल बाटे - सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य आ सायुज्य। एई में सायुज्य मुक्ति सगरी ले ऊपर बिया।

षट्त्रिंशद्धारयेन्मूर्ध्नि नित्यमेकादशानान्।
दशसप्तपञ्चवक्त्रान् षट् षट् कर्णद्वये वहेत्।।५५।।

षडष्टवदनान् कण्ठे द्वात्रिंशद्धारयेत् सदा।
पञ्चाशद्धारयेद् विद्वान् चतुर्वक्त्राणि वक्षसि।।५६।।

त्रयोदशमुखान् बाह्वोर्धरेत् षोडश षोडश।
प्रत्येकं द्वादश वहेन्नवास्यान् मणिबन्धयोः।।५७।।

चतुर्दशमुखं यज्ञसूत्रमष्टोत्तरं शतम्।
धारयेत् सर्वकालं तु रुद्राक्षं शिवपूजकः।।५८।।

भावार्थ : विद्वान् लोग एकमुखी रुद्राक्ष के शिखा (चिरकी) में धारन करे के चाही। दु, तीन आ बारहमुखी ए तीन प्रकार के रुद्राक्षन के सिर पर धारन करे के चाही। एकादशमुखी आ छत्तीसमुखी रुद्राक्ष के मस्तक पर आ दस, सात आ पाँचमुखी रुद्राक्षन के छह-छह के संख्या में दुनु कान में धारन करे के चाही। षट् आ अष्टमुखी रुद्राक्षन के बत्तीस के संख्या में कण्ठ में धारन करे के चाही। चारमुखी रुद्राक्ष के पचास गो रुद्राक्ष विद्वान् के अपना छाती पर धारन करे के चाही। तेरह गो मुखवाला सोरह-सोरह गो रुद्राक्ष दुनु बाँह में धारन करे के चाही। चौदहमुखी रुद्राक्ष के एक सौ आठ गो रुद्राक्षन के शिवजी के पूजा करे वाला पुजेरी के सब समय जनेऊ के रूप में धारन करे के चाही ।।५४-५८।।

एवं रुद्राक्षधारी यः सर्वकाले तु वर्तते।
तस्य पापकथा नास्ति मूढस्यापि न संशयः।।५९।।

भावार्थ : ए तरह से जवन सब समय रुद्राक्ष के धारन करेला, अईसन मूरूख (शास्त्र ना जानेवाला अतः दुराचारी) के भी पाप ना लागेला ।।५९।।

ब्रह्महा मद्यपायी च स्वर्णहृद् गुरुतल्पगः।
मातृहा पितृहा चैव भ्रूणहा कृतघातकः।।
रुद्राक्षधारणादेव मुच्यते सर्वपातकैः।।६०।।

भावार्थ : ब्राह्मन के मुवावेवाला, शराब के पीयेवाला, सोना के चोरावेवाला, गुरुजी के मेहरारू के साथ समागम करेवाला, माई बाबूजी के जे मुववले होखे, जे भ्रूण के मार डलले होखे ऊ पापी भी रुद्राक्ष के धारन कईला से सगरी पापन से छूट जाला ।।६०।।

दर्शनात् स्पर्शनाच्चैव स्मरणादपि पूजनात्।
रुद्राक्षधारणाल्लोके मुच्यन्ते पातकैर्जना:।।६१।।

भावार्थ : (रुद्राक्ष के) देखला, छुवला, ईयाद कईला, पूजा कईला आ ओकरा के धारन कईला से लोग पाप से मुक्त हो जाला ॥६१॥

ब्राह्मणो वान्त्यजो वापि मूर्खो वा पण्डितोऽपि वा।
रुद्राक्षधारणादेव मुच्यते सर्वपातकैः।।६२।।

भावार्थ : ब्राह्मन होखे आ चाहे छोट जात, मूरूख होखे आ चाहे पण्डित खाली रुद्राक्षधारन कईला से सगरी पापन से छूट जाले अर्थात् सगरी मानव जाति रुद्राक्ष धारन करे के अधिकारी बिया ॥६२॥

गवां कोटिप्रदानस्य यत्फलं भुवि लभ्यते।
तत्फलं लभते मर्त्यो नित्यं रुद्राक्षधारणात्।।६३।।

भावार्थ : पृथिवी पर एक करोड़ गाय के दिहला से जवन फल मिलेला, मनुष्य रुद्राक्ष के रोज धारन कईला से ओही फल से प्राप्त करेला ॥६३॥

मृत्युकाले च रुद्राक्षं निष्पीड्य सह वारिणा।
यः पिबेच्चिन्तयन् रुद्रं रुद्रलोकं स गच्छति।।६४।।

भावार्थ : मरे के बेरा रुद्राक्ष के पानी में पीस के जे रुद्र के ध्यान करत ओकरा के पीयेला ऊ रुद्रलोक के पावेला ॥६४॥

भस्मोद्धूलितसर्वाङ्गा धृतरुद्राक्षमालिकाः।
ये भवन्ति महात्मानस्ते रुद्रा नात्र संशयः।।६५।।

भावार्थ : जवन लोग सगरी देह में भसम रमवले आ रुद्राक्ष के माला के धारन कईले रहेला लो ऊ महान् आत्मा ही रुद्र कहलाला लो एई में कवनो संदेह नईखे ॥६५॥

नित्यानि काम्यानि निमित्तजानि
कर्माणि सर्वाणि सदापि कुर्वन्।
यो भस्मरुद्राक्षधरो यदि स्याद्
द्विजो न तस्यास्ति फलोपपत्तिः।।६६।।

भावार्थ : नित्य, काम्य आ नैमित्तिक सगरी करम के हमेशा करत भी जे बाह्मन भसम आ रुद्राक्ष धारन करेवाला होला ओकरा के ओकर करम के फल के भोगे ना परेला (अर्थात् ऊ मुक्त हो जाला) ॥६६॥

सर्वेषु वर्णाश्रमसंगतेषु
नित्यं सदाचारपरायणेषु।
श्रुतिस्मृतिभ्यामिह चोद्यमानो
विभूतिरुद्राक्षधरः समानः।।६७।।

भावार्थ : सगरी वर्णाश्रमवाला आ हमेशा सदाचार में लागल लोग के बीच भसम आ रुद्राक्ष धारन करेवाला मुनि आ स्मृति के द्वारा समान रूप से आदर के जोग होला।।६७।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ भक्तस्थले भस्मरुद्राक्षधारणस्थलप्रसङ्गो नाम सप्तमः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के भक्तस्थल में भस्मरुद्राक्षधारणस्थलप्रसङ्ग नामवाला सातवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।७।।

□□□

अष्टमः परिच्छेदः (आठवाँ परिच्छेद)

पञ्चाक्षरीजपस्थल - (८)

धृतश्रीभूतिरुद्राक्षः प्रयतो लिङ्गधारकः।
जपेत्पञ्चाक्षरीविद्यां शिवतत्त्वप्रबोधिनीम्।।१।।

भावार्थ : पञ्चाक्षरजपस्थल वर्णन— विभूति आ रुद्राक्ष धारन करेवाला, पवितर आ लिङ्ग के धारन करेवाला मनुष्य शिवतत्त्व के ज्ञान के करावेवाली पञ्चाक्षरी विद्या (पञ्चाक्षर मन्त्र = ॐ नमः शिवाय) के जप करे के चाही ।।१।।

शिवतत्त्वात् परं नास्ति यथा तत्त्वान्तरं महत्।
तथा पञ्चाक्षरीमन्त्रान्नास्ति मन्त्रान्तरं महत्।।२।।

भावार्थ : जवना लेखा शिवतत्त्व[1] से बढ़के अऊरी कवनो तत्त्व नईखे ओहींगा पञ्चाक्षर मन्त्र से बढ़िके दोसर कवनो मन्तर नईखे ।।२।।

ज्ञाते पञ्चाक्षरीमन्त्रे किं वा मन्त्रान्तरैः फलम्।
ज्ञाते शिवे जगन्मूले किं फलं देवतान्तरैः।।३।।

भावार्थ : पञ्चाक्षर मन्तर के ज्ञान होखला पर अऊरी दोसर मन्तर से कवन लाभ? संसार के कारनभूत शिव के ज्ञान होखला पर अऊरी देवतालोग के ज्ञान के कवन फल (अर्थात् कवनो ना) ।।३।।

सप्तकोटिषु मन्त्रेषु मन्त्रः पञ्चाक्षरो महान्।
ब्रह्मविष्ण्वादिदेवेषु यथा शम्भुर्महत्तरः।।४।।

भावार्थ : सात करोड़ मन्तर में ई पञ्चाक्षर मन्त्र ओहीं लेखा बाटे जेंगा ब्रह्माजी आ विसनुजी आदि देवतालोग में शिवजी महान् बानी ।।४।।

अशेषजगतां हेतुः परमात्मा महेश्वरः।
तस्य वाचकमन्त्रोऽयं सर्वमन्त्रैककारणम्।।५।।

---

१. शिवसरूप दू गो अक्षर में अकार ऋक् अऊरी साम के, इकार यजुष के, शकार अथर्व के एवं वकार व्याकरण के संग्रहरूप होखला से शिव पद वेदवेदाङ्ग के सार हटे एही से ऊ सबका ले उत्कृष्ट मन्त्र बाटे ।

भावार्थ : सगरी विश्व के कारन परमात्मा शिव बानी। ऊहाँ के वाचक ई मन्त्र सगरी मन्त्र के एकमात्र कारन बाटे ॥५॥

तस्याभिधानमन्त्रोऽयमभिधेयश्च स स्मृतः।
अभिधानाभिधेयत्वान्मन्त्रात् सिद्धः परः शिवः॥६॥

भावार्थ : ई मन्त्र ऊहाँ के वाचक कहल गईल बाटे आ ऊहाँ के (शिवजी) ए मन्त्र के वाच्य कहल गईल बानी। वाचक-वाच्य सम्बन्ध रूप मन्त्र होखला से परमशिव के सिद्धि होला ॥६॥

नमःशब्दं वदेत्पूर्वं शिवायेति ततः परम्।
मन्त्रः पञ्चाक्षरो ह्येष सर्वश्रुतिशिरोगतः॥७॥

भावार्थ : पहिले नमः शब्द कहे के चाही ओकरा बाद शिव। ई पञ्चाक्षर मन्त्र के कहे के चाही जवन सगरी वेदन के मस्तक बाटे ॥७॥

आदितः परिशुद्धत्वान्मलत्रयवियोगतः।
शिव इत्युच्यते शम्भुश्चिदानन्दघनः प्रभुः॥८॥

भावार्थ : चिदानन्दघन भगवान् शिवजी शुरुवे से ही शुद्ध आ (आणव, मायीय आ कार्म) तीन मल से रहित होखला के कारन शिवजी कहल जानी ॥८॥

आस्पदत्वादशेषाणां मङ्गलानां विशेषतः।
शिवशब्दाभिधेयो हि देवदेवस्त्रियम्बकः॥९॥

भावार्थ : विशेष रूप से सगरी मङ्गल के स्थान होखला के कारन ई देवाधिदेव महादेव त्र्यम्बक शिव शब्द के वाच्य बानी ॥९॥

शिव इत्यक्षरद्वन्द्वं परब्रह्मप्रकाशकम्।
मुख्यवृत्त्या तदन्येषां शब्दानां गुणवृत्तयः॥१०॥

भावार्थ : शिव ई दुगो अक्षर के समुच्चय मुख्य वृत्ति अर्थात् अभिधा के द्वारा परब्रह्म के प्रकाश बाटे। ओही से दूसर शब्दन के ऊ लक्षणा के द्वारा वाच्य होला ॥१०॥

तस्मान्मुख्यतरं नाम शिव इत्यक्षरद्वयम्।
सच्चिदानन्दरूपस्य शम्भोरमिततेजसः॥११॥

भावार्थ : एही कारन शिव ई दुगो अक्षर सच्चिदानन्दसरूप असीम तेजस्वी शम्भु के मुख्यतर नाम बाटे ॥११॥

एतन्नामावलम्बेन मन्त्रः पञ्चाक्षरः स्मृतः।
यस्मादतः सदा जप्यो मोक्षकाङ्क्षिभिरादरात्।।१२।।

यथाऽनादिर्महादेवः सिद्धः संसारमोचकः।
तथा पञ्चाक्षरो मन्त्रः संसारक्षयकारकः।।१३।।

भावार्थ : एही नाम के अवलम्बन कईला के कारन ई पञ्चाक्षर मन्त्र कहल गईल बाटे। एही खातिर मोक्ष के इच्छा रखेवाला ए मन्त्र के आदर के साथे जप करे के चाही। जवना तरह से अनादि महादेव संसार के मोचक के रूप में सिद्ध (परसिद्ध) बानी ओही तरह ई पञ्चाक्षर मन्त्र भी संसार के नाश करेवाला बाटे ॥१२-१३॥

पञ्चभूतानि सर्वाणि पञ्चतन्मात्रकाणि च।
ज्ञानेन्द्रियाणि पञ्चापि पञ्चकर्मेन्द्रियाणि च।।१४।।

पञ्चब्रह्माणि पञ्चापि कृत्यानि सह कारणैः।
बोध्यानि पञ्चभिर्वर्णैः पञ्चाक्षरमहामनोः।।१५।।

भावार्थ : ए पञ्चाक्षर महामन्त्र से पञ्चमहाभूत (पृथिवी, जल, अग्नि, वायु आ आकाश), पञ्चतन्मात्रा (रूप, रस, गन्ध, स्पर्श आ शब्द), पञ्च ज्ञानेन्द्रियाँ (श्रोत्र, त्वक्, जिह्वा, चक्षु आ घ्राण) पञ्चकर्मेन्द्रियाँ (वाक्, पाणि, पाद, पायु आ उपस्थ), पञ्चब्रह्म (ब्रह्माजी, विसनु, रुद्र, ईश्वर आ सदाशिव), पञ्चसादाख्य (सद्योजात, तत्पुरुष, वामदेव, अघोर आ ईशान) आ ए पाँच गो कारन के साथे पञ्चकृत्य (सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोधान आ अनुग्रह) बुझे के चाही ॥१४-१५॥

पञ्चधा पञ्चधा यानि प्रसिद्धानि विशेषतः।
तानि सर्वाणि वस्तूनि पञ्चाक्षरमयानि हि।।१६।।

भावार्थ : विशेष रूप से पाँच-पाँच करके जेतना चीज परसिद्ध बाटे ऊ सगरी पञ्चाक्षरमय बाटे ॥१६॥

ओंकारपूर्वो मन्त्रोऽयं पञ्चाक्षरमयः परः।
शैवागमेषु वेदेषु षडक्षर इति स्मृतः।।१७।।

भावार्थ : पाँच गो अक्षरवाला ई उत्कृष्ट मन्त्र पहिले ओंकार से जुड़ला से शैवागमन आ वेदन में षडक्षर (छह गो अक्षरवाला) कहल गईल बाटे ॥१७॥

मन्त्रस्यास्यादिभूतेन प्रणवेन महामनोः।
प्रबोध्यते महादेवः केवलश्चित्सुखात्मकः।।१८।।

भावार्थ : (ए) महामन्त्र आ एकरा न्यास के पहिले प्रणव (ॐ) जोड़ला से खाली चिदानन्द महादेव के ही सम्बोधन होला ॥१८॥

प्रणवेनैकवर्णेन परब्रह्म प्रकाश्यते।
अद्वितीयं परानन्दं शिवाख्यं निष्प्रपञ्चकम्।।१९।।

भावार्थ : एक वर्णवाला प्रणव (ओंकार) से अद्वितीय परानन्दसरूप प्रपञ्चरहित शिव नामके परब्रह्म प्रकाशित होला ॥१९॥

परमात्ममनुर्ज्ञेयः सोऽहंरूपः सनातनः।
जायते हंसयोर्लोपादोमित्येकाक्षरो मनुः।।२०।।

भावार्थ : 'सोऽहम्' (हम ऊहे हईं) के (सनातन) परमातमा के सनातन मन्त्र जाने के चाही। 'सोऽहम्' (हम ऊहे हईं) में से ह अऊरी स के लोप भईला से ओऽम् बचेला। ईहे एगो अक्षरवाला मन्त्र बाटे ॥२०॥

विशेष : 'सोऽहम्' में हकार सूरूज के बीज होखला से वेदक बाटे आ सकार चनरमा के बीज होखला से वेद्य बाटे। सकार आ हकार अर्थात् वेद्य आ वेदक के हटला से प्रकाशमात्र ही अवशिष्ट रहेला। ईहे ओऽम् निष्परपञ्च ब्रह्म के प्रतीक बाटे।

प्रणवेनैव मन्त्रेण बोध्यते निष्कलः शिवः।
पञ्चाक्षरेण मन्त्रेण पञ्चब्रह्मतनुस्तथा।।२१।।

निष्कलः संविदाकारः सकलो विश्वमूर्तितः।
उभयात्मा शिवो मन्त्रे षडक्षरमये स्थितः।।२२।।

भावार्थ : प्रणव मन्त्र (ओंकार) से खाली कला से रहित शिवजी के ज्ञान होला। पञ्चाक्षर मन्त्र में पञ्चब्रह्मात्मक देहरूपी शिवजी के ज्ञान होला। जहाँ ले षडक्षर मन्त्र के प्रश्न बाटे। ओईमें संविदाकार निष्कल आ विश्वमूर्ति सकल दुनु तरह के शिवरूप स्थित बाटे ॥२१-२२॥

विशेष : प्रणव के उपनिषदन में प्रपञ्च के साथे ब्रह्म कहल गईल बाटे बाँकि सच्चाई ईहे बाटे कि एईमें जवन परपञ्च बाटे ऊ बड़ा बारिक बाटे। एही से एकरा के निष्कल (कला से रहित) भी कहल जा सकेला। प्रणव बीज लेखा बाटे आ पञ्चाक्षरी विद्या ओकर पेड़ नीयर।

मूलं विद्या शिवः शैवं सूत्रं पञ्चाक्षरस्तथा।
एतानि नामधेयानि कीर्तितानि महामनोः।।२३।।

भावार्थ : ए महामन्त्र के मूल, विद्या, शिव, शैवसूत्र आ पञ्चाक्षर ई पाँच गो नाम कहल गईल बाटे ॥।२३॥

पञ्चाक्षरीमिमां विद्यां प्रणवेन षडक्षरीम्।
जपेत् समाहितो भूत्वा शिवपूजापरायणः।।२४।।

भावार्थ : शिवजी के पूजा में लागल मनुष्य के प्रणव (ओङ्कार) के साथ अर्थात् प्रणव के जोड़ के छह गो अछरवाला ए पञ्चाक्षरी विद्या के जप समाहित चित्त होके करे के चाही ॥२४॥

प्राणायामत्रयं कृत्वा प्राङ्मुखेदङ्मुखोऽपि वा।
चिन्तयन् हृदयाम्भोजे देवदेवं त्रियम्बकम्।।२५।।
सर्वालङ्कारसंयुक्तं साम्बं चन्द्रार्धशेखरम्।
जपेदेतां महाविद्यां शिवरूपामनन्यधीः।।२६।।

भावार्थ : पूरब कियोर मुँह करके चाहे उतर कियोर मुँह करके बईठ के तीन बेर प्राणायाम कईला के बाद साधक अपना हृदयकमल में पहिले सगरी अलङ्कार से युक्त पारबतीसहित तीन गो आँखवाला भगवान् चन्द्रचूड़ के ध्यान करे के चाही। ओकरा बाद एकाग्रचित्त होके ए शिवरूपा महाविद्या के जप करे के चाही ॥२५-२६॥

जपस्तु त्रिविधः प्रोक्तो वाचिकोपांशुमानसः।
श्रूयते यस्तु पार्श्वस्थैर्यथावर्णसमन्वयः।।२७।।

वाचिकः स तु विज्ञेयः सर्वपापप्रभञ्जनः।
ईषत्स्पृष्ट्वाधरपुटं यो मन्दमभिधीयते।।२८।।

पार्श्वस्थैसश्रुतः सोऽयमुपांशुः परिकीर्तितः।
अस्पृष्ट्वाधरमस्पन्दि जिह्वाग्रं योऽन्तरात्मना।।
भाव्यते वर्णरूपेण स मानस इति स्मृतः।।२९।।

भावार्थ : जप तीन प्रकार के बतावल गईल बाटे :- वाचिक, उपांशु आ मानस। जवन लगही बईठल लोग के वर्णक्रमानुसार सुनाई पड़े, सगरी पाप के नाश करेवाला ओ तरह के जप के वाचिक जप समझे के चाही। दुनु ओठ से छुवात जवन धीमे-धीमे कहल जाव आ लगे के लोग जेकरा के सुन ना सकेलो, के उपांशु जप कहल जाला। जवना में दुनु ओठ बिना छुवाईल मुँह के अन्दर जीभ ना हिले आ जेकर वर्णरूप में भीतरे-भीतरे भावना कईल जाला ओकरा के मानस जप कहल गईल बाटे ॥२७-२९॥

विशेष — हाँलकि ई सगरी जप वाचिक ही बाड़न सन। असली मानस जप मध्यमा राज्य में बिना घुसले सम्भव नईखे।

यावन्तः कर्मयज्ञाद्या व्रतदानतपांसि च।
सर्वे ते जपयज्ञस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्।।३०।।

भावार्थ : जेतना कर्मयज्ञ आदि बाटे, जेतना व्रत, दान आ तपरूप यज्ञ बाटे। ऊ सगरी जपजज्ञ के सोरहवाँ कला के बराबर भी नईखे ॥३०॥

माहात्म्यं वाचिकस्यैतज्जपयज्ञस्य कीर्तितम्।
तस्माच्छतगुणोपांशुः साहस्रो मानसः स्मृतः।।३१।।

भावार्थ : ई महामन्त्र के वाचिक आ उपांशु के अपेक्षा मानस जप श्रेष्ठ बाटे। ऊ ई भयानक संसार के नाश करेवाला बाटे ॥३१॥

वाचिकात् तदुपांशोश्च जपादस्य महामनोः।
मानसो हि जपः श्रेष्ठो घोरसंसारनाशकः।।३२।।

भावार्थ : ए महामन्त्र के वाचिक आ उपांशु के अपेक्षा मानस जप श्रेष्ठ बाटे। ई भयानक संसार के नाश करेवाला बाटे ॥३२॥

एतेष्वेतेन विधिना यथाभावं यथाक्रमम्।
जपेत् पञ्चाक्षरीमेतां विद्यां पाशविमुक्तये।।३३।।

भावार्थ : ई तीनु संस्कारन में से कवनो भी तरह से भक्तिभावना के साथे बतलावल गईल क्रम से भवपाश से मुक्ति पावे खातिर ए पञ्चाक्षर मन्त्र के जप करे के चाही ॥३३॥

अनेन मूलमन्त्रेण शिवलिङ्गं प्रपूजयेत्।
नित्यं नियमसम्पन्नः प्रयतात्मा शिवात्मकः।।३४।।

भावार्थ : शिवजी के भक्त के चाही कि ऊ विशुद्ध चित्तवाला होके नियमानुसार ए मूलमन्त्र से शिवलिङ्ग के रोज पूजा करे ॥३४॥

भक्त्या पञ्चाक्षरेणैव यः शिवं सकृदर्चयेत्।
सोऽपि गच्छेच्छिवस्थानं मन्त्रस्यास्यैव गौरवात्।।३५।।

भावार्थ : जवन ए पञ्चाक्षर मन्त्र से भक्तिपूर्वक शिवजी के एक बेर पूजा करेला ऊ भी ए मन्त्र के महिमा से शिवस्थान के ही जाला ॥३५॥

अब्भक्षा वायुभक्षाश्च ये चान्ये व्रतकर्शिताः।
तेषामेतैर्व्रतैर्नास्ति शिवलोकसमागमः।।३६।।

भावार्थ : जे लोग खाली पानी पीके आ हवा लेके व्रत करेले अथवा अऊरी दोसर तरह के व्रत करेवाला बा लो ओ लोग के ई व्रतसन के कईला से शिवलोक के प्राप्ति ना होला ।।३६।।

तस्मात्तपांसि यज्ञाश्च व्रतानि नियमास्तथा।
पञ्चाक्षरार्चनस्यैते कोट्यंशेनापि नो समाः।।३७।।

भावार्थ : एही से तपस्या, जज्ञ, नियम आ व्रत ई सब पञ्चाक्षर मन्त्र के (द्वारा शिवजी के) पूजन आ जप के करोड़वाँ भाग के बराबरो नईखे ।।३७।।

अशुद्धो वा विशुद्धो वा सकृत् पञ्चाक्षरेण यः।
पूजयेत् पतितो वापि मुच्यते नात्र संशयः।।३८।।

भावार्थ : अशुद्ध होखे आ चाहे विशुद्ध (अर्थात् जनमे से अशुद्ध होखे अथवा बाद में अशुद्ध हो गईल होखे) अथवा गिरल बुद्धि होखे, एके बेर पञ्चाक्षर से जे (शिव) के अर्चना करेला ऊ मुक्त हो जाला एईमें कवनो सन्देह नईखे ।।३८।।

सकृदुच्चारमात्रेण पञ्चाक्षरमहामनोः।
सर्वेषामपि जन्तूनां सर्वपापक्षयो भवेत्।।३९।।

भावार्थ : पञ्चाक्षर महामन्त्र के खाली एक बेर उच्चारन कईला से सगरी जीवलोग के पाप के नाश हो जाला ।।३९।।

अन्येऽपि बहवो मन्त्रा विद्यन्ते सकलागमे।
भूयो भूयः समभ्यासात् पुरुषार्थप्रदायिनः।।४०।।

एष मन्त्रो महाशक्तिरीश्वरप्रतिपादकः।
सकृदुच्चारणादेव सर्वसिद्धिप्रदायकः।।४१।।

भावार्थ : सगरी आगमसन में अऊरी मन्तर बाड़न सन किन्तु ऊ बेर-बेर अभ्यास कईला पर ही फल देले। ई मन्तर महाशक्तिसम्पन्न आ ईश्वर के वाचक होला। एही से एके बेर उच्चारन से ही ई सगरी सिद्धि सन के देला ।।४०-४१।।

पञ्चाक्षरीं समुच्चार्य पुष्पं लिङ्गे विनिक्षिपेत्।
यस्तस्य वाजपेयानां सहस्रफलमिष्यते।।४२।।

भावार्थ : जवन मनुष्य पञ्चाक्षर मन्तर के उच्चारन करत शिवलिङ्ग के ऊपर फूल के चढ़ावेला ओकरा हजार गो वाजपेय जज्ञ कईला के फल मिलेला ।।४२।।

अग्निहोत्रं त्रयो वेदा यज्ञाश्च बहुदक्षिणाः।
पञ्चाक्षरजपस्यैते कोट्यंशेनापि नो समाः।।४३।।

भावार्थ : अग्निहोत्र, तीनु वेद (के स्वाध्याय) आ ढेर दछिना वाला जज्ञ ई सगरी पञ्चाक्षर जप के करोड़वें भाग के भी बराबरो नईखे ।।४३।।

पुरा सानन्दयोगीन्द्रः शिवज्ञानपरायणः।
पञ्चाक्षरं समुच्चार्य नारकानुदतारयत्।।४४।।

भावार्थ : पुरान समय में शिवज्ञानपरायण सानन्द जोगीन्द्र पञ्चाक्षर मन्त्र (ॐ नमः शिवाय) के उच्चारन करके अट्ठाईस करोड़ नरकवासी लोग के उद्धार कईले रहनी ।।४४।।

सिद्ध्या पञ्चाक्षरस्यास्य शतानन्दः पुरा मुनिः।
नरकं स्वर्गमकरोत् सङ्गिरस्यापि पापिनः।।४५।।

भावार्थ : पुरान समय में शतानन्द नामके मुनि एही पञ्चाक्षर मन्त्र (ॐ नमः शिवाय) के द्वारा सङ्गिर नामक पापी के नरक के सरग बना देहनी ।।४५।।

उपमन्युः पुरा योगी मन्त्रेणानेन सिद्धिमान्।
लब्धवान् परमेशनाच्छैवशास्त्रप्रवक्तृताम्।।४६।।

भावार्थ : पुरान समय में उपमन्यु नामके जोगी एही मन्त्र से सिद्धि के पा के परमेसर में शैवशास्त्रन के प्रवक्तृता के पवले रहनी ।।४६।।

वसिष्ठवामदेवाद्या मुनयो मुक्तकिल्बिषाः।
मन्त्रेणानेन संसिद्धा महातेजस्विनोऽभवन्।।४७।।

भावार्थ : एही मन्तर के द्वारा वशिष्ठ, वामदेव आदि मुनिलोग पाप से रहित होके पूरा सिद्ध आ महातेजस्वी हो गईल लो ।।४७।।

ब्रह्मादीनां च देवानां जगत्सृष्ट्यदिकर्मणि।
मन्त्रस्यास्यैव माहात्म्यात् सामर्थ्यमुपजायते।।४८।।

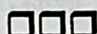
भावार्थ : जगत् के सृष्टि आदि (स्थिति आ संहार) काम में ब्रह्मा आदि (विसनुजी आ रुद्र) के सामर्थ्य भी एही मन्तर के महिमा से होला ।।४८।।

किमिह बहुभिरुक्तैर्मन्त्रमेवं महात्मा
प्रणवसहितमादौ यस्तु पञ्चाक्षराख्यम्।
जपति परमभक्त्या पूजयन् देवदेवं
स गतदुरितबन्धो मोक्षलक्ष्मीं प्रयाति।।४९।।

भावार्थ : अऊरी जियादे कहला से का फायदा? जवन महातमा प्रणव युक्त (ओङ्कार) एही पञ्चाक्षर मन्तर (ॐ नमः शिवाय) के साथे देवाधिदेव महादेव भगवान् शङ्करजी के पूजा करत जप करेला ऊहे पापरूपी बन्धन के नाश करके मोक्षरूपी ऐश्वर्य के पावेला ।।४९।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां
शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये
श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ
भक्तस्थले पञ्चाक्षरजपस्थलप्रसङ्गो
नाम अष्टमः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि ग्रन्थ के भक्तस्थल में पञ्चाक्षरजपस्थलप्रसङ्ग नामवाला आठवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।८।।



नवम: परिच्छेद: (नौवाँ परिच्छेद)

भक्तमार्गक्रियास्थल - (९)

भूतिरुद्राक्षसंयुक्तो लिङ्गधारी सदाशिव:।
पञ्चाक्षरजपोद्योगी शिवभक्त इति स्मृत:।।१।।

भावार्थ : भक्तमार्गक्रियास्थल वर्णन — भसम आ रुद्राक्ष से युक्त लिङ्ग के धारन करेवाला सदाशिव पञ्चाक्षर के जप में लागल रहेले। एही कारन ऊ शिवभक्त कहल गईल बाड़न अथवा जे आदमी हमेशा शिवपञ्चाक्षर जप के उद्यमी बाटे ऊहे शिवभक्त मानल गईल बाटे ।।१।।

श्रवणं कीर्तनं शम्भो: स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्।।२।।

एवं नवविधा भक्ति: प्रोक्ता देवेन शम्भुना।
दुर्लभा पापिनां लोके सुलभा पुण्यकर्मणाम्।।३।।

भावार्थ : भगवान् शंकर के कथा के सुनल, ओकरा के ईयाद कईल, ऊहाँ के पाँव के पूजा कईल, अर्चना कईल, वन्दना कईल, अपना के ऊहाँ के दास समझल, ऊनका के आपन संघतिया मानल आ अपना के पूरा ऊहाँ खातिर समर्पित कर दिहल :- एह तरह से भगवान् शंभुजी नव तरह के भक्ति के वर्णन कईल बानी। (ई भक्ति) संसार में पापीलोग खातिर दुर्लभ आ पुण्यकरम करेवाला लोग खातिर सुलभ बिया ।।२-३।।

अधमे चोत्तमे वापि यत्र कुत्रचिदूर्जिता।
वर्तते शाङ्करी भक्ति: स भक्त इति गीयते।।४।।

भावार्थ : अधम आ उत्तम जवन कवनो भी (आदमी) में शंकरजी के भक्ति तेज होला ऊ भक्त कहल जाला ।।४।।

भक्ति: स्थिरीकृता यस्मिन् म्लेच्छे वा द्विजसत्तमे।
शम्भो: प्रिय: स विप्रश्च न प्रियो भक्तिवर्जित:।।५।।

भावार्थ : जवन म्लेच्छ अथवा उत्तम बाह्मन में भक्ति स्थिर रूप से रहेले ऊ म्लेच्छ आ बाह्मन शिवजी के अत्यधिक प्यारा होला, जवन भक्ति के बिना होला ऊ प्रिय ना होला ।।५।।

सा भक्तिर्द्विविधा ज्ञेया बाह्याभ्यन्तरभेदतः।
बाह्या स्थूलान्तरा सूक्ष्मा वीरमाहेश्वरादृता।।६।।

भावार्थ : ऊ भक्ति आभ्यन्तर आ बाह्य भेद से दु प्रकार के जाने के चाही। स्थूल भक्ति बाह्य कहल जाले। सूक्ष्म भक्ति आभ्यन्तर कहल जाले। (ई सूक्ष्म भक्ति) अधिक आदरणीय होला (अथवा वीरमाहेश्वर के द्वारा आदर के प्राप्त भक्ति बाह्य और आभ्यन्तर भेद से दु तरह के होला। बाह्य भक्ति स्थूल आ आभ्यन्तर भक्ति सूक्ष्म होले।) ॥६॥

सिंहासने शुद्धदेशे सुरम्ये रत्नचित्रिते।
शिवलिङ्गस्य पूजा या सा बाह्या भक्तिरुच्यते।।७।।

भावार्थ : शुद्ध आ रमणीय स्थान में रत्नजटित सिंहासन के ऊपर शिवलिङ्ग के जवन पूजा कईल जाला, ऊ बाह्य भक्ति कहल जाला ॥७॥

लिङ्गे प्राणं समाधाय प्राणे लिङ्गं तु शाम्भवम्।
स्वस्थं मनस्तथा कृत्वा न किञ्चिच्चिन्तयेद् यदि।।८।।

साऽऽभ्यन्तरा भक्तिरिति प्रोच्यते शिवयोगिभिः।
सा यस्मिन् वर्तते तस्य जीवनं भ्रष्टबीजवत्।।९।।

भावार्थ : लिङ्ग में परान आ परान में लिङ्ग के समाहित करके मन के स्वस्थ रखत साधक यदि (शिव के अतिरिक्त) दोसर केहू के ध्यान नईखे करत त शिवयोगी लोग ओकरा के आभ्यन्तर भक्ति कहेला। ऊ भक्ति जेकरा भीतर होला ऊ भुजाईल बिया नीयर होला (अर्थात् जेंगा भुजाईल बिया में अंकुर ना होला ओही प्रकार ओकर फेर जनम ना होला) ॥८-९॥

बहुनात्र किमुक्तेन गुह्यात् गुह्यतरा परा।
शिवभक्तिर्न सन्देहस्तया युक्तो विमुच्यते।।१०।।

भावार्थ : ए विषय में अधिक कहला से का फायदा? शिवभक्ति परा आ गुह्य से भी गुह्यतर बिया। ओकरा से लागल मनुष्य मुक्त हो जाला एईमें कवनो तरह के सन्देह नईखे ॥१०॥

प्रसादादेव सा भक्तिः प्रसादो भक्तिसम्भवः।
यथैवाङ्कुरतो बीजं बीजतो वा यथाङ्कुरः।।११।।

भावार्थ : ऊ भक्ति प्रसाद अर्थात् किरिपा से मिलेला। प्रसाद भक्ति में जनम लेवेला। जवना तरह से बिया से अंकुर आ अंकुर से बिया जनम लेला (ओही तरह के सम्बन्ध भक्ति आ किरिपा में बाटे अर्थात् दुनु अनादि बाड़न सन) ॥११॥

प्रसादपूर्विका येयं भक्तिर्मुक्तिविधायिनी।
नैव सा शक्यते प्राप्तुं नरैरेकेन जन्मना।।१२।।

भावार्थ : जवन भक्ति प्रसाद के बाद मिलेले ऊ मुक्ति प्रदान करेले। एह प्रकार के भक्ति मनुष्य लोग एक जनम में ना प्राप्त कर सकेला लो ॥१२॥

अनेकजन्मशुद्धानां श्रौतस्मार्तानुवर्तिनाम्।
विरक्तानां प्रबुद्धानां प्रसीदति महेश्वरः।।१३।।

भावार्थ : जवन लोग अनेक जनम में (उत्तम करम करके) शुद्ध होला लो, वेद, पुरान आ स्मृति के द्वारा कहल मार्ग पर चलेला लो, विरागयुक्त आ ज्ञानी बा लो, परमेसर ओही लोग पर किरिपा करेनी ॥१३॥

प्रसन्ने सति मुक्तोऽभून्मुक्तः शिवसमो भवेत्।
अल्पभक्त्यापि यो मर्त्यस्तस्य जन्मत्रयात्परम्।।१४।।

भावार्थ : (शिवजी के) खुश भईला पर मनुष्य मुक्त हो जाला। मुक्त होके शिवजी के नीयर हो जाला। जवन मनुष्य तनिको भी भक्ति से लागल रहेला ओकरा तीन जनम के बाद पर (अर्थात् मुक्ति) के प्राप्ति हो जाला ॥१४॥

न योनियन्त्रपीडा वै भवेन्नैवात्र संशयः।
साङ्गा न्यूना च या सेवा सा भक्तिरिति कथ्यते।।१५।।

भावार्थ : (अईसन शिवजी के भक्त के) गरभ में रहला के दुःख ना झेले के पड़ेला। एईमें कवनो सन्देह नईखे। पहिले कहल नव तरह के अङ्गोपाङ्ग के साथे जवन कम सेवा बाटे ओकरा के अल्पभक्ति कहल गईल बाटे ॥१५॥

सा पुनर्भिद्यते त्रेधा मनोवाक्कायसाधनैः।
शिवरूपादिचिन्ता या सा सेवा मानसी स्मृता।।
जपादि वाचिकी सेवा कर्मपूजा च कायिकी।।१६।।

भावार्थ : मन, वाणी आ देह रूपी तीनु साधन के आधार पर ऊ भक्ति फेर (मानसिक, वाचिक आ दैहिक भेद से) तीन तरह के हो जाले। शिवजी के रूप आदि (रंग, स्थान, आभरण, वाहन, गुण, लीला आदि) के चिन्तन कईल मानसिक सेवा कहल जाले। जप आदि वाचिकी सेवा आ करम के द्वारा पूजा कायिकी भक्ति बाटे ॥१६॥

बाह्यमाभ्यन्तरं चैव बाह्याभ्यन्तरमेव च।
मनोवाक्कायभेदैश्च त्रिधा तद्भजनं विदुः।।१७।।

भावार्थ : विद्वान् लोग मन, वाणी आ देह से तीन तरह के भक्ति के मानेला लो। ऊ भक्ति बाह्य, आभ्यन्तर आ बाह्याभ्यन्तर भेद से तीन तरह के बिया ॥१७॥

मनो महेशध्यानाढ्यं नान्यध्यानरतं मनः।
शिवनामरता वाणी वाङ्मता चैव नेतरा ।।१८।।

लिङ्गैः शिवस्य चोद्दिष्टैस्त्रिपुण्ड्रादिभिरङ्कितः।
शिवोपचारनिरतः कायः कायो न चेतरः।।१९।।

भावार्थ : मन महेश्वर के ध्यान से भरल रहे ना कि अऊरी केहू के ध्यान से, वाणी शिवजी के ही नाम के जप कीर्तन करे अऊरी दोसरा के नाम के ना, शास्त्र में कहल त्रिपुण्ड आदि शिव के लिङ्ग से युक्त शिवजी के पूजा में लागल देह होखे ना कि अऊरी दोसर व्यापार में लागल होखे (त ई मानसिक, वाचिक आ कायिक भक्ति होले) ॥१८-१९॥

अन्यात्मविदितं बाह्यं शम्भोरभ्यर्चनादिकम्।
तदेव तु स्वसंवेद्यमाभ्यन्तरमुदाहृतम्।।
मनो महेशप्रवणं बाह्याभ्यन्तरमुच्यते।।२०।।

भावार्थ : शिवजी के जवना अभ्यर्चन आदि के दोसर लोग भी जानेला, देखेला ऊ बाह्य पूजा होले। अपना मन में अपना द्वारा कईल गईल पूजा जेकरा के खाली पूजा करेवाला ही जानेला ई आभ्यन्तर पूजा कहल गईल बाटे। अपना मन के शिवजी में लगा दिहल बाह्याभ्यन्तर पूजा कहल गईल बाटे ॥२०॥

पञ्चधा कथ्यते सद्भिस्तदेव भजनं पुनः।
तपः कर्म जपो ध्यानं ज्ञानं चेत्यनुपूर्वकम्।।२१।।

भावार्थ : ऊ भक्ति फेर सन्तन के द्वारा पाँच तरह से कहल गईल बिया। ऊ क्रमशः तपस्या, कर्म, जप, ध्यान आ ज्ञान बाड़न ॥२१॥

शिवार्थे देहसंशोषस्तपः कृच्छ्रादि नो मतम्।
शिवार्चा कर्म विज्ञेयं बाह्यं यागादि नोच्यते।।२२।।

भावार्थ : शिवजी के खातिर देह के सुखावल जप कहाला ना कि कृच्छ्र[1] (बरत) आदि। शिवजी के लिङ्ग के पूजा के ही कर्म समझे के चाही। बाह्य याग आदि कर्म ना कहाला ॥२२॥

---

१. गाय के मूत, गोबर, गाय के दूध, गाये के घी आ कुश के जल के पीयल आ एक रात उपासे रहल कृच्छ्र बरत कहल जाला।

जपः पञ्चाक्षराभ्यासः प्रणवाभ्यास एव वा।
रुद्राध्यायादिकाभ्यासो न वेदाध्ययनादिकम्।।२३।।
ध्यानं शिवस्य रूपादिचिन्ता नात्मादिचिन्तनम्।
शिवागमार्थविज्ञानं ज्ञानं नान्यार्थवेदनम्।।२४।।
इति पञ्चप्रकारोऽयं शिवयज्ञः प्रकीर्तितः।

भावार्थ : पञ्चाक्षर मन्त्र (ॐ नमः शिवाय) अथवा प्रणव के अभ्यास कईल जप कहल जाला अथवा रुद्राष्टाध्यायी के पाठ भी ना कि वेद के पाठ जप के कोटि में आवेला। शिव के सरूप आदि के चिन्तन कईल ध्यान बाटे ना कि अपना आत्मा आदि के (चिन्तन कईल ध्यान बाटे)। शैवागमन के अरथ के जानल विज्ञान बाटे ना कि सांख्य आदि विषयन के जानल विज्ञान बाटे। एह तरह से ई शिवजप पाँच तरह से कहल गईल बाटे ॥२२-२४॥

अनेन पञ्चयज्ञेन यः पूजयति शङ्करम्।
भक्त्या परमया युक्तः स वै भक्त इतीरितः।।२५।।

भावार्थ : ए पाँच गो जज्ञ से जे शिवजी के पूजा करेला, परमभक्ति से युक्त उहे भक्त कहल गईल बाटे ॥२५॥

पूजनाच्छिवभक्तस्य पुण्या गतिरवाप्यते।
अवमानान्महाघोरो नरको नात्र संशयः।।२६।।

भावार्थ : शिव भक्त के पूजन से उत्तम गति मिलेला। ओकरा अपमान से महा भयंकर नरक मिलेला। एईमें संशय नईखे ॥२६॥

शिवभक्तो महातेजाः शिवभक्तिपराङ्मुखान्।
न स्पृशेन्नैव वीक्षेत न तैः सह वसेत् क्वचित्।।२७।।

भावार्थ : महातेजस्वी शिवजी के भक्त के चाही कि ऊ शिवभक्ति से अगला रहेवाला आदमीसन से ना छुवाव, ना ओकरा के देखे आ नाही ओकरा साथे कहीं निवास करे काहे से कि ओकनी के छुवला आदि से शिवभक्त के तेज क्षीण हो जाला ॥२७॥

यदा दीक्षाप्रवेशः स्याल्लिङ्गधारणपूर्वकः।
तदाप्रभृति भक्तोऽसौ पूजयेत् स्वागमस्थितान्।।२८।।

भावार्थ : लिङ्गधारणपूर्वक जब (शिवभक्त के) दीक्षा हो जाव तब से ई भक्त अपना (अर्थात् शैव) आगम में श्रद्धा विश्वास रखेवाला के पूजा कईल करे ॥२८॥

स्वमार्गाचारनिरताः सजातीयाँ द्विजास्तु ये।
तेषां गृहेषु भुञ्जीत नेतरेषां कदाचन।।२९।।

भावार्थ : जवन ब्राह्मन अपना रास्ता आ अपना आचार में लागल रहला से सजातीय बाटे भक्त के ओही के घरे भोजन करे के चाही कबो भी दोसरा (शैव से अलगा वैष्णव आदि) के घरे भोजन ना करे के चाही ।।२९।।

स्वमार्गाचारविमुखैर्भविभिः प्राकृतात्मभिः।
प्रेषितं सकलं द्रव्यमात्मलीनमपि त्यजेत्।।३०।।

भावार्थ : अपना रास्ता आ आचार से विमुख संसारी लोग के द्वारा दिहल गईल अन्न आदि यदि अधिकार में भी होखे तब भी ओकरा के तियाग देबे के चाही ।।३०।।

नार्चयदेन्यदेवांस्तु न स्मरेन्न च कीर्तयेत्।
न तन्निवेद्यमश्नीयाच्छिवभक्तो दृढव्रतः।।३१।।

भावार्थ : दृढ़व्रती शिवभक्त के दोसर देवतालोग के ना त पूजा करे चाही ना ही स्मरन करे के चाही आ नाही कीर्तन करे के चाही । दोसर देवतालोग के चढ़ावल नैवेद्य के भी ना खाये के चाही ।।३१।।

यद्गृहेष्वन्यदेवोऽस्ति तद्गृहाणि परित्यजेत्।
नान्यदेवार्चकान् मर्त्यान् पूजाकाले निरीक्षयेत्।।३२।।

भावार्थ : जवना घर में दोसर देवतालोग के स्थापना कईल गईल होखे ओ घर के छोड़ देबे के चाही । शिवपूजा के समय दोसर देवता के पूजा करेवाला मनुष्य लोग के ना देखे के चाही ।।३२।।

सदा शिवैकनिष्ठानां वीरशैवाध्ववर्तिनाम्।
नहि स्थावरलिङ्गनां निर्माल्याद्युपयुज्यते।।३३।।

भावार्थ : जे सदाशिव के प्रति श्रद्धाविश्वास से युक्त बाटे, वीरशैव मार्ग पर चलेवाला बाटे ओही के माल्ला आदि पहिरावल उचित बाटे, स्थावर लिङ्ग (अर्थात् पत्थर आदि से निर्मित लिङ्ग के पहिरावल उचित नईखे ।।३३।।

यत्र स्थावरलिङ्गनामपायः परिवर्तते।
अथवा शिवभक्तानां शिवलाञ्छनधारिणाम्।।३४।।

तत्र प्राणान् विहायापि परिहारं समाचरेत्।
शिवार्थं मुक्तजीवश्चेच्छिवसायुज्यमाप्नुयात्।।३५।।

भावार्थ : जहवाँ स्थावर लिङ्ग के अथवा शिवजी के चिह्न भसम आदि धारन करेवाला के विनाश होत देखाई पड़े ओईजा परान के भी छोड़के ओकर निराकरण करे के चाही। जे शिवजी खातिर आपन परान के तियाग करेला ऊ शिवसायुज्य के प्राप्त करेला ॥३४-३५॥

शिवनिन्दाकरं दृष्ट्वा घातयेदथवा शपेत्।
स्थानं वा तत्परित्यज्य गच्छेद्यद्यक्षमो भवेत्॥३६॥

भावार्थ : शिवजी के बुराई करेवाला के देखके या त ओकरा के मुआ डाले आ चाहे डाँट-फटकार लगावे के चाही आ यदि ऊ ई दुनु काम में समरथ ना होखे त आपन कान के बन्द करके ओईजा से चल जाव ॥३६॥

यत्र चाचारनिन्दाऽस्ति कदाचित्तत्र न व्रजेत्।
यद्गृहे शिवनिन्दाऽस्ति तद्गृहं तु परित्यजेत्॥३७॥

भावार्थ : जहवाँ शैवाचार के बुराई होला ओईजा कबो भी ना जाए के चाही। जवना घर में शिवजी के बुराई होत होखे ओ घर के छोड़ देबे के चाही ॥३८॥

यः सर्वभूताधिपतिं विश्वेशानं विनिन्दति।
न तस्य निष्कृतिः शक्या कर्तुं वर्षशतैरपि॥३८॥

भावार्थ : जे सगरी परानी लोग के स्वामी विश्व के भगवान् के बुराई करेला ओकर प्रायश्चित्त सई बरिस में भी नईखे कईल जा सकत ॥३८॥

शिवपूजापरो भूत्वा पूर्वकर्म विसर्जयेत्।
अथवा पूर्वकर्म स्यात् सा पूजा निष्फला भवेत्॥३९॥

भावार्थ : शिवजी के पूजा में तत्पर होके दोसर पहिलका करम (अर्थात् दोसरा तरह के उपासना आदि) के तियाग देबे के चाही। यदि (शिवजी के पूजा के साथे) पहिलका करम के अभ्यास होत होखे त ऊ शिवजी के पूजा निष्फल हो जाले ॥३९॥

उत्तमां गतिमाश्रित्य नीचां वृत्तिं समाश्रितः।
आरूढपतितो ज्ञेयः सर्वकर्मबहिष्कृतः॥४०॥

भावार्थ : (शिवपूजा रूपी) उत्तम गति के प्राप्त करके भी नीच वृत्ति (अर्थात् नीच कोटि के अर्चन आ पूजन) के जे अपनावेला ओकरा के आरुढ़पतित (अर्थात् उच्च पद से गिरल) आ सगरी करम से बहिष्कृत समझे के चाही ॥४०॥

पञ्चाक्षरोपदेशी च नरस्तुतिकरो यदि।
सोऽलिङ्गी स दुराचारी कुकविः स तु विश्रुतः॥४१॥

भावार्थ : पञ्चाक्षर (ॐ नमः शिवाय) के उपदेश प्राप्त करेवाला साधक यदि मनुष्यलोग के स्तुति करे त ऊ अलिङ्गी, दुराचारी आ कुकवि के रूप में विख्यात होला ।।४१।।

चर्मपात्रे जलं तैलं न ग्राह्यं भक्तितत्परैः।
गृह्यते यदि भक्तेन रौरवं नरकं व्रजेत् ।।४२।।

भावार्थ : (शिवजी) के भक्ति में लागल लोगन के चाही कि ऊ चमड़ा के बरतन में जल आ तेल के ग्रहण ना करे। यदि शिवजी के भक्त ग्रहण करता त ऊ रौरव नरक में जाला ।।४२।।

न तस्य सूतकं किञ्चित्प्राणलिङ्गाङ्गसङ्गिनः।
जन्मनोऽत्थं मृतोत्थं च विद्यते परमार्थतः।।४३।।

भावार्थ : जवन प्राणलिङ्गधारी बाटे ओकरा परमार्थ रूप से जननाशौच (जनम लेहला के अशौच) अथवा मरणाशौच (मुवला के अशौच) तनिको भी ना लागेला ।।४३।।

लिङ्गार्चनरतायाश्च ऋतौ नार्या न सूतकम्।
तथा प्रसूतिकायाश्च सूतकं नैव विद्यते।।४४।।

भावार्थ : हमेशा शिवजी के लिङ्ग के पूजा करेवाली स्त्री रजस्वला होखला पर भी अशुद्ध ना होले। लईका होखला पर भी ओकरा जनमला के सूतक ना लागेला ।।४४।।

गृहे यस्मिन् प्रसूता स्त्री सूतकं नात्र विद्यते।
शिवपादाम्बुसंस्पर्शात् सर्वपापं प्रणश्यति।।४५।।

भावार्थ : अईसन मेहरारू जवन घरही पर लईका के जनम देले ओ घर में भी सूतक ना लागेला। शिवजी के गोड़ से छुवाईल जल से सगरी पाप नष्ट हो जाले (अथवा जवना घर में शिव के भक्ति करेवाली स्त्री शिव के पूजा करत रहेले ऊ घर कवनो भी प्रसूता के प्रसव से अशुद्ध ना होला) ।।४५।।

शिवस्थानानि तीर्थानि विशिष्टानि शिवार्चकः।
शिवयात्रोत्सवं नित्यं सेवेत परया मुदा।।४६।।

भावार्थ : शिवजी के पूजा करेवाला भक्त के शिव स्थानवाला विशिष्ट तीर्थन के आ शिवयात्रा अऊरी शिव के उत्सव के परम आनन्द के साथ नित्य सेवन करे के चाही ।।४६।।

शिवक्षेत्रोत्सवमहायात्रादर्शनकाङ्क्षिणाम्।
मार्गेऽन्नपानदानं च कुर्यान्माहेश्वरो जनः।।४७।।

भावार्थ : शिव के भक्तलोग के चाही कि ऊ शिवक्षेत्र में होखेवाला उत्सव अथवा शिवक्षेत्र में जातरा के इच्छा रखेवाला के रास्ता में अन्न, हल आदि के दान करे ।।४७।।

नान्नतोयसमं दानं न चाहिंसापरं तपः।
तस्मान्माहेश्वरो नित्यमन्नतोयप्रदो भवेत्।।४८।।

भावार्थ : अन्न आ जल के दान से बढ़के कवनो दान नईखे। अहिंसा से बढ़के कवनो तप नईखे। एही कारन शिव के भक्त के चाही कि ऊ रोज अन्न आ जल के दान करे ।।४८।।

स्वमार्गाचारवर्तिभ्यः स्वजातिभ्यः सदाव्रती।
दद्यात्तेभ्यः समादद्यात् कन्यां कुलसमुद्भवाम्।।४९।।

भावार्थ : हमेशा शिव के बरत करेवाला अपना जाति आ अपना सम्प्रदाय के आचार के पालन करेवाला लोग खातिर अपना कन्या के दान करे आ ओही के कुल में उत्पन्न कन्या से बियाह करे ।।४९।।

एवमाचारसंयुक्तो वीरशैवो महाव्रती।
पूजयेत्परया भक्त्या गुरुं लिङ्गं च सन्ततम्।।५०।।

भावार्थ : एह प्रकार के आचार से युक्त महाव्रती वीरशैव अत्यन्त भक्ति के साहे गुरु आ शिवलिङ्ग के पूजा करे ।।५०।।

उभयस्थलम् - (१०)

गुरोरभ्यर्चनेनापि साक्षादभ्यर्चितः शिवः।
तयोर्नास्ति भिदा किञ्चिदेकत्वात्तत्त्वरूपतः।।५१।।

भावार्थ : उभयस्थल वर्णन— गुरु के पूजा कईला से भी भगवान् शिवजी पूजित होखेनी। ऊ दुनु (गुरुजी आ शिवजी) में तनिको अन्तर नईखे काहे से कि तात्त्विक रूप से ऊ दुनु एकही बानी ।।५१।।

यथा देवे जगन्नाथे सर्वानुग्रहकारके।
तथा गुरुवरे कुर्यादुपचारान् दिने दिने।।५२।।

भावार्थ : (भक्त) जवन प्रकार सबका ऊपर किरिपा करेवाला विश्व के स्वामी शिवजी के पूजा करेला ओही प्रकार ओकरा रोजे श्रेष्ठ गुरुजी के भी पूजा करे के चाही ।।५२।।

अप्रत्यक्षो महादेवः सर्वेषामात्ममायया।
प्रत्यक्षो गुरुरूपेण वर्तते भक्तिसिद्धये।।५३।।

भावार्थ : (जवन) महादेव अपना माया से सबका खातिर अप्रत्यक्ष बानी (ऊहे) भक्ति के सिद्धि के खातिर गुरुरूप से प्रत्यक्ष बानी ।।५३।।

शिवज्ञानं महाघोरसंसारार्णवतारकम्।
दीयते येन स गुरुः कस्य वन्द्यो न जायते।।५४।।

भावार्थ : जेकरा द्वारा महा भयंकर संसाररूपी समुन्दर के पार ले जाए वाला शिवजी के ज्ञान दिहल जाला ऊ गुरुजी केकरा खातिर वन्दनीय नईखी (अर्थात् सबका खातिर पूज्य बानी) ।।५४।।

यत्कटाक्षकलामात्रात् परमानन्दलक्षणम्।
लभ्यते शिवरूपत्वं स गुरुः केन नार्चितः।।५५।।

भावार्थ : जेकरा किरिपा कटाक्ष के एक कला से परम आनन्द सरूप शिवभाव के लाभ होला ओ गुरुजी केकें हवन पूजा ना करेला (अर्थात् सगरी लोग पूजा करेला) ।।५५।।

हितमेव चरेन्नित्यं शरीरेण धनेन च।
आचार्यस्योपशान्तस्य शिवज्ञानमहानिधेः।।५६।।

भावार्थ : (भक्त के चाही कि ऊ) देह आ धन से उपशान्त (अर्थात् राग आ द्वेष से रहित) आ शिवज्ञान के महा समुन्दर सरूप गुरु के रोज हित करे ।।५६।।

गुरोरज्ञां न लङ्घेत सिद्धिकामी महामतिः।
तदाज्ञालङ्घनेनापि शिवाज्ञाच्छेदको भवेत्।।५७।।

भावार्थ : सिद्धि के चाहेवाला महामतिमान् (शिष्य कभी भी) गुरु के आज्ञा के उल्लंघन ना करे। ऊहाँ के आज्ञा के उल्लंघन कईला से ऊ शिवजी के आज्ञा के उल्लंघन करेवाला हो जाला ।।५८।।

त्रिविधसम्पत्तिस्थल - (११)

यथा गुरौ यथा लिङ्गे भक्तिमान् परिवर्तते।
जङ्गमे च तथा नित्यं भक्तिं कुर्याद्विचक्षणः।।५८।।

भावार्थ : त्रिविधसम्पत्तिस्थल वर्णन— भक्तिमान् आ बुद्धिमान् (साधक) के चाही कि ऊ जईसन गुरु आ लिङ्ग के प्रति भक्तिपूर्ण आचरण करेला ओही प्रकार जंगम (शिवजोगी) के प्रति भी रोजे भक्ति करे ॥५८॥

एक एव शिवः साक्षात् सर्वानुग्रहकारकः।
गुरुजङ्गमलिङ्गात्मा वर्तते भुक्तिमुक्तिदः।।५९।।

भावार्थ : सबका खातिर किरिपा करेवाला आ भोग आ मोक्ष दुनु के देबेवाला एक ही शिवजी गुरु, जंगम आ लिङ्ग के रूप में बेवहार कर रहल बानी (अईसन समझे के चाही) ॥५९॥

लिङ्गं च द्विविधं प्रोक्तं जङ्गमाजङ्गमात्मना।
अजङ्गमे यथा भक्तिर्जङ्गमे च तथा स्मृता।।६०।।

भावार्थ : जङ्गम आ अजङ्गम (स्थावर) के रूप में लिङ्ग दु प्रकार के कहल गईल बाटे। अजङ्गम के प्रति जईसन भक्ति होला जङ्गम के प्रति भी ओईसने भक्ति मानल गईल बाटे ॥६०॥

अजङ्गमं तु यल्लिङ्गं मृच्छिलादिविनिर्मितम्।
तद्वरं जङ्गमं लिङ्गं शिवयोगीति विश्रुतम्।।६१।।

भावार्थ : जवन अजङ्गम (अर्थात् स्थावर) लिङ्ग बाटे ऊ माटी अथवा पत्थर आदि से बनल होला। जङ्गम लिङ्ग ओकरा अपेक्षा श्रेष्ठ होला आ ऊ शिवजोगी के नाम से प्रसिद्ध होला ॥६१॥

अचरे मन्त्रसंस्काराल्लिङ्गे वसति शङ्करः।
सदाकालं वसत्येव चरलिङ्गे महेश्वरः।।६२।।

भावार्थ : श्रेष्ठता के कारन बतलावत बानी— स्थावर लिङ्ग में शिवजी के निवास मन्त्रन के द्वारा ओकरा संस्कार कईला के कारन होला किन्तु चरलिङ्ग (अर्थात् शिवजोगी) में महेश्वर (बिना संस्कार आदि के) निवास करेनी ॥६२॥

शिवयोगिनि यद्दत्तं तदक्षयफलं भवेत्।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन तस्मै देयं महात्मने।।६३।।

यत्फलं लभते जन्तुः पूजया शिवयोगिनः।
तदक्षयमिति प्रोक्तं सकलागमपारगैः।।६४।।

भावार्थ : जवन कुछु शिवजोगी के दिहल जाला ऊ अक्षय (कबो नाश ना होखेवाला) फलकारक होला एही से सगरी प्रयास करके ओ महात्मा (शिवजोगी) के देबे के चाही। शिवजोगी के पूजा से जीव जवना फल के पावेला, सगरी आगम के विद्वान् ओ फल के अक्षय (कबो नाश ना होखेवाला) मानेला लो ॥६३-६४॥

नावमन्येत कुत्रापि शिवयोगिनमागतम्।
अवमानाद्भवेत्तस्य दुर्गतिश्च न संशयः।।६५।।

भावार्थ : अपना सोझा आइल शिवजोगी के कबो भी अपमान ना करे के चाही। अपमान कईला से ओकर दुरगति होई, ई निश्चित बाटे ॥६५॥

शिवयोगी शिवः साक्षादिति कैङ्कर्यभक्तितः।
पूजयेदादरेणैव यथा लिङ्गं यथा गुरुः।।६६।।

भावार्थ : शिवयोगी साक्षाते शिवजी हई— अईसन मानके सेवक भाव से जईसन लिङ्ग आ गुरुजी के ओईसनही आदरपूर्वक ओ (शिवजोगी) के पूजा करे के चाही ॥६६॥

चतुर्विधसारायस्थल (प्रसादस्वीकारस्थल) - (१२)

पादोदकं यथा भक्त्या स्वीकरोति महेशितुः।
तथा शिवात्मनोर्नित्यं गुरुजङ्गमयोरपि।।६७।।

भावार्थ : **चतुर्विध सारायस्थल वर्णन**— (साधक) जवना तरह से भगवान् शंकर के चरणोदक भक्ति के साथे ग्रहण करेला ओही लेखा रोजे ऊ गुरु आ जंगम (अर्थात् शिवजोगी) के चरणोदक के लेबे के चाही ॥६७॥

सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वपावनपावनम्।
सर्वसिद्धिकरं पुंसां शम्भोः पादाम्बुधारणम्।।६८।।

भावार्थ : चुंकि शंकर के चरणाम्बु लिहल सगरी मंगल सन के मंगल, सगरी पवित्र के पवित्र करेवाला आ मनुष्य लोग खातिर सगरी सिद्धि सन के देबेवाला बाटे (एही से ओकरा के रोजे लेबे के चाही) ॥६८॥

शिरसा धारयेद्यस्तु पत्रं पुष्पं शिवार्पितम्।
प्रतिक्षणं भवेत्तस्य पौण्डरीकक्रियाफलम्।।६९।।

---

१. अहरहरभ्यर्च्य विश्वेश्वरं लिङ्गं तत्र रुद्रसूक्तैरभिषिच्य तदेव स्नपन्यः त्रिःपीत्वा महापातकेभ्यो विमुच्यते। भस्मजाबालोपनिषद्।

भावार्थ : जवन भक्त शिवजी के चढ़ावल पत्र, फूल सिर पर धारन करेला ओकरा प्रतिक्षण पौण्डरीक क्रिया (अर्थात् पौण्डरीक भाग) के फल मिलेला ॥६९॥

भुञ्जीयाद् रुद्रभुक्तान्नं रुद्रपीतं जलं पिबेत्।
रुद्राघ्रातं सदा जिघ्रेदिति जाबालिकी श्रुतिः।।७०।।

भावार्थ : रुद्र के चढ़ावल अन्न के भोजन करे के चाही। रुद्र के चढ़ावल जल के पीये के चाही। रुद्र के द्वारा सूँघल अर्थात् रुद्र के चढ़ावल गईल (फूल) के सूँघे के चाही अईसन जाबालोपनिषद्[१] में कहल गईल बाटे ॥७०॥

अर्पयित्वा निजे लिङ्गे पत्रं पुष्पं फलं जलम्।
अन्नाद्यं सर्वभोज्यं च स्वीकुर्याद् भक्तिमान्नरः।।७१।।

भावार्थ : भक्ति करेवाला मनुष्य के चाही कि ऊ पत्र, फूल, फल, जल आ अन्न आदि सगरी खायेवाला चीज के अपना इष्ट लिङ्ग के चढ़ावला के बाद ही गरहन करे ॥७१॥

गुरुत्वात् सर्वभूतानां शम्भोरमिततेजसः।
तस्मै निवेदितं सर्वं स्वीकार्यं तत्परायणैः।।७२।।

भावार्थ : सगरी प्राणिलोग के अपेक्षा अमित तेजस्वी शिवजी के श्रेष्ठ होखला के कारन ऊहाँ के निवेदित सगरी कुछु ऊहाँ के भगतन के द्वारा स्वीकार करे के चाही ॥७२॥

ये लिङ्गधारिणो लोके ये शिवैकपरायणाः।
तेषां तु शिवनिर्माल्यमुचितं नान्यजन्तुषु।।७३।।

भावार्थ : ई संसार में जवन लोग शिवलिङ्ग के धारन करेवाला होला लो ऊ जवन खाली शिवजी के भगत बा लो ओ लोग खातिर शिव के परसाद लिहल उचित बाटे अऊरी जीव लोग खातिर नईखे ॥७३॥

अन्नजाते तु भक्तेन भुज्यमाने शिवार्पिते।
सिक्थे सिक्थेऽश्वमेधस्य यत्फलं तदवाप्यते।।७४।।

भावार्थ : भगतन के द्वारा शिवजी के चढ़ावल अन्न में एगो-एगो चाऊर आ कण में ऊहे फल मिलेला जवन कि अश्वमेध यज्ञ से (मिलेला) ॥७४॥

निर्माल्यं निर्मलं शुद्धं शिवेन स्वीकृतं यतः।
निर्मलैस्तत्परैर्धार्यं नान्यैः प्राकृतजन्तुभिः।।७५।।

भावार्थ : चूँकि शिवजी के द्वारा स्वीकृत होला एही से (सगरी नैवेद्य) निर्माल्य अर्थात् निर्मल अथवा शुद्ध होला। ऊ अत्यन्त शुद्ध लोग के द्वारा गृहीत होखे के चाही ना कि सामान्य (अर्थात् अशुद्ध) लोगन द्वारा ॥७५॥

शिवभक्तिविहीनानां जन्तूनां पापकर्मणाम्।
विशुद्धे शिवनिर्माल्ये नाऽधिकारोऽस्ति कुत्रचित्॥७६॥

भावार्थ : शिवजी के भक्ति से रहित पाप करम के करेवाला जीवसन के विशुद्ध शिवजी निर्माल्य के विषय में कवनो अधिकार नईखे ॥७६॥

शिवलिङ्गप्रसादस्य स्वीकाराद् यत्फलं भवेत्।
तथा प्रसादस्वीकाराद् गुरुजङ्गमयोरपि॥७७॥

तस्माद् गुरुं महादेवं शिवयोगिनमेव च।
पूजयेत् तत्प्रसादान्नं भुञ्जीयात् प्रतिवासरम्॥७८॥

भावार्थ : शिवलिङ्ग के प्रसाद ग्रहण कईला से जवन फल मिलेला ऊहे फल गुरु आ जङ्गम (अर्थात् शिवजोगी) के प्रसाद के भी मिलेला। एही कारन गुरु, लिङ्ग आ शिवजोगी के रोजे पूजा करे के चाही आ ऊहाँ के प्रसादसरूप अन्न के स्वीकार करे के चाही ॥७७-७८॥

सोपाधिदानस्थल - (१३)

शिवलिङ्गे शिवाचार्ये शिवयोगिनि भक्तिमान्।
दानं कुर्याद्यथाशक्ति तत्प्रसादयुतः सदा॥७९॥

भावार्थ : सोपाधिनिरुपाधिसहजदानस्थल वर्णन— भक्ति करेवाला (साधक) के चाही कि ऊ शिवलिङ्ग, शिवाचार्य आ शिवजोगी के ऊहाँ के किरिपा से युक्त होके हमेशा अपना शक्ति के अनुसार दान देव ॥७९॥

दानं च त्रिविधं प्रोक्तं सोपाधिनिरुपाधिकम्।
सहजं चेति सर्वेषां सर्वतन्त्रविशारदैः॥८०॥

भावार्थ : सगरी शास्त्रसन के विद्वान् लोगन के द्वारा सबका खातिर दान सोपाधि, निरुपाधि आ सहज भेद से तीन तरह के कहल गईल बाटे ॥८०॥

फलाभिसान्धिसंयुक्तं दानं यद्विहितं भवेत्।
तत् सोपाधिकमाख्यातं मुमुक्षुभिरनादृतम्॥८१॥

भावार्थ : जवन दान फल खातिर कईल जाला ओकरा के सोपाधिक दान कहल गईल बाटे। मोक्ष के चाहे वाला लोग ओ तरह के दान के ना आदर ना करेला लो ॥८१॥

निरुपाधिदानस्थल - (१४)

फलाभिसन्धिनिर्मुक्तमीश्वरार्पितकाङ्क्षितम्।
निरुपाधिकमाख्यातं दानं दानविशारदैः।।८२।।

भावार्थ : निरुपाधिदानस्थल वर्णन — दान के विशारद लोग फल के इच्छा से रहित ईश्वार्पणबुद्ध्या कईल गईल दान के निरुपाधिक दान कहले बानी लो ॥८२॥

सहजदानस्थल - (१५)

आदातृदातृदेयानां शिवभावं विचिन्तयन्।
आत्मनोऽकर्तृभावं च यद्दत्तं सहजं भवेत्।।८३।।

भावार्थ : सहजदानस्थल वर्णन— परिगृहीत दाता आ देय के शिवरूप सोचेवाला आ (दान के विषय में) अपना के कर्ता समझत दिहल गईल दान होला ॥८३॥

सहजं दानमुत्कृष्टं सर्वदानोत्तमोत्तमम्।
शिवज्ञानप्रदं पुंसां जन्मरोगनिवर्तकम्।।८४।।

भावार्थ : (तीनु तरह दे दान में) सहज दान उत्कृष्ट आ सगरी तरह के दान में उत्तम होला। ऊ दान मनुष्य लोग के शिवज्ञान के देबेवाला आ जनमरूपी रोग के दूर करेवाला होला ॥८४॥

शिवाय शिवभक्ताय दीयते यदि किञ्चन।
भक्त्या तदपि विख्यातं सहजं दानमुत्तमम्।।८५।।

भावार्थ : शिवजी के अथवा शिवभक्त के जवन कुछु भक्ति के साथे दिहल जाला ऊहो भी उत्तम सहज दान कहल गईल बाटे ॥८५॥

दानात् स्वर्णसहस्रस्य सत्पात्रे यत्फलं भवेत्।
एकपुष्पप्रदानेन शिवे तत्फलमिष्यते।।८६।।

भावार्थ : उत्तम आ जोग्य आदमी के एक हजार सोना के मुद्रा देहला से जवन फल मिलेला ऊहे फल शिवजी के एगो फूल (भक्ति के साथे) चढ़ावला से मिल जाला ॥८६॥

शिव एव परं पात्रं सर्वविद्यानिधिर्गुरुः।
तस्मै दत्तं तु यत्किञ्चित्तदनन्तफलं भवेत्।।८७।।

भावार्थ : सगरी विद्यासन के खजाना गुरुरूप शिवजी ही (दान के) सबसे बढ़िया पात्र बानी अथवा शिवजी आ सगरी विद्यानिधि गुरु दुनु उत्तमोत्तम पात्र बानी। ऊहाँ के जवन कुछु दिहल जाला ऊ अनन्त फल देबेवाला होला ॥८७॥

शिवयोगी शिवः साक्षाच्छिवज्ञानमहोदधिः।
यत्किञ्चिद्दीयते तस्मै तद्दानं पारमार्थिकम्।।८८।।

भावार्थ : शिवज्ञान के समुन्दररूप शिवजोगी साक्षाते शिवजी ही होनी लो ऊहाँ लोग के जवन कुछु दिहल जाला ऊ दान परम अरथ (अर्थात् शिवसायुज्य) के देबेवाला होला ॥८८॥

शिवयोगी महत्पात्रं सर्वेषां दानकर्मणि।
तस्मान्नास्ति परं किञ्चित्पात्रं शास्त्रविचारतः।।८९।।

भावार्थ : (सगरी) दान करम में सबके खातिर शिवजोगी उत्तम पात्र बानी। शास्त्रसन के दृष्टि में ऊहाँ से बढ़के कवनो नीमन पात्र नईखे ॥८९॥

भिक्षामात्रप्रदानेन शान्ताय शिवयोगिने।
यत्फलं लभ्यते नैतद् यज्ञकोटिशतैरपि।।९०।।

भावार्थ : शान्त शिवजोगी के खाली भीख अर्थात् एगो ग्रास देहला से जवन फल मिलेला ऊ करोड़न जज्ञ कईला से भी ना मिलेला ॥९०॥

शिवयोगिनि संतृप्ते तृप्तो भवति शङ्करः।
तत्तृप्त्या तन्मयं विश्वं तृप्तिमेति चराचरम्।।९१।।

भावार्थ : शिवजोगी के तृप्त भईला पर स्वयं शिवजी तृप्त होखेनी। ओ शिवजी के तृप्ति से ऊहाँ से व्याप्त चर-अचर सगरी विश्व तृप्त होला ॥९१॥

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन येन केनापि कर्मणा।
तृप्तिं कुर्यात् सदाकालमन्नाद्यैः शिवयोगिनः।।९२।।

भावार्थ : एही कारन सगरी प्रयास करके जवन कवनो करम के द्वारा सगरी समय अन्न आदि से शिवजोगी के तृप्त करे के चाही ॥९२॥

निरुपाधिकचिद्रूपपरानन्दात्मवस्तुनि ।
समाप्तं सकलं यस्य स दानी शङ्करः स्वयम्।।९३।।

भावार्थ : बिना कवनो चाहत के चिद्रूप परानन्द तत्त्व के विषय में अर्थात् ओकरा नाम पर जेकर सगरी कुछु खतम अर्थात् समर्पित हो जाला ऊ दानी स्वयं शंकर हो जाला ॥९३॥

उक्ताखिलाचारपरायणोऽसौ
सदा वितन्वन् सहजं तु दानम्।
ब्रह्मादिसम्पत्सु विरक्तचित्तो
भक्तो हि माहेश्वरतामुपैति।।९४।।

भावार्थ : पहिले कहल गईल आचरन के करेवाला, हमेशा सहज दान के देवत आ ब्रह्मा आदि के सम्पत्ति के प्रति भी मन में राग ना रखेवाला ई भगत महेश्वर हो जाला ॥९४॥

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ भक्तस्थले भक्तमार्गक्रियास्थलादिसप्तविध-स्थलप्रसङ्गो नाम नवमः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के भक्तस्थल में भक्तमार्गक्रियास्थलादिसप्तविधस्थलप्रसङ्ग नामवाला नौवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।९।।

□□□

दशम: परिच्छेद: (दसवाँ परिच्छेद)

अंगस्थलान्तर्गत
माहेश्वरस्थल

अगस्त्य उवाच-

भक्तस्थलं समाख्यातं भवता गणनायक।
केन वा धर्मभेदेन भक्तो माहेश्वरो भवेत्।।१।।

भावार्थ : माहेश्वरस्थल वर्णन— अगस्त्य ऋषि कहनी— हे गणनायक! रऊवा भक्त स्थल के वर्णन कईनी। (अब ई बतलाई कि) कवना धरम भेद से भक्त माहेश्वर होला ॥१॥

रेणुक उवाच-

केवले सहजे दाने निष्णात: शिवतत्पर:।
ब्रह्मादिस्थानाविमुखो भक्तो माहेश्वर: स्मृत:।।२।।

भावार्थ : रेणुकाचार्य कहनी— जवन (आदमी) खाली सहज दाना में नीमन होखे आ शिवजी के भक्ति करे में लागल होखे आ ब्रह्मा आदि के भी पद पावे के इच्छा ना रखत होखे अईसन भक्त माहेश्वर मानल गईल बाटे ॥२॥

भक्तेर्यदा समुत्कर्षो भवेद्वैराग्यगौरवात्।
तदा माहेश्वर: प्रोक्तो भक्त: स्थिरविवेकवान्।।३।।

भावार्थ : जब वैराग्य के अधिकता से (मनुष्य के भीतर) भक्ति के उत्कर्ष होला तब ऊहे स्थिरविवेक वाला भक्त माहेश्वर कहल जाला ॥३॥

माहेश्वरस्थलं वक्ष्ये यथोक्तं शम्भुना पुरा।
माहेश्वरप्रशंसादौ लिङ्गनिष्ठा तत: परम्।।४।।

पूर्वाश्रयनिरासश्च तथाद्वैतनिराकृति:।
आह्वानवर्जनं पश्चादष्टमूर्तिनिराकृति:।।५।।

सर्वगत्वनिरासश्च शिवत्वं शिवभक्तयो:।
एवं नवविधं प्रोक्तं माहेश्वरमहास्थलम्।।६।।

भावार्थ : (अब) हम माहेश्वर स्थल के बतलाएम — जईसन कि भगवान् शिवजी पहिलही कहले बानी। पहिले माहेश्वर के बड़ाई, ओकरा बाद लिङ्गार्चन में निष्ठा आ पहिलका आश्रय के तियाग, ओही तरह अद्वैत मत के निराकरण, आह्वान के वर्जन, अष्टमूर्ति के निराकरण आ सर्वगत्व के निरास, शिवजगन्मयस्थल आ अन्त में भक्तदेहिक लिङ्गस्थल आ एही तरह महास्थल नव तरह के कहल गईल बाटे ।।४-६।।

आदितः क्रमशो वक्ष्ये स्थलभेदस्य लक्षणम्।
समाहितेन मनसा श्रूयतां भवता मुने।।७।।

भावार्थ : मे मुनिजी! हम स्थलभेद के लक्षन पहिलही से बतलाएम। रऊवा समाहितचित्त होके सुनीं ।।७।।

माहेश्वरप्रशंसास्थल - (१६)

विश्वस्मादधिको रुद्रो विश्वानुग्रहकारकः।
इति यस्य स्थिरा बुद्धिः स वै माहेश्वरः स्मृतः।।८।।

भावार्थ : माहेश्वरप्रशंसास्थल — भगवान् शिवजी संसार से बढ़के बानी। ऊहे के संसार पर किरिपा करेवाला बानी— ए तरह जेकर निश्चित धारना होला ऊहे माहेश्वर मानल गईल बाटे ।।८।।

ब्रह्माद्यैर्मलिनप्रायैर्निर्मले परमेश्वरे।
साम्योक्तिं यो न सहते स वै माहेश्वराभिधः।।९।।

भावार्थ : जवन मलिनप्राय ब्रह्मा आदि के साथ निर्मल परमेसर के तुलना के नईखे सह सकत ओकर नाम माहेश्वर बाटे ।।९।।

ईश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्मादीनां महानिति।
बुद्धियोगात्तदासक्तो भक्तो माहेश्वरः स्मृतः।।१०।।

भावार्थ : ब्रह्मा आदि सगरी प्राणिलोग में परमेसर महान् बानी — एही तरह के विचार से जवन भक्त ओ परमेसर में हमेशा लागल रहेला उ माहेश्वर कहल गईल बाटे ।।१०।।

ब्रह्मादिदेवताजालं मोहितं मायया सदा।
अशक्तं मुक्तिदाने तु क्षयातिशयसंयुतम्।।११।।
अनादिमुक्तो भगवानेक एव महेश्वरः।
मुक्तिदश्चेति यो वेद स वै माहेश्वरः स्मृतः।।१२।।

भावार्थ : ब्रह्मा आदि देवतालोग के समूह हमेशा माया से ग्रस्त बाटे। क्षय आ अतिशय से युक्त ऊहे समूह मुक्ति देबे में असमरथ बाटे। खाली भगवान् शिवजी ही

अनादि आ मुक्त बानी आ ऊहें के मुक्ति के देबेवाला बानी अईसन जे बुझेला ऊ माहेश्वर कहल गईल बाटे ॥११-१२॥

क्षयातिशयसंयुक्ता ब्रह्मविष्ण्वादिसम्पदः।
तृणवन्मन्यते युक्त्या वीरमाहेश्वरः सदा॥१३॥
शब्दस्पर्शादिसम्पन्ने सुखलेशे तु निःस्पृहः।
शिवानन्दे समुत्कण्ठो वीरमाहेश्वरो भवेत्॥१४॥

भावार्थ : ब्रह्माजी, विसनुजी आदि के ऐश्वर्य क्षयशीला आ अतिशय से युक्त बाटे। वीर माहेश्वर हमेशा ओकरा के खर-पात के नीयर तुच्छ मानेला। ऊ शब्द, स्पर्श आदि से युक्त क्षणिक सुख के इच्छा ना रखेला आ शिवानन्द के पावे खातिर उत्कण्ठित रहेला। अईसने आदमी वीरमाहेश्वर होला ॥१३-१४॥

परस्त्रीसङ्गनिर्मुक्तः परद्रव्यपराङ्मुखः।
शिवार्थकार्यसम्पन्नः शिवागमपरायणः॥१५॥
शिवस्तुतिरसास्वादमोदमानमनाः शुचिः।
शिवोत्कर्षप्रमाणानां सम्पादनसमुद्यतः॥१६॥
निर्ममो निरहङ्कारो निरस्तक्लेशपञ्जरः।
अस्पृष्टमदसम्बन्धो मात्सर्यावेशवर्जितः॥१७॥
निरस्तमदनोन्मेषो निर्धूतक्रोधविप्लवः।
सदा सन्तुष्टहृदयः सर्वप्राणिहिते रतः॥१८॥
निवारणसमुद्योगी शिवकार्यविरोधिनाम्।
सहचारी सदाकालं शिवोत्कर्षाभिधायिभिः॥१९॥
शिवापकर्षसम्प्राप्तौ प्राणत्यागेऽप्यशङ्कितः।
शिवैकनिष्ठः सर्वात्मा वीरमाहेश्वरो भवेत्॥२०॥

भावार्थ : दोसरा के मेहरारू के साथ समागम ना करेवाला, दोसरा के धन के ना चाहेवाला, शिवजी के खातिर कार्य करेवाला, शैवागम के अध्ययन करेवाला, शिवजी के स्तुति के रस के आस्वाद पाके खुश मन से रहेवाला, पवित्र, शिव के महानता के प्रमाणसम के जुटावे में लागल (संसार के खातिर) ममता से रहित, अहंकार से शून्य, (अविद्या आ अस्मिता आदि) दुःख सन के जाल के तुरेवाला, मद से बिना छुवाईल, मात्सर्य के आवेश के बिना, कामभावना जेकरा में ना होखे, क्रोध के वेग से दूर, हमेशा सन्तोष से युक्त, सगरी परानीलोग के हित में लागल, शिवजी के काम के विरोध करेवाला लोग के नाश करे में लागल, शिवोत्कर्ष के परचार करेवाला लोग के

हमेशा साथी, शिवजी के अपमान भईला पर परान के भी तियाग देबे में तत्पर, खाली शिवजी में ही निष्ठा रखेवाला आदमी वीरमाहेश्वर होला ॥१५-२०॥

लिङ्गनिष्ठास्थल (१७)

अस्य माहेश्वरस्योक्तं लिङ्गनिष्ठामहास्थलम्।
प्राणात्ययेऽपि सम्पन्ने यदत्याज्यं विधीयते।।२१।।

भावार्थ : लिङ्गनिष्ठास्थल वर्णन— परान संकट के बेरा में कबो जवना लिङ्ग के तियागे के विधान नईखे ऊहे ए माहेश्वर के लिङ्गनिष्ठास्थल कहल गईल बाटे ॥२१॥

अपगच्छतु सर्वस्वं शिरश्छेदनमस्तु वा।
माहेश्वरो न मुञ्चेत लिङ्गपूजामहाव्रतम् ।।२२।।

भावार्थ : सगरी धन सम्पत्ति भलही चल जाव, शिर कटा जाव बाँकि माहेश्वरलिङ्गपूजा-रूपी महान् बरत के कबो भी तियाग ना करेला ॥२२॥

लिङ्गपूजामकृत्वा तु ये न भुञ्जन्ति मानवाः।
तेषां महात्मनां हस्ते मोक्षलक्ष्मीरुपस्थिता।।२३।।

भावार्थ : जवन मनुष्य लिङ्ग के पूजा बिना कईले भोजन ना करेले ओ महात्मा लोग के हाथ में मोक्ष के लछिमी हमेशा उपस्थित रहेली ॥२३॥

किमन्यैर्धर्मकलिलैः कीकषार्थप्रदायिभिः।
साक्षान्मोक्षप्रदः शम्भोर्धर्मो लिङ्गार्चनात्मकः।।२४।।

भावार्थ : क्षुद आ घिरिना वाला अरथ के देबेवाला अऊरी मलिन धरम सन से का फायदा? शम्भुजी के लिङ्गार्चनात्मक धरम साक्षाते मोक्ष के देबेवाला बाटे ॥२४॥

अर्पितेनान्नपानेन लिङ्गे नियमपूजिते।
ये देहवृतिं कुर्वन्ति महामाहेश्वरा हि ते।।२५।।

भावार्थ : समर्पित अन्नपान के द्वारा जवन लोग नियमपूर्वक लिङ्ग के पूजा करेला लो आ देह के (ओही चढ़ावल अन्न जल से) जीवित रखेला लो ऊहे महामाहेश्वर कहाला लो ॥२५॥

चिन्मये शाङ्करे लिङ्गे स्थिरं येषां मनः सदा।
विमुक्तेतरसर्वार्थं ते शिवा नात्र संशयः।।२६।।

भावार्थ : जेकर मन चिन्मय शांकर लिङ्ग में हमेशा स्थिर रहेला आ (मुक्ति से) अलगा सगरी विषय मन के जे तियाग देहले बाटे ऊ शिवजी हई एईमें कवनो सन्देह नईखे ॥२६॥

लिङ्गे यस्य मनो लीनं लिङ्गस्तुतिपरा च वाक्।
लिङ्गार्चनपरौ हस्तौ स रुद्रो नात्र संशयः।।२७।।

भावार्थ : जेकर मन लिङ्ग में लीन बाटे, जेकर बानी लिङ्ग के स्तुति में लागल रहेले, जेकर दुनु हाथ लिङ्गार्चन में लागल रहेले ऊहे रुद्र हईं एईमें कवनो सन्देह नईखे ।।२७।।

लिङ्गनिष्ठस्य किं तस्य कर्मणा स्वर्गहेतुना।
नित्यानन्दशिवप्राप्तिर्यस्य शास्त्रेषु निश्चिता।।२८।।

भावार्थ : जवना भक्त के शिवानन्द के प्राप्ति शास्त्र सन के अनुसार निश्चित बाटे । लिङ्गार्चन में लागल ओह (भक्त) के सरग के खातिर करम से का फायदा? आ चाहे का परयोजन? ।।२८।।

लिङ्गनिष्ठापरं शान्तं भूतिरुद्राक्षसंयुतम्।
प्रशंसन्ति सदाकालं ब्रह्माद्या देवता मुदा।।२९।।

भावार्थ : ब्रह्मा आदि देवता लिङ्ग में निष्ठा रखेवाला, शान्त, भसम आ रुद्राक्ष धारन करेवाला (भक्त) के आनन्द के साथ हमेशा बड़ाई करेला लो ।।२९।।

पूर्वाश्रयनिरसनस्थल - (१८)

लिङ्गैकनिष्ठहृदयः सदा माहेश्वरो जनः।
पूर्वाश्रयगतान् धर्मांस्त्यजेत्स्वाचाररोधकान्।।३०।।

भावार्थ : पूर्वाश्रयनिरसनस्थल वर्णन— खाली लिङ्गार्चन में निष्ठा रखेवाला माहेश्वर लोग के चाही कि ऊ अपना आचार (अर्थात् शैवाचार) के विरोधी पहिलका स्वीकाराईल सगरी धरम सन के तियाग दे ।।३०।।

स्वजातिकुलजान् धर्मान् लिङ्गनिष्ठाविरोधिनः।
त्यजन् माहेश्वरो ज्ञेयः पूर्वाश्रयनिरासकः।।३१।।

भावार्थ : अपना जाति, अपना कुल के भी धरम अर्थात् जनम के बेरा के अशौच आ मरे के बेरा के अशौच आदि के, यदि ऊ लिङ्गनिष्ठा के विरोधी बाड़न सन त् ओकरा के तियाग देबेवाला पूर्वाश्रयनिरासक भक्त माहेश्वर जानल जाले ।।३१।।

शिवसंस्कारयोगेन विशुद्धानां महात्मनाम्।
किं पूर्वकालिकैर्धर्मैः प्राकृतानां हि ते मताः।।३२।।

भावार्थ : शिवसंस्कार के जोग के कारण शुद्ध भईल महात्मालोग के पहिले में रहल आ कईल धरमसन से का परयोजन? ऊ धरम प्राकृत अर्थात् साधारन लोग खातिर कहल गईल बाटे ।।३२।।

शिवसंस्कारयोगेन शिवधर्मानुषङ्गिणाम्।
प्राकृतानां न धर्मेषु प्रवृत्तिरुपपद्यते।।३३।।

भावार्थ : शिवसंस्कार के लोग से शिवधरम के पालन करेवाला प्राकृत जन के (दोसरा) धरम सन में प्रवृत्ति ना होला ।।३३।।

विशुद्धाः प्राकृताश्चेति द्विविधा मानुषा स्मृताः।
शिवसंस्कारिणः शुद्धाः प्राकृता इतरे मताः।।३४।।

भावार्थ : आदमी दु तरह के कहल गईल बाटे — विशुद्ध आ प्राकृत। शिव के संस्कार से युक्त मनुष्य शुद्ध होला लो बाकी दोसर लोग प्राकृत मानल गईल बाटे ।।३४।।

वर्णाश्रमधर्माणां व्यवस्था हि द्विधा मता।
एका शिवेन निर्दिष्टा ब्रह्मणा कथिताऽपरा।।३५।।

भावार्थ : वर्णाश्रम आदि धरम के व्यवस्था दु तरह के मानल गईल बाटे — एक शिवजी के द्वारा निर्दिष्ट बाटे दोसरका के निर्देश ब्रह्माजी कईले बानी ।।३५।।

शिवोक्तधर्मनिष्ठा तु शिवाश्रमनिषेविणाम्।
शिवसंस्कारहीनानां धर्मः पैतामहः स्मृतः।।३६।।

भावार्थ : शैवाश्रम में रहेवाला लोग के शिव के द्वारा कहल गईल धरम में निष्ठा होला। जवन लोग शिवसंस्कार से हीन बा लो ओकर धरम ब्रह्माजी के द्वारा निर्देशित कईल गईल बाटे ।।३६।।

शिवसंस्कारयुक्तेषु जातिभेदो न विद्यते।
काष्ठेषु वह्निदग्धेषु यथा रूपं न विद्यते।।३७।।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन शिवसंस्कारसंयुतः।
जातिभेदं न कुर्वीत शिवभक्ते कदाचन।।३८।।

भावार्थ : जवना तरह से आग में जरल काठ में रूप ना रहेला, ओही तरह से शिवसंस्कार से युक्त भईला पर जातिभेद ना रहेला। एही से सगरी प्रयत्न करके शिवसंस्कार से जुड़े के चाही आ शिवभक्त लोग के बीच में कबो भी जातिभेद ना करे के चाही ।।३७-३८।।

सर्वाद्वैतनिरसनस्थल - (१९)

पूज्यपूजकयोर्लिङ्गजीवयोर्भेदवर्जने ।
पूजाकर्माद्यसम्पत्तेर्लिङ्गनिष्ठाविरोधतः।।३९।।

सर्वाद्वैतविचारस्य ज्ञानाभावे व्यवस्थितेः।
भवेन्माहेश्वरः कर्मी सर्वाद्वैतनिरासकः।।४०।।

भावार्थ : सर्वाद्वैतनिरसनस्थल वर्णन— पूज्य आ पूजक अर्थात् लिङ्ग आ जीव के भेद के दूर कईला से, पूजा, करम आदि के ना पवला से, लिङ्गनिष्ठा के विरोधक, सगरी अद्वैत विचार के व्यवस्था के ज्ञान के अभाव से धरमी सर्वाद्वैत निरासक माहेश्वर होला ।।३९-४०।।

प्रेरकं शङ्करं बुद्ध्वा प्रेर्यमात्मानमेव च।
भेदात् तं पूजयेन्नित्यं न चाद्वैतपरो भवेत्।।४१।।

भावार्थ : शंकरजी के प्रेरक आ अपना के प्रेर्य मानके भेदज्ञानपूर्वक ऊहाँ के रोज पूजा करे के चाही। अद्वैतपरक ना बने के चाही ।।४१।।

पतिः साक्षान्महादेवः पशुरेष तदाश्रयः।
अनयोः स्वामिभृत्यत्वमभेदे कथमिष्यते।।४२।।

भावार्थ : महादेव साक्षाते पति बानी आ ऊहाँ के अधीन रहेवाला ई जीव पशु बाटे। ई दुनु में स्वस्वामीभाव सम्बन्ध बाटे फेर अभेद मानला पर ई कईसे होई ।।४२।।

साक्षात्कृतं परं तत्त्वं यदा भवति बोधतः।
तदाद्वैतसमापत्तिर्ज्ञानहीनस्य न क्वचित्।।४३।।

भावार्थ : ज्ञान के कारन जब परतत्त्व के साक्षात्कार हो जाला तब अद्वैत के प्राप्ति होला। ज्ञान से रहित मनुष्य के ई प्राप्ति कबो भी ना होला ।।४३।।

भेदस्य कर्महेतुत्वाद् व्यवहारः प्रवर्तते।
लिङ्गपूजादिकर्मस्थो न चाद्वैतं समाचरेत्।।४४।।

भावार्थ : भेद के व्यवहार करम के कारन होला। एही से लिङ्ग के पूजा आदि करम के करेवाला अद्वैत के आचरन ना करेला लो ।।४४।।

पूजादिव्यवहारः स्याद्भेदाश्रयतया सदा।
लिङ्गपूजापरस्तस्मान्नाद्वैते निरतो भवेत्।।४५।।

भावार्थ : पूजा आदि के बेवहार हमेशा भेद के आधार पर होला एही से लिङ्ग के पूजा में लागल भक्त के अद्वैत में ना लागे के चाही ।।४५।।

आह्वाननिरसनस्थल - (२०)

लिङ्गार्चनपरः शुद्धः सर्वाद्वैतनिरासकः।
स्वेष्टलिङ्गे शिवाकारे न तमाह्वयेच्छिवम्।।४६।।

भावार्थ : आह्वाननिरसन स्थल के वर्णन — लिङ्ग के पूजा में लागल सर्वाद्वैत के निषेध करेवाला परिशुद्ध (वीर माहेश्वर) शिवरूपी अपना इष्ट लिङ्ग में ओ शिव के आवाहन ना करे ।।४६।।

यदा शिवकलायुक्तं लिङ्गं दद्यान्महागुरुः।
तदारभ्य शिवस्तत्र तिष्ठत्याह्वानमत्र किम्।।४७।।

भावार्थ : (एकर कारन ईहे बाटे कि) महागुरु जवना दिन से शिवकला से युक्त लिङ्ग (शिष्य के) देबेनी ओही दिन से शिव ओईमें रहे लागेनी फिर ओईमें ऊहाँ के आवाहन कईला के का आवश्यकता बाटे ।।४७।।

ससंस्कारेषु लिङ्गेषु सदा सन्निहितः शिवः।
तत्राह्वानं न कर्तव्यं प्रतिपत्तिविरोधकम्।।४८।।

भावार्थ : संस्कारयुक्त लिङ्गन में शिव हमेशा ही रहेले ओईमें भक्ति आ ज्ञान के विरोधी के आह्वान ना करे चाही ।।४८।।

नाह्वानं न विसर्गं च स्वेष्टलिङ्गे तु कारयेत्।
लिङ्गनिष्ठापरो नित्यमिति शास्त्रस्य निश्चयः।।४९।।

भावार्थ : लिङ्गपूजा में निष्ठा रखेवाला (भक्त) अपना इष्टलिङ्ग में ना त शिव के आवाहन करे आ ना ही विसर्जन करे। अईसन शास्त्र के निश्चय बाटे ।।४९।।

अष्टमूर्तिनिरसनस्थल - (२१)

यथात्मशिवयोरैक्यं न मतं कर्मसङ्गिनः।
तथा शिवात्पृथिव्यादेरद्वैतमपि नेष्यते।।५०।।

भावार्थ : अष्टमूर्तिनिरसनस्थल वर्णन — जवना तरह (शिवपूजा आ लिङ्गधारण आदि) करम में मन राखे वाला आतमा आ शिव में ऐक्य ना मानेला ओही तरह पृथिवी आदि के भी शिव के साथे ऐक्य इष्ट नईखे ।।५०।।

पृथिव्याद्यष्टमूर्तित्वमीश्वरस्य प्रकीर्तितम्।
तदधिष्ठातृभावेन न साक्षादेकभावतः।।५१।।

भावार्थ : ईश्वर पृथिवी आदि अष्टमूर्ति के रूप हऊवन। (एकर अरथ ई बाटे कि ईश्वर) ओ (आठ गो मूर्तिलोग के) अधिष्ठाता बाड़न ना कि ओकरा से अभिन्न बाड़न ।।५१।।

पृथ्व्यादिकमिदं सर्वं कार्यं कर्ता महेश्वरः।
नैतत्साक्षान्महेशोऽयं कुलालो मृत्तिका यथा।।५२।।

भावार्थ : ई सगरी पृथिवी आदि कार्य बाटे । महेश्वर एकर कर्ता बाड़न । ई (पृथिवी आदि) साक्षात् महेश्वर नईखी सन जवना तरह माटी आ कोहार (एक ना होला) ।।५२।।

पृथिव्याद्यात्मपर्यन्तप्रपञ्चो ह्यष्टधा स्थितः।
तनुरीशस्य चात्मायं सर्वतत्त्वनियामकः।।५३।।

भावार्थ : पृथिवी से लेके आतमा ले (अर्थात् पृथिवी, जल, वायु, आकाश, चनरमा, सूरूज आ अग्नि अर्थात् आतमा) ई परपञ्च आठ तरह से स्थित बाटे । ई सगरी परमेसर के देह बाटे आ ईहे आतमा सगरी तत्त्व सन के नियामक बाटे ।।५३।।

शरीरभूतादेतस्मात् प्रपञ्चात्परमेष्ठिनः।
आत्मभूतस्य देवस्य नाभेदो न पृथक्स्थितिः।।५४।।

भावार्थ : परमेष्ठी के देहभूत ए परपञ्च से परमेसर के ना भेद बाटे आ न घट-पट के नीयर हरदम होकरा से अलगा स्थिति बाटे ।।५४।।

अचेतनात्वात् पृथ्व्यादेरज्ञत्वाद् आत्मनस्तथा।
सर्वज्ञस्य महेशस्य नैकरूपत्वमिष्यते।।५५।।

भावार्थ : पृथिवी आदि अचेतन जड़ बाटे । जीवात्मा अज्ञ अर्थात् अल्पज्ञ बाटे । परमेसर सर्वज्ञ बानी । ई तीनुन के एकरूपता नईखे हो सकत ।।५५।।

इति यश्चिन्तयेन्नित्यं पृथिव्यादेरष्टमूर्तितः।
विलक्षणं महादेवं सोऽष्टमूर्तिनिरासकः।।५६।।

भावार्थ : जवन साधक एक तरह महादेव के पृथिवी आदि आठगो मूर्ति से विलक्षण समझेला आ ध्यान करेला ऊहे अष्टमूर्तिनिरासक मानल जाला ।।५६।।

सर्वगतनिरसनस्थल - (२२)

सर्वगत्वे महेशस्य सर्वत्राराधनं भवेत्।
न लिङ्गमात्रे तन्निष्ठो न शिवं सर्वगं स्मरेत्।।५७।।

भावार्थ : (सर्वगतनिरसनस्थल वर्णन)— प्रश्न— चूँकि महेश्वर सब जगहा व्याप्त बानी एही से ऊहाँ के सगरी जगहा पर आराधना कईल जा सकता ना कि खाली शिवलिङ्ग में ही आराधना कईल जा सकेला । यदि शिवजी के खाली लिङ्ग में स्थित मान लिहल जाव त ऊ सर्वव्यापी के रूप में ईयाद ना कईल जा सकिहें (फेर लिङ्ग के पूजा कइसे तर्कसंगत होई) ।।५७।।

सर्वगोऽपि स्थितः शम्भुः स्वाधारे हि विशेषतः।
तस्मादन्यत्र विमुखः स्वेष्टलिङ्गे यजेच्छिवम्।।५८।।

भावार्थ : उत्तर— यद्यपि शिव सब जगहाँ व्याप्त बानी फिर भी अपना आधार अर्थात् लिङ्गे में विशेष रूप से स्थित बानी। एही कारन अऊरी जगहाँ से विमुख होके अपना इष्टलिङ्गे में शिव के पूजा करे के चाही ॥५८॥

शिवः सर्वगतश्चापि स्वाधारे व्यज्यते भृशम्।
शमीगर्भे यथा वह्निर्विशेषेण विभाव्यते।।५९।।

भावार्थ : यद्यपि शिव सर्वगत बानी फिर भी अपना आधार में अर्थात् इष्टलिङ्ग में विशेष रूप से अभिव्यक्त होनी। जईसे कि आग सगरी पेड़ में रहेला बाकिर फिर भी शमी के भीतर विशेष रूप से व्यक्त होला ॥५९॥

सर्वगत्वं महेशस्य सर्वशास्त्रविनिश्चितम्।
तथाप्याश्रयलिङ्गादौ पूजार्थमधिका स्थितिः।।६०।।

भावार्थ : महेश्वर के सर्वव्यापकता सगरी शास्त्र सन में निश्चित बाटे तब भी आश्रयभूत लिङ्ग आदि में पूजा के खातिर (शिव के) विशेष स्थिति रहेला ॥६०॥

नित्यं भासि तदीयस्त्वं या ते रुद्र शिवा तनूः।
अघोराऽपापकाशीति श्रुतिराह सनातनी।।६१।।

भावार्थ : 'हे रुद्र! जे राऊर अघोर अर्थात् अभयंकर, मंगलकारी, दोषरहित (लिङ्गरूपी) शरीर बाटे — अईसन सनातन श्रुति कहेले ओ देहवाला रऊवा हमेशा परकाशित होत रहेनी ॥६१॥

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सर्वस्थानपराङ्मुखः।
स्वेष्टलिङ्गे महादेवं पूजयेत्पूजकोत्तमः।।६२।।

भावार्थ : एही से उत्तम पूजक के चाही की ऊ सब स्थान के छोड़ के अपना इष्टलिङ्ग में महादेवजी के पूजा करे ॥६२॥

शिवस्य सर्वगत्वेऽपि सर्वत्र रतिवर्जितः।
स्वेष्टलिङ्गे यजन् देवं सर्वगत्वनिरासकः।।६३।।

भावार्थ : यद्यपि शिव सर्वगामी बानी तब भी जे सब जगहाँ अनुराग के बिना होके खाली अपना इष्टलिङ्गे में देव के पूजा करेला ऊ सर्वगत्वनिरासक कहल जाला ॥६३॥

शिवजगन्मयस्थल - (२३)

पूजाविधौ नियम्यत्वाल्लिङ्गमात्रे स्थितं शिवम्।
पूजयन्नपि देवस्य सर्वगत्वं विभावयेत्।।६४।।

भावार्थ : (शिवजगन्मयस्थल वर्णन)— पूजा के विधि में नियमित होखला के कारन लिङ्गमात्र में स्थित पूजा करत भी भक्त देवाधिदेव के सर्वव्यापकता के भावना करत रहे ॥६४॥

यस्मादेतत् समुत्पन्नं महादेवाच्चराचरम्।
तस्मादेतन्न भिद्येत यथा कुम्भादिकं मृदः।।६५।।

भावार्थ : चूँकि ई चराचर महादेवजी से उत्पन्न बाटे एही कारन ऊ जईसे माटी से जनमल घड़ा आदि माटी से अलगा ना होला ओही लेखा महादेव से अलगा नईखे ॥६५॥

शिवतत्त्वात्समुत्पन्नं जगदस्मान्न भिद्यते।
फेनोर्मिबुद्बुदाकारं यथा सिन्धोर्न भिद्यते।।६६।।

भावार्थ : चूँकि ई चराचर शिवतत्त्व से उत्पन्न बाटे अत: ऊहाँ से ओही लेखा अलगा नईखे जवना तरह से समुन्दर से उत्पन्न) फेन, लहर आ बुद्बुद् समुन्दर से भिन्न ना होल सन ॥६६॥

यथा तन्तुभिरुत्पन्नः पटस्तन्तुमयः स्मृतः।
तथा शिवात्समुत्पन्नं शिव एव चराचरम्।।६७।।

भावार्थ : जवना तरह से तन्तुसन से उत्पन्न कपड़ा तन्तुमय कहल जाला ओही लेखा शिव से उत्पन्न चराचर शिवजी ही हईं ॥६७॥

आत्मशक्तिविकासेन शिवो विश्वात्मना स्थितः।
कुटीभावाद् यथा भाति पटः स्वस्य प्रसारणात्।।६८।।

भावार्थ : शिवजी अपना शक्ति के विकास से विश्व के रूप में ठीक ओही लेखा स्थित बानी जवना तरह से कपड़ा अपना प्रसार से तम्बु के रूप में स्थित होला ॥६८॥

तस्माच्छिवमयं सर्वं जगदेतच्छराचरम्।
तदभिन्नतया भाति सर्पत्वमिव रज्जुतः।।६९।।

भावार्थ : एही से शिवमय ई सगरी जगत् रस्सी से सर्पत्व[1] के नीयर ओह शिवजी से अभिन्न रूप में आभासित होला ॥६९॥

---

१. रस्सी आदि में साँप के भरम होखला पर वस्तुत: धीमा अन्हरियाँ, रस्सी के टेढ़ापन आदि दोष के कारन रस्सी में साँप के धरम के आरोप होला ना साँपे के। साँप त रस्सी से हमेशा अलगा आ आरोपित करे जोग नईखे।

रज्जौ सर्पवद्भाति शुक्तौ तु रजतत्ववत्।
चोरत्ववदपि स्थाणौ मरीच्यां च जलत्ववत्।।७०।।
गन्धर्वपुरवद्व्योम्नि सच्चिदानन्दलक्षणे।
निरस्तभेदसद्भावे शिवे विश्वं विराजते।।७१।।

भावार्थ : रस्सी में सर्पत्व, शुक्ति में रजतत्व, स्थाणु में चोरत्व, मृगमरीचिका में जलत्व, आकाश में गन्धर्वनगरत्व के नीयर सच्चिदानन्दसरूप भेद से रहित शिव आभासित होनी ॥७०-७१॥

पत्रशाखादिरूपेण यथा तिष्ठति पादपः।
तथा भूम्यादिरूपेण शिव एको विराजते।।७२।।

भावार्थ : जवना तरह (एगो) पेड़ (अनेक) पत्ता, डाली आदि के रूप में स्थित रहेला ओही लेखा एकही गो शिवजी (अनेक) भूमि आदि के रूप में विराजमान बानी ॥७२॥

भक्तदेहिकलिङ्गस्थल - (२४)

समस्तजगदात्मापि शङ्करः परमेश्वरः।
भक्तानां हृदयाम्भोजे विशेषेण विराजते।।७३।।

भावार्थ : भक्तिदेहिकलिङ्गस्थल वर्णन— यद्यपि शंकर परमेसर सगरी संसार में व्याप्त बानी फिर भी भक्तन के हृदय कमल में ऊहाँ के विशेष रूप से विराजमान रहेनी ॥७३॥

कैलासे मन्दरे चैव हिमाद्रौ कनकाचले।
हृदयेषु च भक्तानां विशेषेण व्यवस्थितः।।७४।।

भावार्थ : कैलास, मन्दर, हिमालय, कनकाचल अर्थात् सुमेरु ई पर्वतन आ भक्तन के हृदय में (शिवजी के) विशेष स्थिति रहेला ॥७४॥

सर्वात्मापि परिच्छिन्नो यथा देहेषु वर्तने।
तथा स्वकीयभक्तेषु शङ्करो भासते सदा।।७५।।

भावार्थ : जवना तरह से सगरी जगहँ व्याप्त परमातमा देवादि के देह में परिच्छिन्न होके प्रतिबिम्ब भाव से रहेनी ओही प्रकार से शंकरजी अपना भक्तन में हमेशा भासित रहेनी ॥७५॥

नित्यं भाति त्वदीयेषु या ते रुद्र शिवा तनूः।
अघोराऽपापकाशीति श्रुतिराह सनातनी।।७६।।

भावार्थ : 'हे रुद्र! जवन रऊवा शिवा अघोरा पापाकाशिनी शरीर बाटे ऊ रऊवा (भक्तन) के भीतर रोज आभासित होला — अईसन सनातन श्रुति कहेले ।।७६।।

विशुद्धेषु विरक्तेषु विवेकिषु महात्मसु।
शिवस्तिष्ठति सर्वात्मा शिवलाञ्छनधारिषु।।७७।।

भावार्थ : विशुद्ध वैराग्ययुक्त, विवेकी आ शिवचिह्न के धारन करेवाला महातमा लोग के भीतर सर्वातमा शिवजी विराजमान रहेनी ।।७७।।

नित्यं सन्तोषयुक्तानां ज्ञाननिर्धूतकर्मणाम्।
माहेश्वराणामन्तःस्थो विभाति परमेश्वरः।।७८।।

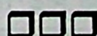
भावार्थ : रोजे सन्तोषयुक्त ज्ञान के द्वारा सगरी करम सन के भसम कईले महेश्वर के भक्त के भीतर परमेसर परकाशित होनी ।।७८।।

अन्यत्र शम्भो रतिमात्रशून्यो
निजेष्टलिङ्गे नियतान्तरात्मा।
शिवात्मकं विश्वमिदं विबुध्यन्
माहेश्वरोऽसौ भवति प्रसादी।।७९।।

भावार्थ : शम्भु से अतिरिक्त विषयसन में अनासक्त अपना इष्टलिङ्ग में संयत अन्तःकरनवाला आ ई संसार के शिवसरूप समझेवाला ई माहेश्वर ही (हमेशा) प्रसादी अर्थात् स्वयं खुश रहके दोसरा के खुश करेवाला प्रसादी स्थल के साधक बन जाला ।।७९।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां
शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये
श्रीशिवयोगिशिवाचार्य-विरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ
माहेश्वरस्थले माहेश्वरप्रशंसादिनवविधस्थलप्रसङ्गो
नाम दशमः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के माहेश्वरस्थल में माहेश्वरप्रशंसादिनवविधस्थलप्रसङ्ग नामवाला दशवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।१०।।



एकादश: परिच्छेद: (एगरहवाँ परिच्छेद)

अंगस्थलांतर्गत

प्रसादीस्थल

अगस्त्य उवाच —

उक्तो माहेश्वर: साक्षाल्लिङ्गनिष्ठादिधर्मवान्।
कथमेष प्रसादीति कथ्यते गणनायक।।१।।

भावार्थ : प्रसादीस्थल वर्णन— अगस्त्य मुनि कहनी— हे गणनायक! साक्षात् लिङ्ग में निष्ठा आदि धरम से युक्त माहेश्वर के रऊवा वर्णन कईनी । ई माहेश्वर फेर प्रसादी काहे कहल जाले? (ई बतलाई) ।।१।।

रेणुक उवाच —

लिङ्गनिष्ठादिभावेन ध्वस्तपापनिबन्धन:।
मन:प्रसादयोगेन प्रसादीत्येष कथ्यते।।२।।

भावार्थ : रेणुकाचार्य कहनी— लिङ्ग के खातिर निष्ठा आदि भाव के द्वारा सगरी पाप रूपी बन्धन के नाश करेवाला, माहेश्वर (भक्त) मन के खुशी के कारन प्रसादी कहल जाला ।।२।।

प्रसादिस्थलमित्येतदस्य माहात्म्यबोधकम्।
अन्तरस्थलभेदेन सप्तधा परिकीर्तितम्।।३।।

भावार्थ : ई प्रसादी स्थल एकर महिमा के बतलावेवाला बाटे । एकरा भीतरी स्थल सन के भेद से ई सात तरह के कहल गई बाटे ।।३।।

प्रसादिस्थलमादौ तु गुरुमाहात्म्यकं तत:।
ततो लिङ्गप्रशंसा च ततो जङ्गमगौरवम्।।४।।

ततो भक्तस्य माहात्म्यं तत: शरणकीर्तनम्।
शिवप्रसादमाहात्म्यमिति सप्तप्रकारकम्।।५।।

भावार्थ : पहिला प्रसादीस्थल, दूसरा गुरुमाहात्म्यस्थल, तीसरा लिङ्गप्रशंसा ओकरा बाद जङ्गमगौरव, ओकरा बाद शरणकीर्तनस्थल आ आखिर में शिवप्रसादमाहात्म्यस्थल ई-सात तरह के बाटे ।।४-५।।

प्रसादिस्थल - (२५)

क्रमाल्लक्षणमेतेषां कथयामि महामुने।
नैर्मल्यं मनसो लिङ्गं प्रसाद इति कथ्यते।।
शिवस्य लिङ्गरूपस्य प्रसादादेव सिद्ध्यति।।६।।

भावार्थ : प्रसादिस्थल वर्णन — हे महामुने! (अब हम) ए सब के क्रम से लछन कहत बानी। मन के निर्मलतारूपी चिह्नासी प्रसाद कहल जाला। ई प्रसाद लिङ्गरूपी शिव के किरिपा से मिलेला ।।६।।

शिवप्रसादं यद्द्रव्यं शिवाय विनिवेदितम्।
निर्माल्यं तत्तु शैवानां मनोनैर्मल्यकारणम्।।७।।

भावार्थ : शिव के चढ़ावल जवन शिवजी के प्रसाद ओकर निर्मलता वीरशैवन के मन के निर्मलता के कारन होला ।।७।।

मनःप्रसादसिद्ध्यर्थं निर्मलज्ञानकारणम्।
शिवप्रसादं स्वीकुर्वन् प्रसादीत्येष कथ्यते।।८।।

भावार्थ : मन के खुशी के सिद्धि के खातिर निर्मल ज्ञान के कारनभूत शिवप्रसाद के स्वीकार करेवाला प्रसादी कहल जाला ।।८।।

अन्नशुद्ध्या हि सर्वेषां तत्त्वशुद्धिरुदाहृता।
विशुद्धमन्नजातं हि यच्छिवाय समर्पितम्।।९।।
तदेव सर्वकालं तु भुञ्जानो लिङ्गतत्परः।
मनःप्रसादमतुलं लभते ज्ञानकारणम्।।१०।।

भावार्थ : अन्न के शुद्धि से सबकर तत्त्वशुद्धि कहल गईल बाटे। विशुद्ध अन्न ऊ होला जवन शिवजी के चढ़ावल गईल होला। लिङ्ग के आराधना में लागल भक्त हमेशा ओ अन्न के खायेवाला भक्तज्ञान से जनमल असीम मनःप्रसाद के पावेला ।।९-१०।।

आत्मभोगाय नियतं यद्यद्द्रव्यं समाहितम्।
तत्तत् समर्प्य देवाय भुञ्जीयादात्मशुद्धये।।११।।

भावार्थ : आत्मभोग खातिर निश्चित रूप से जवन-हवन द्रव्य एकत्र कईल गईल आत्मशुद्धि के खातिर ओ ओ महादेवजी के चढ़ाके खाए के चाही ।।११।।

नित्यसिद्धेन देवेन भिषजा जन्मरोगिणाम्।
यद्यत् प्रसादितं भुक्त्वा तत्तज्जन्मरसायनम्।।१२।।

भावार्थ : जन्मरूपी रोगवालन के खातिर नित्यसिद्ध वैद्यरूपी शिव देव के द्वारा भोग लगाके जवन-जवन वस्तु प्रसाद बनावल गईल ऊ सगरी वस्तु जन्मरसायन अर्थात् पुनर्जनम से मुक्ति पावे खातिर औषधि बाटे ॥१२॥

आरोग्यकारणं पुंसामन्तःकरणशुद्धिदम्।
तापत्रयमहारोगसमुद्धरणभेषजम् ।।१३।।

विद्यावैशद्यकरणं विनिपातविघातनम्।।
द्वारं ज्ञानावतारस्य मोहोच्छेदस्य कारणम्।।१४।।

वैराग्यसम्पदो मूलं महानन्दप्रवर्धनम्।
दुर्लभं पापचित्तानां सुलभं शुद्धकर्मणाम्।।१५।।

आदृतं ब्रह्मविष्ण्वाद्यैर्वसिष्ठाद्यैश्च तापसैः।
शिवस्वीकृतमन्नाद्यं स्वीकार्यं सिद्धिकाङ्क्षिभिः।।१६।।

भावार्थ : सिद्धि के पावेवाला लोगन के चाही कि ऊ शिवजी के द्वारा स्वीकृत अर्थात् शिव के समर्पित अन्नादि के ग्रहण करेलो। ए अन्नादि के विशेषता निम्नलिखित बाटे — तीनु तापरूपी महारोग से उद्धार करे खातिर औषध बाटे। विद्या के बड़हन करेला। पतन अर्थात् कृत्रिमदोष के रोकेवाला बाटे। ज्ञानावतार के दुवारी आ मोह के मेटावे के कारन बाटे। वैराग्यरूपी सम्पत्ति के मूल तथा महानन्द के बढ़ावेवाला बाटे। पापीलोग के खातिर दुर्लभ आ शुद्ध आचारवाला लोग के खातिर सुलभ बाटे। ब्रह्मा, विसनु आदि देवता आ वसिष्ठ आदि तपस्वी लोग के द्वारा प्रसाद के आदर कईल गईल बाटे ॥१३-१६॥

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यच्छिवाय निवेदितम्।
तत्तत्स्वीकारयोगेन सर्वपापक्षयो भवेत्।।१७।।

भावार्थ : पत्र, पुष्प, फल आ जल जवन कुछु शिवजी के खातिर निवेदन कईल गईल बाटे ओ-ओ के स्वीकार कईला से सगरी पापन के क्षय हो जाला ॥१७॥

यथा शिवप्रसादान्नं स्वीकार्यं लिङ्गतत्परैः।
तथा गुरोः प्रसादान्नं तथैव शिवयोगिनाम्।।१८।।

भावार्थ : लिङ्ग के आराधना में तत्पर लोगन के द्वारा जवना लेखा शिवजी के प्रसादरूपी अन्न स्वीकार्य होला ओही लेखा गुरु आ शिवजोगीलोग के भी प्रसादान्न स्वीकार्य होखे के चाही ॥१८॥

गुरुमाहात्म्यस्थल - (२६)

गुरुरेवात्र सर्वेषां कारणं सिद्धिकर्मणाम्।
गुरुरूपो महादेवो यतः साक्षादुपस्थितः।।१९।।

भावार्थ : ए संसार में सगरी सिद्धि कर्म सन के कारन गुरुवे बानी काहे से कि गुरु के रूप में साक्षाते महादेवजी उपस्थित रहेनी ।।१९।।

निष्कलो हि महादेवो नित्यज्ञानमहोदधिः।
सकलो गुरुरूपेण सर्वानुग्राहको भवेत्।।२०।।

भावार्थ : नित्य, ज्ञान के समुन्दर महादेवजी निष्कल बानी ऊहें के गुरु के रूप में सकल होके सबका पर किरिपा करेवाला होवेनी ।।२०।।

यः शिवः स गुरुर्ज्ञेयो यो गुरुः स शिवः स्मृतः।
न तयोरन्तरं कुर्याद् ज्ञानावाप्तौ महामतिः।।२१।।

भावार्थ : जे शिव बानी ऊहें के गुरु समझे के चाही। जे गुरु बानी ऊहें के शिव कहल गईल बानी अर्थात् गुरु शिवसायुज्यरूप मोक्ष के कारन भूत ज्ञान के होखला से गुरु से अभिन्न बानी। ज्ञानलाभ के बारे में विद्वान् ऊ दुनु में कवनो अन्तर ना करे ।।२१।।

हस्तपादादिसाम्येन नेतरैः सदृशं वदेत्।
आचार्यं ज्ञानदं शुद्धं शिवरूपतया स्थितम्।।२२।।

भावार्थ : ज्ञान देबेवाला, शुद्ध आ शिवरूप में स्थित आचार्य के हाथ, गोड़ आदि के समानता के कारन अऊरी दोसर सामान्य लोग नीयर ना कहे के चाहीं ।।२२।।

आचार्यस्यावमानेन श्रेयःप्राप्तिर्विहन्यते।
तस्मान्निःश्रेयसप्राप्त्यै पूजयेत् तं समाहितः।।२३।।

भावार्थ : आचार्य के अपमान कईला से मोक्षलाभ में बिघिन आवेला। एही से निःश्रेयस के पावे खातिर समाहित चित्त होके ऊहाँ के पूजा करे के चाही ।।२३।।

गुरुभक्तिविहीनस्य शिवभक्तिर्न जायते।
ततः शिवे यथा भक्तिस्तथा भक्तिर्गुरावपि।।२४।।

भावार्थ : जवन आदमी गुरुभक्ति के बिना रहेला ओकरा भीतर शिवभक्ति उत्पन्न ना होला। एही से जईसन शिव में ओईसन भक्ति गुरु में भी करे के चाही ।।२४।।

लिङ्गमाहात्म्यस्थल - (२७)

गुरुमाहात्म्ययोगेन निजज्ञानातिरेकतः।
लिङ्गस्यापि च माहात्म्यं सर्वोत्कृष्टं विभाव्यते।।२५।।

भावार्थ : लिङ्गमाहात्म्यस्थल वर्णन— गुरु के महिमा आ अपना ज्ञान के अधिकता से लिङ्ग के माहातम के भी सर्वोत्कृष्ट समझल जाला ।।२५।।

शिवस्य बोधलिङ्गं यद् गुरुबोधितचेतसा।
तदेव लिङ्गं विज्ञेयं शाङ्करं सर्वकारणम्।।२६।।

भावार्थ : जवन शिवजी के बोधलिङ्ग बाटे गुरु के द्वारा प्रबोधित चित्तवाला मनुष्य के चाही कि ओही बोधलिङ्ग के सबकर कारन शाङ्करलिङ्ग समझे ।।२६।।

परं पवित्रममलं लिङ्गं ब्रह्म सनातनम्।
शिवाभिधानं चिन्मात्रं सदानन्दं निरङ्कुशम्।।२७।।

कारणं सर्वलोकानां वेदानामपि कारणम्।
पूरणं सर्वतत्त्वस्य तारणं जन्मवारिधेः।।२८।।

ज्योतिर्मयमनिर्देश्यं योगिनामात्मनि स्थितम्।
कथं विज्ञायते लोके महागुरुदयां विना।।२९।।

भावार्थ : शिव नाम लिङ्ग परम पवितर, निर्मल, सनातन, ब्रह्म, चिन्मात्र, सदानन्द, निरङ्कुश, सगरी लोकन के कारन, वेदन के भी कारन, सगरी तत्त्वन के पूरा करेवाला, जनमरूपी समुन्दर के पार ले जाएवाला, ज्योतिर्मय, अनिर्देश्य, जोगीलोग के हिरिदय में रहेवाला बानी। अईसन लिङ्ग महागुरु के महाकिरिपा के बिना ए संसार में कईसे जानल जा सकेला ।।२७-२९।।

ब्रह्मणा विष्णुना पूर्वं यल्लिङ्गं ज्योतिरात्मकम्।
अपरिच्छेद्यमभवत् केन वा परिचोद्यते।।३०।।

भावार्थ : जवन ज्योतीसरूप लिङ्ग के पुरान समय में ब्रह्मा आ विसनुजी पार ना पईनी लो ओकरा के के जान सकेला? ।।३०।।

बहुनात्र किमुक्तेन लिङ्गं ब्रह्म सनातनम्।
योगिनो यत्र लीयन्ते मुक्तपाशनिबन्धनाः।।३१।।

भावार्थ : अधिका कहला से का फायदा? ई लिङ्गरूपी ब्रह्म सनातन बानी। जोगी लोग पाशबन्ध से छूट के ओहीमें ही लीन हो जाला ।।३१।।

पीठिका परमा शक्तिर्लिङ्गं साक्षात्परः शिवः।
शिवशक्तिसमायोगं विश्वं लिङ्गं तदुच्यते।।३२।।

भावार्थ : पीठिका (अर्घा) परमा शक्ति बानी। लिङ्ग साक्षाते परमशिव बानी। जोगीलोग पाशबन्ध से छूट के ओहीमें ही लीन हो जाला ॥३२॥

ब्रह्मादयः सुराः सर्वे मुनयः शौनकादयः।
शिवलिङ्गार्चनादेव स्वं स्वं पदमवाप्नुयुः।।३३।।

भावार्थ : ब्रह्मा आदि देवता, शौनक आदि ऋषिगण ई सब शिवलिङ्ग पूजा से ही अपना-अपना पद के पावल लो ॥३३॥

विश्वाधिपत्वमीशस्य लिङ्गमूर्तेः स्वभावजम्।
अनन्यदेवसादृश्यं श्रुतिराह सनातनी।।३४।।

भावार्थ : लिङ्गसरूप ईश्वर के विश्वाधिप होखल सुभावसिद्ध बाटे। एकरा नीयर विश्वाधिपत्व बवनओ अऊरी देवता में ना मिलेला अईसन सनातन श्रुति अर्थात् वेद कहेला ॥३४॥

जङ्गममाहात्म्यस्थल - (२८)

गुरुशिष्यसमारूढलिङ्गमाहात्म्यसम्पदः ।
सर्वं चिद्रूपविज्ञानाज्जङ्गमाधिक्यमुच्यते।।३५।।

भावार्थ : जङ्गममाहात्म्यस्थल वर्णन— गुरु आ चेला के बीच में लिङ्गमाहातम के सम्पत्ति के अपेक्षा चिद्रूप विज्ञान के कारन जङ्गमलिङ्ग के माहातम अधिका मानल गईल बाटे ॥३५॥

जानन्त्यतिशयाद् ये तु शिवं विश्वप्रकाशकम्।
स्वस्वरूपतया ते तु जङ्गमा इति कीर्तिताः।।३६।।

भावार्थ : जवन लोग विश्व के प्रकाशक शिवजी के अतिशय के कारन आत्मरूप में जानेला ऊहे जङ्गम लिङ्ग कहल गईल बानी ॥३६॥

ये पश्यन्ति जगज्जालं चिद्रूपं शिवयोगतः।
निर्धूतमलसंस्पर्शास्ते स्मृताः शिवयोगिनः।।३७।।

भावार्थ : जवन अपना शिवजोग के सामर्थ्य से जगज्जाल के चिद्रूप जानेला नष्टमल स्पर्शवाला ऊ शिवजोगी कहल गईल बाटे ॥३७॥

घोरसंसारतिमिरपरिध्वंसनकारणम् ।
येषामस्ति शिवज्ञानं ते मताः शिवयोगिनः।।३८।।

भावार्थ : जेकरा लगे घोर संसाररूपी अन्हार के नाश करेवाला शिवजी के ज्ञान बाटे ऊ शिवजोगी मानल गईल बाटे ॥३८॥

जितकामा जितक्रोधा मोहग्रन्थिविभेदिनः।
समलोष्टाश्मकनकाः साधवः शिवयोगिनः।।३९।।

समौ शत्रौ च मित्रे च साक्षात्कृतशिवात्मकाः।
निस्पृहा निरहंङ्कारा वर्तन्ते शिवयोगिनः।।४०।।

भावार्थ : काम आ क्रोध के जीतेवाला, मोहरूपी ग्रन्थि के तुरेवाला, माटी के ढेला, पत्थर आ सोना में बराबर दृष्टि रखेवाला साधु शिवजोगी होला लो। दुश्मन आ संघतिया में बराबर, शिव के साक्षात्कार करेवाला जवन बिना इच्छा आ बिना अहङ्कार होके बेवहार करेले ऊहे शिवजोगी बानी ॥३९-४०॥

दुर्लभं हि शिवज्ञानं दुर्लभं शिवचिन्तनम्।
येषामेतद्द्वयं चास्ति ते हि साक्षाच्छिवात्मकाः।।४१।।

भावार्थ : शिवजी के ज्ञान दुर्लभ बाटे। शिवजी के ध्यान दुर्लभ बाटे। जेकरा लगे ऊ दुनु बाटे ऊ साक्षाते शिवसरूप बाटे ॥४१॥

पादाग्ररेणवो यत्र पतन्ति शिवयोगिनाम्।
तदेव सदनं पुण्यं पावनं गृहमेधिनाम्।।४२।।

सर्वसिद्धिकरं पुंसां दर्शनं शिवयोगिनाम्।
स्पर्शनं पापशमनं पूजनं मुक्तिसाधनम्।।४३।।

भावार्थ : शिवजीलोग के गोड़ के अगीला भाग के धूरा जहवाँ गिरेला गृहस्थलोग के ऊ घर पुण्य के देबेवाला आ पबितर हो जाला। शिवजोगीलोग के दर्शन पुरुषन के खातिर सगरी सिद्धि के करेवाला बाटे। ऊहाँ लोग के स्पर्श पाप के खतम करेवाला आ ऊहाँ के लोग के पूजा मुक्ति के देबेवाला होला ॥४२-४३॥

महतां शिवतात्पर्यवेदिनामनुमोदिनाम्।
किं वा फलं न सिद्ध्येत सम्पर्काच्छिवयोगिनाम्।।४४।।

भावार्थ : शिवजी के तात्पर्य के जानेवाला, शिवसरूप सुख में रमन करेवाला महान् शिवजोगीलोग से सम्पर्क कईला से का का फल ना मिलेला? (अर्थात् सगरी कामना के सिद्धि होला) ॥४४॥

भक्तमाहात्म्यस्थल - (२९)

गुरोर्लिङ्गस्य माहात्म्यकथनाच्छिवयोगिनाम्।
सिद्धं भक्तस्य माहात्म्यं तथाप्येष प्रशस्यते।।४५।।

भावार्थ : भक्तमाहात्म्यस्थल वर्णन— जदपि गुरु, लिङ्ग आ शिवजोगी लोग के महिमा के वर्णन कईला से भक्त के माहातम सिद्ध हो जाला तब भी ए भक्त के प्रशंसा अगीला श्लोकन में कईल जात बाटे ।।४५।।

ये भजन्ति महादेवं परमात्मानमव्ययम्।
कर्मणा मनसा वाचा ते भक्ता इति कीर्तिता:।।४६।।

भावार्थ : भक्त के लक्षन— जवन लोग अव्यय, परमातमा, महादेवजी के मन के वाणी आ करम से भजन अर्थात् सेवा करेला लो ऊ भक्त कहल गईल बाड़न ।।४६।।

दुर्लभा हि शिवे भक्ति: संसारभयतारिणी।
सा यत्र वर्तते साक्षात् स भक्त: परिगीयते।।४७।।

भावार्थ : संसाररूपी भय से पार ले जाएवाली शिवजी के भक्ति अति दुर्लभ बाटे । ऊ जेकरा भीतर बाटे ऊ साक्षाते भक्त कहल जाला ।।४७।।

किं वेदै: किं तत: शास्त्रै: किं यज्ञै: किं तपोव्रतै:।
नास्ति चेच्छाङ्करी भक्तिर्देहिनां जन्मरोगिणाम्।।४८।।

भावार्थ : जनमरूपी रोग से ग्रस्त देहधारी मनुष्यन के भीतर यदि शिवभक्ति ना होला (ओकरा द्वारा अधीत) वेद, शास्त्र (आ ऊहाँ के द्वारा कईल गईल) जज्ञ, तपस्या आ बरत से का फायदा? अर्थात् शिवजी के भक्ति के बिना सबकुछ बेकार बाटे ।।४८।।

शिवभक्तिविहीनस्य सुकृतं चापि निष्फलम्।
विपरीतफलं च स्याद् दक्षस्यापि महाध्वरे।।४९।।

भावार्थ : जे शिवजी के भक्ति के बिना बाटे ओकर पुण्य भी निष्फल (बिना फल के) होला। दक्ष (के नीयर परतापी) के भी महाजज्ञ में (शिवभक्तिविहीन होखला से) ऊलटा फल[१] मिलल ।।४९।।

१. परजापति दक्ष शिवजी के पहिला मेहरारू सती के पिताजी रहनी । एक बेरा दक्ष जज्ञ के शुरुआत कईनी । चूँकि दक्ष के अपना परजापति होखला के अभिमान रहे आ शिवजी ऊहाँ के कबो परनाम ना कईनी अत: दक्ष ऊहाँ से क्रोधित फेरु एक बार दक्ष जज्ञ कईनी । बिना बोलवला पर भी सती ओईजा गईली आ जज्ञ में शिवजी के आसन ना देखके आ ऊहाँ के प्रतिमा के द्वारपाल के जगहा रखल देखके सती जोगाग्नि से अपना देह के तियाग क देहली । फलत: शिवजी के आज्ञा से वीरभद्र आदि दक्ष के जज्ञ के विध्वंस क दिहल लो आ दक्ष के शिर काट के हवनकुण्ड में डाल देहल ।

अत्यन्तपापकर्मापि शिवभक्त्या विशुद्ध्यति।
चण्डो यथा पुरा भक्त्या पितृहाऽपि शिवोऽभवत्।।५०।।

भावार्थ : अत्यन्त पाप करेवाला भी शिवभक्ति के द्वारा शुद्ध हो जाला। जईसे कि पुरान समय में पितृघाती चण्ड भी शिवभक्ति के द्वारा शिवसरूप हो गईल ।।५०।।

सुकृतं दुष्कृतं वापि शिवभक्तस्य नास्ति हि।
शिवभक्तिविहीनानां कर्मपाशनिबन्धनम्।।५१।।

भावार्थ : शिवजी के भक्त के खातिर ना पुण्य बाटे आ ना पाप। कर्मपाश के बन्धन खाली शिवभक्ति से रहित (जीवलोग) खातिर बाटे ।।५१।।

शिवाश्रितानां जन्तूनां कर्मणा नास्ति सङ्गमः।
वाजिनां दिननाथस्य कथं तिमिरजं भयम्।।५२।।

भावार्थ : शिवजी के ऊपर निर्भर जीव लोग के कर्म के फल ना मिलेला। सूरूज के घोड़ासन के अन्धकार के भय कईसे हो सकेला ।।५२।।

निरोद्धुं न क्षमं कर्म शिवभक्तान् विशृङ्खलान्।
कथं मत्तगजान् रुन्धेच्छृङ्खला बिसतन्तुजा।।५३।।

भावार्थ : विशृङ्खल अर्थात् बन्धन से रहित शिवभक्तन के कर्म के नईखन रोक सकत। मतवाला हाथी के बिसतन्तु (कमलनाल के तुरला पर निकलेवाला तन्तु) के शृङ्खला कई से बान्ह सकेला? ।।५३।।

ब्राह्मणः क्षत्रियो वापि वैश्यो वा शूद्र एव वा।
अन्त्यजो वा शिवे भक्तः शिववन्मान्य एव सः।।५४।।

भावार्थ : बाह्मन, क्षत्रिय, वैश्य आ शूद्र अथवा अन्त्यज भी जदि शिवजी के खातिर भक्ति रखेला त ऊ शिवेजी के नीयर मान्य बाटे ।।५४।।

शिवभक्तिसमावेशे क्व जातिपरिकल्पना।
इन्धनेष्वग्निदग्धेषु को वा भेदः प्रकीर्त्यते।।५५।।

भावार्थ : शिवजी के भक्ति समावेश हो गईला पर जाति के परिकल्पना कहवाँ से सम्भव हो सकेला। इन्धन के आग में जल गईला पर अग्नि आ इन्धन में अथवा इन्धन के अनेक तरह के होखला से कवन भेद कहल जा सकेला? ।।५५।।

शुद्धा नियमसंयुक्ताः शिवार्पितफलागमाः।
अर्चयन्ति शिवं लोके विज्ञेयास्ते गणेश्वराः।।५६।।

भावार्थ : (दीक्षा आदि से) परिशुद्ध, नियम से बन्हाईल, अपना अर्चना के फल शिवजी के अर्पित करेवाला जवन लोग ई संसार में शिवजी के अर्चन, पूजन करेला लो ऊ गणेश्वर होला लो ॥५६॥

शरणमाहात्म्यस्थल - (३०)

गुरुलिङ्गादिमाहात्म्यबोधान्वेषणसङ्गतः।
सर्वात्मना शिवापत्तिः शरणस्थानमुच्यते।।५७।।

भावार्थ : शरणमाहात्म्यस्थल वर्णन— गुरु, लिङ्ग आदि के माहातम के ज्ञान के अन्वेषण के साथे सब तरह से शिवजी के शरन में गईल शरणस्थल कहल जाला ॥५७॥

ब्रह्मादिविबुधान् सर्वान् मुक्त्वा प्राकृतवैभवान्।
प्रपद्यते शिवं यत्तु शरणं तदुदाहृतम्।।५८।।

भावार्थ : परिकीरति के वैभव से युक्त ब्रह्मा आदि सगरी देवतालोग के छोड़के शिवजी के शरन में जे जाला ओकरा के शरन कहल गईल बाटे ॥५८॥

शरण्यः सर्वभूतानां शङ्करः शशिशेखरः।
सर्वात्मना प्रपन्नस्तं शरणागत उच्यते।।५९।।

भावार्थ : जेकरा शिर पर चनरमा बाटे, अईसन शङ्करजी सगरी परानीलोग के शरण के देबेवाला बानी। जवन सर्वात्मना ऊहाँ के शरन में जाला ओकरा के शरनागत कहल बाटे ॥५९॥

विमुक्तभोगलालस्यो देवतान्तरनिस्पृहः।
शिवमभ्यर्थयन् मोक्षं शरणार्थीति गीयते।।६०।।

भावार्थ : जेकर भोगलालसा खतम हो गईल बाटे आ अऊरी देवतालोग के विषय में जवन निःस्पृह बाटे अईसन आदमी यदि शिवजी से मोक्ष के अभ्यर्थना अर्थात् याचना करेला त ऊ शरणार्थी कहल जाला ॥६०॥

ये प्रपन्ना महादेवं मनोवाक्कायकर्मभिः।
तेषां तु कर्मजातेन किं वा देवादितर्पणैः।।६१।।

भावार्थ : जवन लोग मन, वाणी आ कर्म से महादेवजी के शरन में गईल बाटे ऊहाँ के योग आदि कर्मसमूह आ देवता आदि के तर्पण से का लेबे देबे के बा? (अर्थात् ओ लोग के करम आदि कईला के आवश्यकता नईखे) ॥६१॥

सर्वेषामपि यज्ञानां क्षयः स्वर्गः फलायते।
अक्षयं फलमाप्नोति प्रपन्नः परमेश्वरम्।।६२।।

भावार्थ : सगरी जज्ञ के फल सरग क्षयशील बाटे किन्तु जवन भक्त परमेसर के शरन में आ गईल ऊ अक्षय फल अर्थात् शिवसायुज्य प्राप्त करेला ।।६२।।

प्रपन्नपारिजातस्य भवस्य परमात्मनः।
प्रपत्त्या किं न जायेत पापिनामपि देहिनाम्।।६३।।

भावार्थ : परमातमा शिवजी के प्रपन्न के खातिर कल्पवृक्ष बाटे। अईसन शिव के खातिर प्रपत्ति से पापी जीवलोग के का ना मिलेला? अर्थात् सगरी कुछु प्राप्त हो जाला ।।६३।।

प्रपन्नानां महादेवं परिपक्वान्तरात्मनाम्।
जन्मैव जन्म नान्येषां वृथा जननसङ्गिनाम्।।६४।।

भावार्थ : महादेवजी के शरन में गईल ओ परिशुद्ध हिरिदयवाला के ही जनम जनम हटे (अर्थात् सफल बाटे)। जनम लेहलेवाला अऊरी लोग के जनम लिहल बेकार बाटे ।।६४।।

दुर्लभं मानुषं प्राप्य जननं ज्ञानसाधनम्।
ये न जानन्ति देवेशं तेषामात्मा निरर्थकः।।६५।।

भावार्थ : ज्ञान के साधनभूत दुर्लभ मनुष्यजनम के पा लेहला पर भी देवेश अर्थात् परमातमा शिवजी के ना जानेला ओकर जीवन बेकार बाटे ।।६५।।

तत्कुलं हि सदा शुद्धं सफलं तस्य जीवितम्।
यस्य चित्तं शिवे साक्षाद् विलीनमबहिर्मुखम्।।६६।।

भावार्थ : जवना आदमी के अबहिर्मुख मन साक्षाते शिवजी में विलीन हो गईल बाटे ओकर कुल हमेशा शुद्ध हो गईल बाटे आ ओकर जीवन सफल हो गईल ।।६६।।

प्रसादमहात्म्यस्थल - (३१)

गुरुलिङ्गादिमाहात्म्यविशेषानुभवस्थितिः।
यस्माच्छिवप्रसादात् स्यात्तदस्य महिमोच्यते।।६७।।

भावार्थ : प्रसादमाहात्म्यस्थल वर्णन— जवना शिवप्रसाद के कारन गुरु, लिङ्ग आदि माहातम विशेष के अनुभव होला ऊहे ए (शिवप्रसाद) के महिमा बाटे ।।६७।।

सदा लिङ्गैकनिष्ठानां गुरुपूजानुषङ्गिणाम्।
प्रपन्नानां विशुद्धानां प्रसीदति महेश्वरः।।६८।।

भावार्थ : जवन हमेशा लिङ्गार्चन में लागल, गुरुपूजा में तत्पर, प्रपन्न आ विशुद्ध बाटे। ओकरा ऊपर परमेसर प्रसन्न हो जानी ॥६८॥

प्रसादोऽपि महेशस्य दुर्लभः परिकीर्त्यते।
घोरसंसारसन्तापनिवृत्तिर्येन जायते।।६९।।

भावार्थ : जेकरा द्वारा घोर संसार सन्ताप के निवृत्ति हो जाला अईसन माहेश्वरजी के खुशी अथवा किरिपा भी दुर्लभ कहल गईल बाटे ॥६९॥

यज्ञास्तपांसि मन्त्राणां जपश्चिन्ता प्रबोधनम्।
प्रसादार्थं महेशस्य कीर्तितानि न संशयः।।७०।।

भावार्थ : जज्ञ, तप, मन्त्रसन के जप, ध्यान, ज्ञान आ सब (साधन के रूप में) महेश्वरजी के खुशी के खातिर कहल गईल बाटे, एईमें सन्देह नईखे ॥७०॥

प्रसादमूला सर्वेषां भक्तिरव्यभिचारिणी।
शिवप्रसादहीनस्य भक्तिश्चापि न सिद्ध्यति।।७१।।

भावार्थ : सबलोग के (शिव के) प्रसाद से उत्पन्न भक्ति अव्यभिचारिणी (अर्थात् एकनिष्ठ) बाड़ी। शिवप्रसाद से रहित आदमी के भक्ति भी ना मिलेला ॥७१॥

गर्भस्थो जायमानो वा जातो वा ब्राह्मणोऽथवा।
अन्त्यजो वापि मुच्येत प्रसादे सति शाङ्करे।।७२।।

भावार्थ : एही कारन शिवजी के खुशी होखला पर गर्भस्थ, उत्पन्न, बाह्मन आ चाण्डाल कवनो भी मुक्त हो जाला ॥७२॥

ब्रह्माद्या विबुधाः सर्वे स्वस्वस्थाननिवासिनः।
नित्यसिद्धा भवन्त्येव प्रसादात् पारमेश्वरात्।।७३।।

भावार्थ : ब्रह्मा आदि सगरी देवतालोग परमेश्वर के प्रसाद से ही अपना-अपना पद पर रहत भी नित्य सिद्ध होला ॥७३॥

प्रसादे शाम्भवे सिद्धे परमानन्दकारणे।
सर्वं शिवमयं विश्वं दृश्यते नात्र संशयः।।७४।।

भावार्थ : परम आनन्द के हेतुभूत शाम्भव प्रसाद के सिद्ध (अर्थात् प्राप्त) होखला पर सगरी संसार शिवमय देखलाई देत बाटे एईमें सन्देह नईखे ॥७४॥

संसारचक्रनिर्वाहनिमित्तं कर्म केवलम्।
प्रसादेन विना शम्भोर्न कस्यापि निवर्तते।।७५।।

भावार्थ : करम खाली संसार चक्र के परिभ्रमण के कारन बाटे। बिना शिवजी के प्रसाद के केहू के भी ऊ करम नष्ट ना होला ।।७५।।

बहुनात्र किमुक्तेन नास्ति नास्ति जगत्त्रये।
समानमधिकं चापि प्रसादस्य महेशितुः।।७६।।

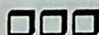
भावार्थ : ए विषय में अधिका कहला से का फायदा? महेश्वर के प्रसाद से अधिक आ एकरा नीयर तीनु लोक में कुछुओ नईखे ।।७६।।

शिवप्रसादे सति योगभाजि
सर्वं शिवैकात्मतया विभाति।
स्वकर्ममुक्तः शिवभावितात्मा
स प्राणलिङ्गीति निगद्यतेऽसौ।।७७।।

भावार्थ : शिवप्रसाद से युक्त होखला पर सबकुछु शिवमय प्रतीत होला; जवन मनुष्य शिव भावनामय बाटे ऊहे अपना करम से मुक्त होके प्राणलिङ्गी कहल जाला ।।७७।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां
शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये
श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ
प्रसादिस्थले प्रसादिस्थलादिसप्तविधस्थलप्रसङ्गो
नाम एकादशः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के प्रसादिस्थल में प्रसादिस्थलादिसप्तविधस्थलप्रसङ्ग नामवाला एगरवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।११।।



द्वादशः परिच्छेदः (बारहवाँ परिच्छेद)

अंगस्थलांतर्गत

प्राणलिङ्गीस्थल

प्राणलिङ्गीस्थल - (३२)

अगस्त्य उवाच —

भक्तो माहेश्वरश्चेति प्रसादीति निबोधितः।
एक एव कथं चैव प्राणलिङ्गीति कथ्यते।।१।।

भावार्थ : प्राणलिङ्गीस्थल वर्णन— अगस्त्य ऋषि कहनी— एक ही आदमी भक्त, माहेश्वर आ प्रसादी होला ई (रऊवा हमरा के) बतलवनी ।।१।।

श्रीरेणुक उवाच —

भक्तो माहेश्वरश्चैष प्रसादीति च कीर्तितः।
कर्मप्राधान्ययोगेन ज्ञानयोगोऽस्य कथ्यते।।२।।

भावार्थ : श्री रेणकाचार्य कहनी— (एक ही मनुष्य) जवन भक्त माहेश्वर आ प्रसादी कहल जाला ऊ करमप्राधान्य के कारन। (अब) ए (प्रसादी) के ज्ञानजोग कहल जा रहल बाटे अर्थात् ज्ञानजोग के कारन ही प्रसादी प्राणलिङ्गी कहल जाला ।।२।।

लिङ्गं चिदात्मकं ब्रह्म तच्छक्तिः प्राणरूपिणी।
तद्रूपलिङ्गविज्ञानी प्राणलिङ्गीति कथ्यते।।३।।

भावार्थ : चित्सरूप ब्रह्मलिङ्ग बानी। ऊहाँ के शक्ति परान बाटे। ए रूपवाला लिङ्ग के विशेषरूप से जानेवाला प्राणलिङ्गी कहल जाला ।।३।।

प्राणलिङ्गिस्थलं चैतत् पञ्चस्थलसमन्वितम्।
प्राणलिङ्गिस्थलं चादौ प्राणलिङ्गार्चनं ततः।।४।।

शिवयोगसमाधिश्च ततो लिङ्गनिजस्थलम्।
अङ्गलिङ्गिस्थलं चाथ क्रमादेषां भिदोच्यते।।५।।

भावार्थ : ई प्राणलिङ्गी स्थल पाँच स्थल से युक्त बाटे। पहिले प्राणलिङ्गी स्थल ओकरा बाद प्राणलिङ्गार्चन फेर शिवजोगसमाधि तत्पश्चात् निजलिङ्ग स्थल आ अन्त में अङ्गलिङ्ग स्थल बाटे। अब क्रमशः एकनी के भेद बतलावल जा रहल बाटे ।।४-५।।

प्राणापानसमाघातात् कन्दमध्याद्यदुत्थितम्।
प्राणलिङ्गं तदाख्यातं प्राणापाननिरोधिभिः।।६।।

भावार्थ : परान आ अपान के परस्पर आघात से कन्द के बीच से जवन (जोती) ऊठेला। परान आ अपान के निरोध करेवाला जोगी लोग ओकरा के प्राणलिङ्ग कहले बाड़न ।।६।।

प्राणो यत्र लयं याति भास्करे तुहिनं यथा।
तत्प्राणलिङ्गमुद्दिष्टं तद्धारी स्यात् तदाकृतिः।।७।।

भावार्थ : जवना तरह से तुहिन अर्थात् पाला सूरूज में लीन हो जाला ओही लेखा जेकर परान परब्रह्म मय शिवलिङ्ग में लीन हो जाला ओही के प्राणलिङ्ग कहल गईल बाटे। ओकरा के धारन करेवाला तद्रूप अर्थात् प्राणलिङ्गी हो जाला ।।७।।

ज्ञानिनां योगयुक्तानामन्तः स्फुरति दीपवत्।
चिदाकारं परब्रह्मलिङ्गमज्ञैर्न भाव्यते।।८।।

भावार्थ : चिदाकार परब्रह्म ज्ञानीलोग आ शिवजोगीलोग (आ चाहे शिवजोग से समन्वित ज्ञानीलोग) के भीतर दीया नीयर चमकत रहेला। अज्ञानी लोग ओकरा के ना जान पावेला ।।८।।

अन्तःस्थितं परं लिङ्गं ज्योतीरूपं शिवात्मकम्।
विहाय बाह्यलिङ्गस्था विमूढा इति कीर्तिताः।।९।।

भावार्थ : शिवात्मक जोतीरूप आ अपना भीतर स्थित उत्कृष्ट लिङ्ग के छोड़के बाह्य लिङ्ग में आस्था रखेवाला मूरूख कहल गईल बाटे ।।९।।

संविल्लिङ्गपरामर्शी बाह्यवस्तुपराङ्मुखः।
यः सदा वर्तते योगी प्राणलिङ्गी स उच्यते।।१०।।

भावार्थ : जे संवित्-रूपी लिङ्ग के बार-बार ध्यान करेला आ बाह्य वस्तु से पराङ्मुख होके बेवहार करेला ऊ जोगी प्राणलिङ्गी कहल जाला ।।१०।।

मायाविकल्पजं विश्वं हेयं सञ्चिन्त्य नित्यशः।
चिदानन्दमये लिङ्गे विलीनः प्राणलिङ्गवान्।।११।।

भावार्थ : रोज विश्व के मायाविकल्पसन से जनमल समझत चिदानन्दमय लिङ्ग में हमेशा लीन रहेवाला प्राणलिङ्गी होला ।।११।।

सत्ता प्राणमयी शक्तिः सद्रूपं प्राणलिङ्गकम्।
तत्सामरस्यविज्ञानात् प्राणलिङ्गीति कथ्यते।।१२।।

भावार्थ : (हम बानी ए तरह के अनुभव करेवाली) सत्ता ही परानमयी शक्ति बानी। प्राणलिङ्ग (शिव) भी सद्रूप बानी। (ए तरह सत्तारूपी शक्ति आ प्राणरूपी शिव) ई दुनुन के सामरस्य के विज्ञान से प्राणलिङ्गी कहल जाला ।।१२।।

प्राणलिङ्गार्चनस्थल - (३३)

अन्तर्गतं चिदाकारं लिङ्गं शिवमयं परम्।
पूज्यते भावपुष्पैर्यत् प्राणलिङ्गार्चनं हि तत्।।१३।।

भावार्थ : प्राणलिङ्गार्चनस्थल वर्णन— (हिया रूपी कमल के) भीतर जे चित्सरूप शिवमय उत्तम लिङ्ग बाटे भावनात्मक फूल से पूजा कईल ऊ प्राणलिङ्गार्चन बाटे ।।१३।।

अन्तः पवनसंस्पृष्टे सुसूक्ष्माम्बरशोभिते।
मूर्धन्यचंद्रविगलत्सुधासेकातिशीतले ।।१४।।

बद्धेन्द्रियनवद्वारे बोधदीपे हृदालये।
पद्मपीठे समासीनं चिल्लिङ्गं शिवविग्रहम्।।
भावयित्वा सदाकालं पूजयेद् भाववस्तुभिः।।१५।।

भावार्थ : अन्तःपवन (अर्थात् परानवायु) से संस्पृष्ट, सूक्ष्म आकाश से सुशोभित सहस्रार में स्थित चनरमा से द्रवित होखेवाला अमरित के सिंचला से शीतल, बद्ध नव इन्द्रिय रूपी दुवारीवाला, बोधद्वीप से युक्त हिया के भीतर कमल पर विराजमान चित्सरूप शिव के भावना करके सगरी बेरा ऊहाँ के भाव वस्तुसन से पूजा करे के चाही ।।१४-१५।।

क्षमाऽभिषेकसलिलं विवेको वस्त्रमुच्यते।
सत्यमाभरणं प्रोक्तं वैराग्यं पुष्पमालिका।।१६।।

गन्धः समाधिसम्पत्तिरक्षता निरहङ्कृतिः।
श्रद्धा धूपो महाज्ञानं जगद्भासि प्रदीपिका।।१७।।

भ्रान्तिमूलप्रपञ्चस्य निवेद्यं तन्निवेदनम्।
मौनं घण्टापरिस्पन्दस्ताम्बूलं विषयार्पणम्।।१८।।

विषयभ्रान्तिराहित्यं तत्प्रदक्षिणकल्पना।
बुद्धेस्तदात्मिका शक्तिर्नमस्कारक्रिया मता।।१९।।

एवंविधैर्भावशुद्धैरुपचारैरदूषितैः ।
प्रत्युन्मुखमना भूत्वा पूजयेल्लिङ्गमान्तरम्।।२०।।

भावार्थ : (ए पूजा में) क्षमा अभिषेक जल, विवेक वस्त्र, सत्य अलंकार (गहना), वैराग्य फूल के माला, समाधि गन्ध, निरहङ्कारता अक्षत, श्रद्धा धूप, महाज्ञान जगद्भासक दीप, मूलप्रपञ्च के भरम नैवेद्य, मौन घण्टा के बाजल, कामक्रोध आदि विषयन के समर्पण ताम्बूल, विषय भरम के दूर भईल रूप प्रदक्षिणा, बुद्धिवृत्ति के लिङ्ग में लय भईल नमस्कार कहल गईल बाटे। ए तरह से दोषरहित भावशुद्ध पूजा साधन सन के द्वारा अन्तर्मुखी होके आन्तर (अर्थात् हिया में वर्तमान चित्सरूप) शिवलिङ्ग के पूजा करे के चाही ॥१६-२०॥

शिवयोगसमाधिस्थल - (३४)

अन्तःक्रियारतस्यास्य प्राणलिङ्गार्चनक्रमैः।
शिवात्मध्यानसम्पत्तिः समाधिरिति कथ्यते।।२१।।

भावार्थ : शिवयोग समाधिस्थल वर्णन— प्राणलिङ्गार्चन के क्रम से आभ्यन्तर पूजा में लागल ए (प्राणलिङ्गी) के जवन शिवध्यान के सम्पत्ति के प्राप्ति होला ऊ समाधि कहल जाला ॥२१॥

सर्वतत्त्वोपरि गतं सच्चिानन्दभासुरम्।
स्वप्रकाशमनिर्देश्यमवाङ्मानसगोचरम्।।२२।।

उमाख्यया महाशक्त्या दीपितं चित्स्वरूपया।
हंसरूपं परात्मानं सोऽहंभावेन भावयेत्।।
तदेकतानतासिद्धिः समाधिः परमो मतः।।२३।।

भावार्थ : (पृथिवी आदि) सगरी छत्तीस तत्त्वसन से परे, सत् चित् आनन्द के रूप में प्रकाशित, स्वप्रकाश, अनिर्देश्य, वाणी आ मनं के सीमा से परे, चित्सरूप उमा नामक महाशक्ति से चमकत हंसरूप परमातमा के सोऽहं भाव (अर्थात् हम ऊहे हईं, ऊ हमीं हईं ए तरह के भाव) से भावना करे के चाही। अईसन भावना के एकतान भईल (अर्थात् बीच में अऊरी विचार के ना आईल) परम समाधि कहल गई बाटे ॥२२-२३॥

परब्रह्म महालिङ्गं प्राणो जीवः प्रकीर्तितः।
तदेकभावमननात् समाधिस्थः प्रकीर्तितः।।२४।।

भावार्थ : महालिङ्ग के परमब्रह्म आ परान के जीव कहल गईल बाटे। ऊ दुनु के एक आ अभिन्न समझेवाला समाधिस्थ कहल गई बाटे ॥२४॥

अन्तः षट्चक्ररूढानि पङ्कजानि विभावयेत्।
ब्रह्मादिस्थानभूतानि भ्रूमध्यान्तानि मूलतः।।२५।।

भ्रूमध्यादूर्ध्वभागे तु सहस्रदलमम्बुजम्।
भावयेत्तत्र विमलं चन्द्रबिम्बं तदन्तरे।।२६।।

सूक्ष्मरंध्रं विजानीयात् तत्कैलासपदं विदुः।
तत्रस्थं भावयेच्छम्भुं सर्वकारणकारणम्।।२७।।

भावार्थ : (साधन करेवाला अपना) भीतर छव गो चक्रन[१] पर स्थित छव गो कमल सन के भावना करे। ई मूलाधार से लेके भ्रूमध्य तक स्थित बाटे आ ब्रह्मा आदि[२] एकर स्थान बाटे। भ्रूमध्य के ऊपरी भाग में सहस्रदल कमल के भावना करे के चाही। ओकरा भीतर चन्द्रबिम्ब के ध्यान करे। ओ चन्द्र के अन्दर सूक्ष्म छिद्र के भावना करे। ए सूक्ष्मरन्ध्र के कैलास कहल गईल बाटे। ओ पर सगरी कारन के कारन शिवजी बईठल बानी — अईसन भावना करे के चाही ॥२५-२७॥

बहिर्वासनया विश्वं विकल्पार्थं प्रकाशते।
अन्तर्वासितचित्तानामात्मानन्दः प्रकाशते।।२८।।

भावार्थ : बहिर्वासना के कारन विकल्पात्मक विषयसन वाला विश्व प्रकाशित होला। जेकर चित्त अन्तर्मुखी बाटे ओकरा आत्मानन्द के साक्षात्कार होला ॥२८॥

आत्मारणिसमुत्थेन प्रमोदमथनात्सुधीः।
ज्ञानाग्निना दहेत्सर्वं पाशजालं जगन्मयम्।।२९।।

भावार्थ : विद्वान् के चाही कि ऊ प्रमोदरूपी (अर्थात् शिवानन्दरूपी) विचारमन्थन के द्वारा आत्मारूपी अरणि से जनमल ज्ञानरूपी आग के द्वारा संसाररूपी सगरी पाशजाल के जरा दे ॥२९॥

संसारविषवृक्षस्य पञ्चक्लेशपलाशिनः[२]।
छेदने कर्ममूलस्य परशुः शिवभावना।।३०।।

---

१. मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, शाकिनी आ आज्ञा ई छव गो चक्र बाटे।
२. ब्रह्मा आदि के स्थान ए तरह से बाटे— १. मूलाधार = ब्रह्मा, २. स्वाधिष्ठान = विष्णु, ३. मणिपूर = रुद्र, ४. अनाहत = ईश्वर, ५. शाकिनी = सदाशिव, ६. आज्ञा = शिव + शक्ति। सहस्रार में शिव आ शक्ति के यामलरूप (जुगलरूप) बाटे।

भावार्थ : करम से जनमल ई संसार विष के पेड़ (के नीयर) बाटे। (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष आ अभिनिवेश अर्थात् मृत्यु के भय ई) पाँच गो कलेश एकर पतई बाटे। एकरा के काटे के खातिर शिवजी के भावना कुल्हाड़ी नीयर बाटे ॥३०॥

अज्ञानराक्षसोन्मेषकारिणः संहृतात्मनः।
शिवध्यानं तु संसारतमसश्चण्डभास्करः॥३१॥

भावार्थ : आतमा के ढक लेबेवाला, अज्ञानरूपी राक्षस के उद्दीप्त करेवाला संसाररूपी अन्हार के दूर करे खातिर शिवध्यान प्रचण्ड सूरूज के नीयर बाटे ॥३१॥

लिङ्गनिजस्थल - (३५)

स्वान्तस्थशिवलिङ्गस्य प्रत्यक्षानुभवस्थितिः।
यस्यैव परलिङ्गस्य निजमित्युच्यते बुधैः॥३२॥

भावार्थ : निजलिङ्गस्थल वर्णन— जेकरा स्वान्तस्थ शिवलिङ्ग के प्रत्यक्ष अनुभव होवे लागेला। ओ परलिङ्ग के स्वात्मरूप से अनुभव करेवाला प्राणलिङ्ग के विद्वान् निजलिङ्ग कहेला लो ॥३२॥

ब्रह्मविष्ण्वादयो देवाः सर्वे वेदादयस्तथा।
लीयन्ते यत्र गम्यन्ते तल्लिङ्गं ब्रह्म शाश्वतम्॥३३॥

भावार्थ : ब्रह्मा, विष्णु आदि सगरी देव आ सगरी वेद आदि (आगम, पुरान, स्मृति आदि) जेकरा में लीन हो जाला आ फेर उत्पन्न होवेलन ऊ लिङ्ग खाली ब्रह्म बाटे ॥३३॥

चिदानन्दमयः साक्षच्छिव एव निरञ्जनः।
लिङ्गमित्युच्यते नान्यद् यतः स्याद्विश्वसंभवः॥३४॥

भावार्थ : चित्-आनन्द-सरूप निरञ्जन (अर्थात् निष्कलङ्क) शिवजी ही साक्षाते लिङ्ग कहल जानी। ईहे से संसार के उत्पत्ति होला ॥३४॥

बहुनात्र किमुक्तेन लिङ्गमित्युच्यते बुधैः।
शिवाभिदं परं ब्रह्म चिद्रूपं जगदास्पदम्॥३५॥

भावार्थ : ए विषय में अधिका कहला से का फायदा? शिवजी नामक परब्रह्म, जवन कि चिद्रूप आ संसार के आधार बानी विद्वान लोग के द्वारा लिङ्ग कहल जानी ॥३५॥

वेदान्तवाक्यजां विद्यां लिङ्गमाहुस्तथापरे।
तदसज्ज्ञेयरूपत्वाल्लिङ्गस्य ब्रह्मरूपिणः॥३६॥

भावार्थ : जे दोसर लोग (तत्त्वमसि, अहं ब्रह्मास्मि, अयमात्मा ब्रह्म, प्रज्ञानं ब्रह्म[१]) ई चार गो वेदान्त महावाक्य सन से उत्पन्न ज्ञान के लिङ्ग कहे ला लो ओ लोग के कहल ठीक नईखे। काहे से कि ब्रह्मरूपी लिङ्ग ज्ञेय बाटे आ ओ लोग के कहल ब्रह्म अवाङ्मनसगोचर बाटे ॥३६॥

अव्यक्तं लिङ्गमित्याहुर्जगतां मूलकारणम्।
लिङ्गी महेश्वरश्चेति मतमेतदसङ्गतम्।।३७।।

भावार्थ : (कुछ विद्वान्) संसार के मूल कारन अव्यक्त तत्त्व के कहेला लो आ महेश्वर के लिङ्गी। ई मत ठीक नईखे काहे से कि प्रकृति जड़ बिया एही से तियागे जोग बिया जबकि शैव मत में परमेसर के शक्ति चेतन बिया ॥३७॥

न सूर्यो भाति तत्रेन्दुर्न विद्युन्न च पावकः।
न तारका महालिङ्गे द्योतमाने परात्मनि।।३८।।

भावार्थ : ओ परमातमा महालिङ्ग के प्रकाशमान भईला पर ना सूरूज चमकेला ना चनरमा, ना बिजुरी, ना आग, आ नाही तारा चमकेली सन ॥३८॥

ज्योतिर्मयं परं लिङ्गं श्रुतिराह शिवात्मकम्।
तस्य भासा सर्वमिदं प्रतिभाति न संशयः।।३९।।

भावार्थ : श्रुति शिवात्मक परलिङ्ग के ज्योतिर्मय कहेले। ओकरा चमक से ई सगरी संसार हमेशा चमकत रहेला एईमें कवनो सन्देह नईखे ॥३९॥

लिङ्गान्नास्ति परं तत्त्वं यदस्माज्जायते जगत्।
यदेतद्रूपतां धत्ते यदत्र लयमश्नुते।।४०।।

भावार्थ : लिङ्ग से बढ़के कवनो तत्त्व नईखे काहे से कि एही से संसार जनम लेला। ओ लिङ्ग में ही संसार ए रूप में स्थित होला आ ओही में लीन हो जाला ॥४०॥

तस्माल्लिङ्गं परं ब्रह्म सच्चिदानन्दलक्षणम्।
निजरूपमिति ध्यानात् तदवस्था प्रजायते।।४१।।

भावार्थ : एही कारन सत्-चित्-आनन्दस्वरूप ब्रह्म ही परलिङ्ग बानी। ऊहे के आपन रूप बानी अईसन ध्यान कईला से निजलिङ्गावस्था जनम लेला ॥४१॥

---

१. तत्त्वमसि— सामवेद के, प्रज्ञानं ब्रह्म— ऋग्वेद के, अयमात्मा ब्रह्म— यजुर्वेद के आ अहं ब्रह्मास्मि—अथर्ववेद के महावाक्य बाड़न।

अंगलिंगस्थल - (३६)

ज्ञानमङ्गमिति प्राहुर्ज्ञेयं लिङ्गं सनातनम्।
विद्यते तद्द्वयं यस्य सोऽङ्गलिङ्गीति कीर्तितः।।४२।।

भावार्थ : अङ्गलिङ्गस्थल वर्णन— (विद्वान् लोग) ज्ञान के अङ्ग आ ज्ञेय के सनातन लिङ्ग कहेला लो। ई दुनु के ज्ञान जेकरा लगे बाटे ऊ अङ्गलिङ्गी कहल गईल बाटे ।।४२।।

अङ्गे लिङ्गं समारूढं लिङ्गे चाङ्गमुपस्थितम्।
एतदस्ति द्वयं यस्य स भवेदङ्गलिङ्गवान्।।४३।।

भावार्थ : अङ्ग में लिङ्ग आरुढ़ बाटे आ लिङ्ग में अङ्ग ओतप्रोत बाटे। बीजाङ्कुरन्याय से ई दुनु तरह के ज्ञान जेकरा लगे बाटे ऊ अङ्गलिङ्गीवान् होला ।।४३।।

ज्ञात्वा यः सततं लिङ्गं स्वान्तस्थं ज्योतिरात्मकम्।
पूजयेद्भावयन्नित्यं तं विन्द्यादङ्गलिङ्गिनम्।।४४।।

भावार्थ : जवन आदमी अपना भीतर स्थित ज्योतिर्मय लिङ्ग के शास्त्र, गुरु अथवा अपना अनुभव के द्वारा जानके रोज ओकर पूजा आ भावना करेला ओकरा के अङ्गलिङ्गी समझे के चाही ।।४४।।

ज्ञायते लिङ्गमेवैकं सर्वैः शास्त्रैः सनातनैः।
ब्रह्मेति विश्वधामेति विमुक्तेः पदमित्यपि।।४५।।

मुक्तिरूपमिदं लिङ्गमिति यस्य मनःस्थितिः।
स मुक्तो देहयोगेऽपि स ज्ञानी स महागुरुः।।४६।।

भावार्थ : एक ही लिङ्ग के सगरी सनातन शास्त्र ब्रह्म, विश्वधाम, मुक्तिपद के रूप में जानेला। ई लिङ्ग मुक्तिसरूप बाटे — अईसन जे मन में समझेला ऊ देह से युक्त रहत भी मुक्त (अर्थात् जीवन्मुक्त) बाटे। ऊहे ज्ञानी आ ऊहे महागुरु बाटे ।।४५-४६।।

अनादिनिधनं लिङ्गं कारणं जगतामिह।
ये न जानन्ति ते मूढा मोक्षमार्गबहिष्कृताः।।४७।।

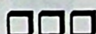
भावार्थ : आदि आ अन्त अर्थात् उत्पत्ति विनाश से रहित लिङ्ग संसार के कारन बाटे — अईसन जे लोग ना जानेला ऊ मुरूख बाड़न आ मोक्षमार्ग से बहिष्कृत बाड़न ।।४७।।

य: प्राणलिङ्गार्चनभावपूर्वै-
धर्मैरुपेत: शिवभावितात्मा।
स एव तुर्य: परिकीर्तितोऽसौ
संविद्विपाकाच्छरणाभिधान:।।४८।।

भावार्थ : जे प्राणलिङ्गार्चनभाव से पूरा धरम से युक्त बाटे आ आतमा में हमेशा शिव के भावना करत रहेला ऊहे चऊथके अवस्था के प्राप्त कहल गईल बाटे। संवित् के परिपाक के कारन ऊ शरणस्थल कहल जाला ।।४८।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ प्राणलिङ्गिस्थले प्राणलिङ्गिस्थलादिपञ्चविध-स्थलप्रसङ्गो नाम द्वादशः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के प्राणलिङ्गिस्थल में प्राणलिङ्गिस्थलादिपञ्चविधस्थलप्रसङ्ग नामवाला बारहवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।१२।।



त्रयोदशः परिच्छेदः (तेरहवाँ परिच्छेद)

अंगस्थलांतर्गत

शरणस्थल

अगस्त्य उवाच —

माहेश्वरः प्रसादीति प्राणलिङ्गीति बोधितः।
कथमेष समादिष्टः पुनः शरणसंज्ञकः।।१।।

भावार्थ : शरणस्थल वर्णन— अगस्त्य ऋषि कहनी— माहेश्वर, प्रसादी आ प्राणलिङ्गी के (रऊवा) ज्ञान करा देहनी। ईहे शरणस्थली कईसे कहल जाला (किरिपा करके ई बतलाईं) ।।१।।

रेणुक उवाच —

अङ्गलिङ्गी ज्ञानरूपः सती ज्ञेयः शिवः पतिः।
यत्सौख्यं तत्समावेशे तद्वान् शरणनामवान्।।२।।

भावार्थ : रेणुकाचार्य कहनी— ज्ञानरूप अङ्गलिङ्गी सती बानी। ज्ञेय शिव ऊहाँ के पति बानी। ए सती आ पति के (सामरस्य या यामलरूप) जवन सुख बाटे ओकर अनुभव करेवाला शरणस्थल कहल जाला ।।२।।

स्थलमेतत्समाख्यातं चतुर्धा धर्मभेदतः।
आदौ शरणमाख्यातं ततस्तामसवर्जनम्।।३।।

ततो निर्देशमुद्दिष्टं शीलसम्पादनं ततः।
क्रमाल्लक्षणमेतेषां कथयामि निशम्यताम्।।४।।

भावार्थ : धरम के भेद से ई स्थल चार तरह के कहल गई बाटे। पहिला शरणस्थल, फेर तामसनिरसनस्थल, एकरा बाद निर्देशस्थल, ओकरा बाद शीलसम्पादनस्थल होला। (अब हम) क्रम से ए सब के लक्षन बतला रहल बानी, सुनी ।।३-४।।

शरणस्थल - (३७)

सतीव रमणे यस्तु शिवे शक्तिं विभावयन्।
तदन्यविमुखः सोऽयं ज्ञातः शरणनामवान्।।५।।

भावार्थ : जवना तरह से सती स्त्री अपना रमन अर्थात् प्रियतम पति के प्रति भावना रखेले ओही तरह से जवन आदमी शिवजी के विषय में अपना के शक्ति समझत भावना करेला आ ओ (शिवजी) से अऊरी (देवता आदि) के विषय में विमुख बाटे ओकरा के शरणवान् मानल गईल बाटे ॥५॥

परिज्ञाते शिवे साक्षात् को वाऽन्यमभिकाङ्क्षति।
निधाने महति प्राप्ते कः काचं याचतेऽन्यतः॥६॥

भावार्थ : शिवजी के साक्षात् ज्ञान भईला पर कवन अईसन आदमी बाटे कि जवन केहू दोसरा के इच्छा करी। बहुत धन मिलला पर के दोसरा से सीसा के मांग करेला ॥६॥

शिवानन्दं समासाद्य को वाऽन्यमुपतिष्ठते।
गङ्गामृतं परित्यज्य कः काङ्क्षेन्मृगतृष्णिकाम्॥७॥

भावार्थ : शिवजी के आनन्द प्राप्त कईला पर के दोसरा के उपासना करेला। गङ्गाजल रूपी अमरित के छोड़के मृगमरीचिका के इच्छा करेला ॥७॥

संसारतिमिरच्छेदे विना शङ्करभास्करम्।
प्रभवन्ति कथं देवाः खद्योता इव देहिनाम्॥८॥

भावार्थ : जवन देवता लोग संसारी जीवसन खातिर जोन्ही नीयर बा लो ऊ बिना शङ्कररूपी सूरूज के संसाररूपी अन्हार के नाश करे में कईसे समर्थ हो सकेला ॥८॥

संसारार्तः शिवं यायाद् ब्रह्माद्यैः किं फलं सुरैः।
चकोरस्तृषितः पश्येच्चन्द्रं किं तारका अपि॥९॥

भावार्थ : संसार से पीड़ित आदमी के शिवजी के लगे जाये के चाही। ब्रह्मा आदि देवता लोग से कवनो फल मिले वाला नईखे। पियासल चकोर चनरमा के देखेला। का ऊ तारा के भी देखेला? (अर्थात् ना देखेला) ॥९॥

शिव एव समस्तानां शरण्यः शरणार्थिनाम्।
संसारोरगदष्टानां सर्वज्ञः सर्वदोषहा॥१०॥

शिवज्ञाने समुत्पन्ने परानन्दः प्रकाशते।
तदासक्तमना योगी नान्यत्र रमते सुधीः॥११॥

भावार्थ : संसाररूपी साँप के द्वारा काटल गईल एही से (जहर से मूर्छाहल) सगरी शरणार्थी लोग के खातिर एकमात्र शरन शिवजी बानी जवन कि सब कुछु

जानेवाला बानी आ सगरी दोषन के नाश करेवाला बानी। शिवज्ञान से उत्पन्न भईला पर परानन्द के अनुभव होला। ओही में संसक्त चित्तवाला बुद्धिमान् जोगी दोसरा जगहाँ पर आनन्द के आस्वादन ना करेला ॥१०-११॥

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन शङ्करं शरणं गतः।
तदनन्तसुखं प्राप्य मोदते नान्यचिन्तया।।१२।।

भावार्थ : एही से सगरी प्रयास करके शङ्करजी के शरण में गईल जोगी जवन अनन्तसुख के पा के आनन्दमग्न रहेला ना कि दोसरा (देवता आदि) के ध्यान कईला से ॥१२॥

तामसनिरसनस्थल - (३८)

शिवासक्तपरानन्दमोदिना गुरुणा यतः।
निरस्यन्ते तमोभावाः स तामसनिरासकः।।१३।।

भावार्थ : तामसनिरसनस्थल वर्णन— शिवजी में आसक्त अतएव परानन्द से आनन्दित होवेवाला जवना गुरु के द्वारा सगरी तमोभाव निरस्त कर दिहल जाला ऊ तामसनिरासक कहल जाला ॥१३॥

यस्य ज्ञानं तमोमिश्रं न तस्य गतिरिष्यते।
सत्त्वं हि ज्ञानयोगस्य नैर्मल्यं विदुरुत्तमाः।।१४।।

भावार्थ : जेकर ज्ञान तमोगुणमिश्रित बाटे ओकर सद्गति ना होला। उत्तम पुरुष सत्त्व के ज्ञानजोग के नैर्मल्य के कारन कहेला लो ॥१४॥

शमो दमो विवेकश्च वैराग्यं पूर्णभावना।
क्षान्तिः कारुण्यसम्पत्तिः श्रद्धा सत्यसमुद्भवा।।१५।।

शिवभक्तिः परो धर्मः शिवज्ञानस्य बान्धवाः।
एतैर्युक्तो महायोगी सात्त्विकः परिकीर्तितः।।१६।।

भावार्थ : शम, दम, विवेक, वैराग्य, पूर्णभावना अर्थात् अखण्ड ज्ञान, क्षमा, करुणा, सत्य से उत्पन्न श्रद्धा, शिव भक्ति, परमधर्म अर्थात् उत्कृष्ट वीरशैवाचार ई सगरी शिवज्ञान के भाई बाड़न। ए सबसे युक्त महाजोगी सात्विक कहल जाला ॥१५-१६॥

कामक्रोधमहामोहमदमात्सर्यवारणाः।
शिवज्ञानमृगेन्द्रस्य कथं तिष्ठन्ति सन्निधौ।।१७।।

भावार्थ : काम, क्रोध, महामोह, महामद, मात्सर्य रूपी हाथीसन के झुण्ड शिवज्ञानरूपी सिंह के लगे कंईसे रह सकेला ॥१७॥

यत्र कुत्रापि वा द्वेष्टि प्रपञ्चे शिवरूपिणि।
शिवद्वेषी स विज्ञेयो रजसाविष्टमानसः।।१८।।

भावार्थ : शिवरूप परपञ्च में जहाँ कहीं भी कवनो द्वेष करेला रजोगुण से आविष्ट चित्तवाला ओकरा के शिवद्वेषी समझे के चाही ॥१८॥

यो द्वेष्टि सकलान् लोकान् यो वाऽहङ्कुरुते सदा।
योऽसत्यभावानायुक्तः स तामस इति स्मृतः।।१९।।

भावार्थ : जे सब लोग से द्वेष करेला अथवा जे हमेशा अहङ्कारयुक्त रहेला आ जे असत्य भावना से युक्त बाटे ऊहे तामस मानल गईल बाटे ॥१९॥

तमोमूला हि सञ्जाता रागद्वेषादिपादपाः।
शिवज्ञानकुठारेण छेद्यन्ते हि निरन्तरम्।।२०।।

भावार्थ : राग द्वेष आदि के पेड़ तमोमूलक बाटे (अर्थात् ई तमोगुण के कारन उत्पन्न होले) ई शिवज्ञानरूपी कुठार के द्वारा हमेशा काटल जाले ॥२०॥

शिवज्ञाने समुत्पन्ने सहस्रादित्यसन्निभे।
कुतस्तमोविकाराः स्युर्महतां शिवयोगिनाम्।।२१।।

भावार्थ : हजार गो सूरूज के नीयर शिवज्ञान से उत्पन्न भईला पर महा शिवजोगी लोग के खातिर तमरूपी विकार कहवाँ (बाटे) ॥२१॥

निर्देशस्थल - (३९)

निराकृत्य तमोभागं संसारस्य प्रवर्तकम्।
निर्दिश्यते तु यज्ज्ञानं स निर्देश इति स्मृतः।।२२।।

भावार्थ : निर्देशस्थल वर्णन— संसार के प्रवर्तक अर्थात् मूलकारनभूत तमोभाग के दूर करके जवन ज्ञान के निर्देश कईल जाला ऊ निर्देश कहल जाला ॥२२॥

गुरुरेव परं तत्त्वं प्रकाशयति देहिनाम्।
को वा सूर्यं विना लोके तमसो विनिवर्तकः।।२३।।

भावार्थ : गुरुजी ही आदमीसन के परमतत्त्व के ज्ञान करावेनी। सूरूज के बिना संसार में अन्हार के हटावेवाला के हो सकेला ॥२३॥

अन्तरेण गुरुं सिद्धं कथं संसारनिष्कृतिः।
निदानज्ञं विना वैद्यं किं वा रोगो निवर्तते।।२४।।

भावार्थ : सिद्ध गुरुजी के बिना संसार के निष्कृति अर्थात् निवृत्ति कईसे सम्भव बाटे। का निदान के जानेवाला वैद्य के बिना रोग के निवृत्ति हो जाला? ।।२४।।

अज्ञानमलिनं चित्तदर्पणं यो विशोधयेत्।
प्रज्ञाविभूतियोगेन तमाहुर्गुरुसत्तमम्।।२५।।

भावार्थ : जे प्रज्ञारूपी भसम से अज्ञानमलिन चितदर्पन के शुद्ध करेला ऊहाँ के (विद्वान् लोग) उत्तम गुरु कहेला ।।२५।।

अपरोक्षिततत्त्वस्य जीवन्मुक्तस्वभाविनः।
गुरोः कटाक्षे संसिद्धे को वा लोकेषु दुर्लभः।।२६।।

भावार्थ : तत्त्वज्ञान के साक्षात् करेवाला एही सुभाव से जीवन्मुक्त गुरुजी के किरिपा के दृष्टि पा लेहला पर लोक में का दुर्लभ बाटे? ।।२६।।

कैवल्यकल्पतरवो गुरवः करुणालयाः।
दुर्लभा हि जगत्यस्मिन् शिवाद्वैतपरायणाः।।२७।।

भावार्थ : कैवल्यरूपी फल के देबे खातिर कल्पवृक्ष के जईसन, करुना के समुन्दर आ शिवाद्वैतपरायन गुरुजी ई संसार में दुर्लभ बानी ।।२७।।

क्षीराब्धिरिव सिन्धूनां सुमेरुरिव भूभृताम्।
ग्रहाणमिव तिग्मांशुर्मणीनामिव कौस्तुभः।।२८।।

द्रुमाणामिव भद्रश्रीर्देवानामिव शङ्करः।
गुरुः शिवः परः श्लाघ्यो गुरूणां प्राकृतात्मनाम्।।२९।।

भावार्थ : जवना तरह सगरी समुन्दर में क्षीर सागर, सगरी पर्वत सन में सुमेरु, सगरी ग्रहन में सूरूज, सगरी मणिसन में कौस्तुभ, सगरी पेड़ में चन्दन आ सगरी देवता लोग में शङ्करजी श्रेष्ठ आ प्रशंसा करे जोग बानी ओही तरह से प्राकृत गुरुजी के अपेक्षा शिवज्ञानी गुरुजी श्रेष्ठ आ प्रशंसा करे जोग बानी ।।२८-२९।।

शीलसम्पादनस्थल - (४०)

जिज्ञासा शिवतत्त्वस्य शीलमित्युच्यते बुधैः।
निर्देश्ययोगादार्याणां तद्वान् शीलीति कथ्यते।।३०।।

भावार्थ : **शीलसम्पादनस्थल वर्णन**—गुरुजी लोग के द्वारा निर्देश्य अर्थात् उपदेश्य भईला के कारन विद्वान् लोग शिवतत्त्व के जिज्ञासा के शील कहेला। ऊ (शील) जेकरा लगे होला ओकरा के शीली कहल जाला ॥३०॥

प्रपन्नार्तिहरे देवे परमात्मनि शङ्करे।
भावस्य स्थिरतायोगः शीलमित्युच्यते बुधैः॥३१॥

भावार्थ : शरणागत के दुःख के दूर करेवाला देवाधिदेव परमातमा शङ्करजी के खातिर भाव के स्थिरता के विद्वान् लोग शील कहेला ॥३१॥

शीलं शिवैकविज्ञानं शिवध्यानैकतानता।
शिवप्राप्तिसमुत्कण्ठा तद्योगी शीलवान् स्मृतः॥३२॥

भावार्थ : खाली शिवजी के ज्ञान, शिवजी के निरन्तर ध्यान आ शिव के पावे खातिर उत्कण्ठा शील कहल जाला। ऊ जेकरा लगे बाटे ऊ शीलवान् मानल गईल बाटे ॥३२॥

शिवादन्यत्र विज्ञाने वैमुख्यं यस्य सुस्थिरम्।
तदासक्तमनोवृत्तिस्तमाहुः शीलभाजनम्॥३३॥

भावार्थ : शिव से भिन्न विज्ञान के विषय में जेकर पराङ्मुखता स्थिर बाटे आ जेकर मनोवृत्ति ऊ (अर्थात् शिवजी) में आसक्त बाटे ऊ शील के पात्र अर्थात् शीलवान् होला ॥३३॥

पतिव्रताया यच्छीलं पतिरागात् प्रशस्यते।
तथा शिवानुरागेण सुशीलोऽभक्त उच्यते॥३४॥

भावार्थ : जईसे पतिव्रता के जवन शील बाटे ओकर प्रशंसा पति के प्रति ओकर रागात्मिका भावना के कारन होला। ओईसे ही शिवजी के प्रति अनुराग के कारन अभक्त अर्थात् शिवजी के प्रति प्रीति से अवियुक्त मनुष्य भी सुशील कहल जाला ॥३४॥

पतिं विना यथा स्त्रीणां सेवान्यस्य तु गर्हणा।
शिवं विना तथान्येषां सेवा निन्द्या कृतात्मनाम्॥३५॥

भावार्थ : जवना तरह से स्त्रीलोग के खातिर पति के छोड़के दोसर पुरुष के सेवा बाऊर मानल जाला ओही तरह से शिवजी के बिना अऊरी देवतालोग के सेवा कृतकृत्य लोग खातिर निन्दा करे जोग बाटे ॥३५॥

बहुनात्र किमुक्तेन शिवज्ञानैकनिष्ठता।
शीलमित्युच्यते सद्भिः शीलवांस्तत्परो मतः॥३६॥

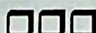
भावार्थ : ए विषय में अधिका कहला से का फायदा? सज्जन लोग शिवजी के ज्ञान के प्रति एकनिष्ठता के शील कहेला लो आ ओईमें जे लागल बाटे ऊ शीलवान् मानल गईल बाटे ॥३६॥

शिवात्मबोधैकरतः स्थिराशयः
शिवं प्रपन्नो जगतामधीशम्।
शिवैकनिष्ठाहितशीलभूषणः
शिवैक्यवानेष हि कथ्यते बुधैः।।३७।।

भावार्थ : खाली शिवबोध में लागल, स्थिर भावना से युक्त, संसार के स्वामी शिवजी के शरन में गईल, खाली शिवजी में निष्ठारूपी गहना के धारन करेवाला ई आदमी विद्वान् लोग के द्वारा शिवैक्यवान कहल जाला ॥३७॥

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ शरणस्थले शरणस्थलादिचतुर्विधस्थलप्रसङ्गो नाम त्रयोदशः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के शरणस्थल में शरणस्थलादिचतुर्विधस्थलप्रसङ्ग नामवाला तेरहवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।१३।।



चतुर्दशः परिच्छेदः (चौदहवाँ परिच्छेद)

अंगस्थलान्तर्गत

ऐक्यस्थल

अगस्त्य उवाच —

तामसत्यागसम्बन्धान्निर्देशाच्छीलतस्तथा।
शरणाख्यस्य भूयोऽस्य कथमैक्यनिरूपणम्।।१।।

भावार्थ : ऐक्यस्थल वर्णन— अगस्त्य ऋषि कहनी— तामस गुन के तियाग, ज्ञाननिर्देश आ शीलसम्पादन के द्वारा शरण नामक साधना करेवाला के फेर ऐक्य कईसे होला? ।।१।।

श्रीरेणुक उवाच —

प्राणलिङ्गादियोगेन सुखातिशयमेयिवान्।
शरणाख्यः शिवेनैक्यभावनादैक्यवान् भवेत्।।२।।

भावार्थ : श्री रेणुकाचार्य कहनी— प्राणलिङ्ग ध्यान जोग के द्वारा अतिशय सुख के पावेवाला शरण नामवाला साधक शिवजी के साथे ऐक्यभावना के कारन ऐक्यवान् हो जाला ।।२।।

ऐक्यस्थलमिदं प्रोक्तं चतुर्धा मुनिपुङ्गव।
ऐक्यमाचारसम्पत्तिरेकभाजनमेव च।।
सहभोजनमित्येषां क्रमाल्लक्षणमुच्यते।।३।।

भावार्थ : हे मुनिलोग में श्रेष्ठ! ई ऐक्यस्थल चार तरह के कहल गईल बाटे। ऐक्य स्थल, आचारसम्पत्ति स्थल, एकभाजन स्थल आ सहभोज़न स्थल। अब ई सब के क्रम से लक्षन कहल जा रहल बाटे ।।३।।

ऐक्यस्थल - (४१)

विषयानन्दकणिकानिस्पृहो निर्मलाशयः ।
शिवानन्दमहासिन्धुमज्जनादैक्यमुच्यते ।।४।।

भावार्थ : ऐक्यस्थल वर्णन— विषयानन्द खातिर तनिको बिना इच्छा वाला, निर्मल चित्तवाला, साधना करेवाला, शिवानन्द महासमुन्दर में मज्जन अर्थात् सामरस्य स्थापित करेवाला ऐक्यस्थल कहल जाला ।।४।।

निर्धूतमलसम्बन्धो निष्कलङ्कमनोगतः।
शिवोऽहमिति भावेन निरूढो हि शिवैक्यताम्।।५।।

भावार्थ : मल के हटाके ओकरा से जुड़ले बिना, निष्कलङ्क मनवाला, साधक शिवोऽहम् (हम शिव हईं) ए भावना से शिवैक्य के पावेला ।।५।।

शिवेनैक्यं समापन्नश्चिदानन्दस्वरूपिणा।
न पश्यति जगज्जालं मायाकल्पितवैभवम्।।६।।

भावार्थ : चित् आनन्दरूप शिवजी से ऐक्य के पावल मनुष्य माया के द्वारा रचित वैभव वाला संसारजाल के ना देखेला ।।६।।

ब्रह्माण्डबुद्बुदोद्भेदविजृम्भी तत्त्ववीचिमान्।
मायासिन्धुर्लयं याति शिवैक्यवडवानले।।७।।

भावार्थ : ब्रह्माण्डरूपी बुद्बुद के उद्भव से बाढ़वाला, छत्तीस तत्त्वरूपी लहर सन से युक्त मायारूपी समुन्दर शिवैक्यरूपी वाडवाग्नि में लीन हो जाला ।।७।।

मायाशक्तितिरोधानाच्छिवे भेदविकल्पना।
आत्मनस्तद्विनाशे तु नाद्वैतात्किञ्चिदिष्यते।।८।।

भावार्थ : मायाशक्ति का शिवजी में तिरोधान भईला पर जीव के शिव से भेदभाव होला। ओ (भेदभाव) के नष्ट भईला पर अद्वैत के अतिरिक्त कुछु ना बचेला ।।८।।

पशुत्वं च पतित्वं च मायामोहविकल्पितम्।
तस्मिन् प्रलयमापन्ने कः पशुः को नु वा पतिः।।९।।

भावार्थ : पशुभाव आ पतिभाव ई दुनु मायामोह के विकल्पना बाटे। ओ मायामोह के परलय भईला पर कवन पशु आ कवन पति ।।९।।

घोरसंसारसर्पस्य भेदवल्मीकशायिनः।
बाधकं परमाद्वैतभावना परमौषधम्।।१०।।

भावार्थ : ई परमाद्वैत भावना भेदरूपी[1] बिल में सुतेवाला भयंकर संसाररूपी साँप के बाधक परम औषधि बाटे ॥१०॥

भेदबुद्धिसमुत्पन्नमहासंसारसागरम् ।
अद्वैतबुद्धिपोतेन समुत्तरति देशिकः ॥११॥

भावार्थ : आचार्य अथवा शिवलिङ्गैक्य भावना वाला आदमी भेदबुद्धि से उत्पन्न महासंसार सागर के अद्वैत बुद्धिरूपी जहाज से पार कर जाला ॥११॥

अज्ञानतिमिरोद्रिक्ता कामरक्षःक्रियाकरी।
संसारकालरात्रिस्तु नश्येदद्वैतभानुना ॥१२॥

तस्मादद्वैतभावस्य सदृशो नास्ति योगिनाम्।
उपायो घोरसंसारमहातापनिवृत्तये ॥१३॥

भावार्थ : अज्ञानरूपी अन्हार से भरल, कामरूपी राक्षसी कृत्य करेवाला संसाररूपी कालरात्रि शिवाद्वैतरूपी सूरूज के द्वारा नाश हो जाला। एही कारन जोगी लोग खातिर घोर संसाररूपी महाताप के दूर कईला के कारन अद्वैत भाव के जईसन कवनो दोसर उपाय नईखे ॥१२-१३॥

अद्वैतभावनाजातं क्षणमात्रेऽपि यत्सुखम्।
तत्सुखं कोटिवर्षेण प्राप्यते नैव भोगिभिः ॥१४॥

चित्तवृत्तिसमालीनजगतः शिवयोगिनः।
शिवानन्दपरिस्फूर्तिर्मुक्तिरित्यभिधीयते ॥१५॥

भावार्थ : अद्वैत भावना से उत्पन्न एक छन खातिर जवन सुख होला ऊ राजभोगी लोग करोड़ बरिस में भी ना पा सकेलां। जे संसार के अपना चित्तवृत्ति में लीन कर लेहले बाटे अ़ईसन शिवजोगी के शिवानन्दपरिस्फुर्ति मुक्ति कहल जाले ॥१४-१५॥

आचारसंपत्तिस्थल - (४२)

शिवैकभावनापन्नशिवत्वे देहवानपि।
देशिको हि न लिप्येत स्वाचारै सूतकादिभिः ॥१६॥

भावार्थ : आचारसम्पत्तिस्थल वर्णन— शिवजी ही खाली सांच बानी अईसन भावना से युक्त अतएव शिवत्ववाला आचार्य शरीर धारन कईला पर भी सूतक आदि

---

१. ई भेद पाँच तरह के होला— जड़-अजड़ भेद, जीव-अजीव भेद, जीव-जड़ भेद, जीव-ईश्वर भेद आ जड़-ईश्वर भेद ।

अपना सम्प्रदाय आ चाहे समाज के आचार के आचार सन से लिप्त अर्थात् दूषित ना होला ॥१६॥

शिवाद्वैतपरिज्ञाने स्थिते सति मनस्विनाम्।
कर्मणा किं नु भाव्यं स्यादकृतेन कृतेन वा।।१७।।

भावार्थ : शिवाद्वैत के परिज्ञान भईला पर मनस्वीलोग के सत्कर्म आ असत्कर्म के कवनो फल ना होला ॥१७॥

शम्भोरेकत्वभावेन सर्वत्र समदर्शनः।
कुर्वन्नपि महाकर्म न तत्फलमवाप्नुयात्।।१८।।

भावार्थ : (जीवात्मा आ) शिव के एकत्व के भावना से सब जगहा एक आ तुल्य दृष्टि वाला महान् अर्थात् बड़हन-बड़हन सत् आ असत्करम के करत भी ओकरा फल से लिप्त ना होला ॥१८॥

सुकृती दुःष्कृती वापि ब्राह्मणो वान्त्यजोऽपि वा।
शिवैकभावयुक्तानां सदृशो भवति ध्रुवम्।।१९।।

भावार्थ : चाहे पुण्य करम करेवाला आ चाहे पापी, चाहे बाह्मन आ चाहे चाण्डाल, शिवैकभाव से युक्त जोगीलोग के खातिर ऊ सब निश्चितरूप से बराबर बाड़न ॥१९॥

वर्णाश्रमसदाचारैर्ज्ञानिनां किं प्रयोजनम्।
लौकिकस्तु सदाचारः फलाभावेऽपि भाव्यते।।२०।।

भावार्थ : शिवज्ञानीलोग के लौकिक वर्ण के आश्रम के सदाचार से का परयोजन। (नित्य नैमित्तिक आदि) लौकिक सदाचार फल ना देहला पर भी ओकरा द्वारा कईल जाला ॥२०॥

निर्दग्धकर्मबीजस्य निर्मलज्ञानवह्निना।
देहिवद्भासमानस्य देहयात्रा तु लौकिकी।।२१।।

भावार्थ : निर्मल ज्ञानरूपी आग से जेकर करमबीज जर गईल बाटे, देही के जईसन लागेवाला अईसन शरीरधारी के देहयात्रा (आहार, नींद) लौकिकी अर्थात् अऊरी लोग के जईसन होला (बाकिर ओ जातरा से फल आ संस्कार ना बनेला) ॥२१॥

शिवज्ञानसमापन्नस्थिरवैराग्यलक्षणः।
स्वकर्मणा न लिप्येत पद्मपत्रमिवाम्भसा।।२२।।

भावार्थ : शिवज्ञान से युक्त स्थिरवैराग्य वाला साधक अपना करम से ओही तरह लिप्त ना रहेला जवना तरह से पानी से कमल के पत्ता ॥२२॥

गच्छंस्तिष्ठन् स्वपन् वापि जाग्रन् वापि महामतिः।
शिवज्ञानसमायोगाच्छिवपूजापरः सदा।।२३।।

भावार्थ : चलत, खड़ा भईल, सुतल आ चाहे जागल महामतिमान् शिवज्ञान से सम्बद्ध भईला के कारन हमेशा शिवपूजा करत रहेला ॥२३॥

यद्यत्पश्यति सामोदं वस्तु लोकेषु देशिकः।
शिवदर्शनसम्पत्तिस्तत्र तत्र महात्मनः।।२४।।

भावार्थ : शिवलिङ्गैक्य आचार्य ए संसार में आनन्द के साथे जवना-जवना चीज के देखेला ओ-ओ चीज में ओ महातमा शिवजी के प्रतीति होला ॥२४॥

यद्यच्चिन्तयते योगी मनसा शुद्धभावनः।
तत्तच्छिवमयत्वेन शिवध्यानमुदाहृतम्।।२५।।

भावार्थ : शुद्धभावना वाला जोगी मन से जेकर-जेकर ध्यान करेला ओकरा-ओकरा शिवमय भईला से ऊ-ऊ शिवध्यान कहल गईल बाटे ॥२५॥

यत्किञ्चिद्भाषितं लोके स्वेच्छया शिवयोगिना।
शिवस्तोत्रमिदं सर्वं यस्मात् सर्वात्मकः शिवः।।२६।।

भावार्थ : शिवजोगी स्वेच्छा से ए संसार में जवन कुछु कहेला ऊ सगरी शिवस्तोत्र हो जाला काहे से शिवजी सब केहू में विद्यमान बानी ॥२६॥

या या चेष्टा समुत्पन्ना जायते शिवयोगिनाम्।
सा सा पूजा महेशस्य सर्वदा तद्गतात्मनाम्।।२७।।

भावार्थ : शिवजोगियन के जवन-जवन चेष्टा (ओकरा देह में) उत्पन्न होला ऊ सब शिवमय आतमा वाला ओकरा खातिर सदाशिव के पूजा होला ॥२७॥

एकभाजनस्थल - (४३)

विश्वं शिवमयं चेति सदा भावयतो धिया।
शिवैकभाजनात्मत्वादेकभाजनमुच्यते ।।२८।।

भावार्थ : **एकभाजनस्थल वर्णन**— 'ई विश्व शिवमय बाटे'— मन में अईसन भावना कईल शिवैकभाजनात्मक भईला से एकभाजन कहल जाला ॥२८॥

स्वस्य सर्वस्य लोकस्य शिवस्याद्वैतदर्शनात्।
एकभाजनयोगेन प्रसादैक्यमतिर्भवेत्।।२९।।

भावार्थ : अपना सगरी संसार आ शिव के एकही समझला के कारन एक पात्र भईला से प्रसादविषयिणी अद्वैत बुद्धि होला ए तरह चरमूर्ति अर्थात् लिङ्गैक्य के पादोदक आ शिवलिङ्ग के नहवावल जल दुनु बराबर रूप से ग्रहण करे के जोग होला ॥२९॥

शिवे विश्वमिदं सर्वं शिवः सर्वत्र भासते।
आधाराधेयभावेन शिवस्य जगतः स्थितिः॥३०॥

भावार्थ : ई सगरी विश्व शिव में बाटे आ शिव सब जगहा प्रकाशमान हो रहल बानी ए तरह शिव आ संसार के आधार-आधेय सम्बन्ध से स्थिति बाटे (अर्थात् शिवजी आ जगत् दुनु एक दूसरा के आधार आ आधेय बा लो) ॥३०॥

चित्तैकभाजनं यस्य चित्तवृत्तेः शिवात्मकम्।
नान्यत्तस्य किमेतेन मायामूलेन वस्तुना॥३१॥

भावार्थ : जेकर चित्तवृत्ति शिवात्मक आ मात्र चैतन्य विषयवाली बिया कवनो दोसर विषयवाली नईखे ओकरा के मायामूलक ई चीज से का लेहल-देहल? ॥३१॥

चित् प्रकाशयते विश्वं तद्बिना नास्ति वस्तु हि।
चिदेकनिष्ठचित्तानां किं मायापरिकल्पितैः॥३२॥

भावार्थ : चित् ही घट आदि से उपलक्षित सगरी परपञ्चमय विश्व के प्रकाशित करेला। ओकरा बिना कवनो चीज नईखे। जेकर चित्त खाली एकमात्रे चित् में लागल बाटे ओकरा खातिर माया से परिकल्पित (चीज सन) से का परयोजन ? ॥३२॥

वृत्तिशून्ये स्वहृदये शिवलीने निराकुले।
यः सदा वर्तते योगी स मुक्तो नात्र संशयः॥३३॥

भावार्थ : जवन जोगी हंमेशा वृत्तिशून्य शिवजी में लीन अतएव निराकुल अर्थात् शान्त हिया में ध्यानस्थ रहेला ऊ मुक्त होला एईमें कवनो सन्देह नईखे ॥३३॥

सहभोजनस्थल - (४४)

गुरोः शिवस्य शिष्यस्य स्वस्वरूपतया स्मृतिः।
सहभोजनमाख्यातं सर्वग्रासात्मभावतः॥३४॥

भावार्थ : सहभोजनस्थल वर्णन— गुरु शिवजी आ शिष्य के अपना रूप में ईयाद कईल सर्वग्रासात्मभाव के कारन सहभोजन कहल गईल बाटे ॥३४॥

शिवं विश्वं गुरुं साक्षाद्योजयेन्नित्यमात्मनि।
एकत्वेन चिदाकारे तदिदं सहभोजनम्॥३५॥

भावार्थ : शिवजी, विश्व आ गुरुजी के रोज साक्षाते चिदाकार आतमा में एक रूप में जोड़ेवाला सहभोजन कहल जाला[१] ॥३५॥

अयं शिवो गुरुश्चैष जगदेतच्चराचरम्।
अहं चेति मतिर्यस्य नास्त्यसौ विश्वभोजकः।।३६।।

भावार्थ : ई शिवजी हईं, ई गुरुजी हईं आ ई चराचर जगत् बाटे आ ई हम हईं अईसन भेदबुद्धि होला ऊ विश्वभोजक ना होला ॥३६॥

अहं भृत्यः शिवः स्वामी शिष्योऽहं गुरुरेव वै।
इति यस्य मतिर्नास्ति स चाद्वैतपदे स्थितः।।३७।।

भावार्थ : हम सेवक हईं आ शिवजी स्वामी हईं, हम शिष्य हईं आ ई गुरुजी हईं अईसन जेकर भेदबुद्धि ना होला ऊ अद्वैतपद में स्थित होला ॥३७॥

पराहन्तामये स्वात्मपावके विश्वभास्वति।
इदन्ताहव्यहोमेन विश्वहोमीति कथ्यते।।३८।।

भावार्थ : विश्व के आभासित करेवाली पर अहन्तारूपी आतमारूपी आग में इदन्तारूपी हव्य के होम करेवाला विश्वहोमी कहल जाला ॥३८॥

अहं शिवो गुरुश्चाहमहं विश्वं चराचरम्।
यया विज्ञायते सम्यक् पूर्णाहन्तेति सा स्मृता।।३९।।

भावार्थ : हमही शिव हईं, हमही गुरु हईं, हम ही चर-अचर विश्व हईं — अईसन जेकरा द्वारा जानल जाला ऊ पूर्णाहन्ता मानल गईल बाटे ॥३९॥

आधारवह्नौ चिद्रूपे भेदजातं जगद्धविः।
जुहोति ज्ञानयज्वा यः स ज्ञेयो विश्वहव्यभुक्।।४०।।

भावार्थ : जवन ज्ञानजज्ञ के करेवाला चिद्रूपी आधारवह्नि आज्ञाचक्र में स्थित तेज में भेद समूहवाला जगद्रूपी हवि के हवन करेला ओकरा के विश्वहव्यभुक् समझे के चाही ॥४०॥

चिदाकारे पराकाशे परमानन्दभास्वति।
विलीनचित्तवृत्तीनां का वा विश्वक्रमस्थितिः।।४१।।

---

१. सहभोजन के तात्पर्य बाटे कि शिवजी, गुरुजी आ विश्व के अपना सरूप से अभिन्न रूप में परामर्श कईल।

भावार्थ : परम आनन्दरूपी सूरूज वाला चित्सरूप पराकाश में जेकर चित्तवृत्ति विलीन हो गईल बाटे ओकरा खातिर विश्वक्रम अर्थात् विश्वव्यवहार के का स्थिति हो सकेला ।।४१।।

निरस्तविश्वसम्बाधे निष्कलङ्के चिदम्बरे।
भावयेल्लीनमात्मानं सामरस्यस्वभावतः।।४२।।

सैषा विद्या परा ज्ञेया सत्तानन्दप्रकाशिनी।
मुक्तिरित्युच्यते सद्भिर्जगन्मोहनिवर्तिनी।।४३।।

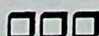
भावार्थ : विश्व के बाधा अर्थात् जनम-मरल आदि के बन्धन जहवाँ दूर हो गईल बाटे अईसन निष्कलङ्क चिदाकाश में अपना के सामरस्यसुभाव से लीन समझे के चाही। सज्जन लोग के द्वारा ई जगत् के मोह दूर करेवाली मुक्ति कहल जाले ।।४२-४३।।

भक्तादिधामार्पितधर्मयोगात्
प्राप्तैकभावः परमाद्भुतेन।
शिवेन चिद्व्योममयेन साक्षान्
मोक्षश्रियो भाजनतामुपैति।।४४।।

भावार्थ : भक्त आदि स्थल खातिर चढ़ावल धर्मयोग के कारन चिदाकाशमय परम अद्भुत शिवलिङ्ग के साथे ऐक्य के प्राप्त ऐक्यस्थली आदमी साक्षात् मोक्ष के पात्र होला ।।४४।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ ऐक्यस्थले ऐक्यस्थलादिचतुर्विधस्थलप्रसङ्गो नाम चतुर्दशः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के ऐक्यस्थल में ऐक्यस्थलादिचतुर्विधस्थलप्रसङ्ग नामवाला चौदहवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।१४।।



पञ्चदश: परिच्छेद: (पनहरवाँ परिच्छेद)

लिंगस्थलांतर्गत

भक्तस्थल

श्रीरेणुक उवाच—

षट्स्थलोक्तसदाचारसम्पन्नस्य यथाक्रमम्।
लिङ्गस्थलानि कथ्यन्ते जीवन्मुक्तिपराणि च।।१।।

भावार्थ : भक्तस्थल वर्णन — श्री रेणुकाचार्य कहनी— छव गो स्थल में से वर्णित सदाचार से भरल साधक के जीवन्मुक्तिपरक लिङ्गस्थल क्रम से कहल जा रहल बाटे ।।१।।

अगस्त्य उवाच—

भक्ताद्यैक्यावसानानि षडुक्तानि स्थलानि च।
लिङ्गस्थलानि कानीह कथ्यन्ते कति वा पुन:।।२।।

भावार्थ : अगस्त्य ऋषि कहनी— भक्तस्थल से लेके ऐक्यस्थल तक छव गो स्थल कहल गईल, लिङ्गस्थल कवन-कवन बाटे आ केतना बाटे ई बतलाई ।।२।।

गुर्वादिज्ञानशून्यान्ता भक्तादिस्थलसंश्रिता:।
स्थलभेदा: प्रकीर्त्यन्ते पञ्चाशत् सप्त चाधुना।।३।।

भावार्थ : भक्त आदि छव गो स्थल पर आश्रित दीक्षागुरु स्थल से लेके ज्ञानशून्य स्थल तक सत्तावन स्थल भेद अब बतलावल जईहे ।।३।।

आदौ नवस्थलानीह भक्तस्थलसमाश्रयात्।
कथ्यन्ते गुणसारेण नामान्येषां पृथक् शृणु।।४।।

भावार्थ : भक्तस्थल के आधार पर ईहाँ पहिले नव गो स्थल ओकरा गुनसन के अनुसार कहल जा रहल बाटे। ओकर अलगा-अलगा नाम सब के सुनी ।।४।।

दीक्षागुरुस्थलं पूर्वं तत: शिक्षागुरुस्थलम्।
प्रज्ञागुरुस्थलं चाथ क्रियालिङ्गस्थलं तत:।।५।।
भावलिङ्गस्थलं चाथ ज्ञानलिङ्गस्थलं तत:।
स्वयं चरं परं चेति तेषां लक्षणमुच्यते।।६।।

भावार्थ : पहिले दीक्षागुरुस्थल, ओकरा बाद शिक्षागुरुस्थल, फेर प्रज्ञागुरुस्थल, ओकरा बाद क्रियालिङ्गस्थल, फेर भावलिङ्गस्थल, ओकरा बाद ज्ञानलिङ्गस्थल, स्वयं-स्थल, परस्थल आ चरस्थल (ई नऊ गो स्थल बाटे अब) ए सब के लछन कहल जा रहल बाटे ॥५-६॥

दीक्षागुरुस्थल - (४५)

दीयते परमं ज्ञानं क्षीयते पाशबन्धनम्।
यया दीक्षेति सा तस्यां गुरुर्दीक्षागुरुः स्मृतः।।७।।

भावार्थ : **दीक्षागुरुस्थल वर्णन**— जेकरा द्वारा परम ज्ञान दिहल जाला आ पाशबन्धन के नाश कईल जाला ऊ दीक्षा कहल जाले। ओ विषय में जे गुरु होला ओकरा के दीक्षागुरु कहल जाला ॥७॥

गुणातीतं गुकारं च रूपातीतं रुकारकम्।
गुणातीतमरूपं च यो दद्यात् स गुरुः स्मृतः।।८।।

भावार्थ : (गुरु शब्द में) 'गु' के अरथ बाटे गुणातीत आ 'रु' के अरथ बाटे रूपातीत। अर्थात् जवन गुण से परे अर्थात् निर्गुन एवं रूपरहित तत्त्व के देनी अर्थात् ओकर ज्ञान करावेनी ऊ गुरु कहल गईल बानी ॥८॥

आचिनोति च शास्त्रार्थानाचारे स्थापयत्यलम्।
स्वयमाचरते यस्मादाचार्यस्तेन चोच्यते।।९।।

भावार्थ : जवन शास्त्र सन तात्पर्य के सञ्चयन करता आ अपना चेला लोग के ओकर ज्ञान करावेला आ खुद ओकर आचरन करेला एही कारन ओकरा के आचार्य कहल जाला ॥९॥

षडध्वातीतयोगेन यतते यस्तु देशिकः।
मायाब्धितारणोपायहेतुर्विश्वगुरुः शिवः।।१०।।

भावार्थ : जवन आचार्य षडध्वा से परे जोग के लेके प्रयत्न करेला ऊ देशिक कहल जाला। मायारूपी समुन्दर के पार जायेके उपाय बत्तलावेवाला विश्वगुरु बाटे ऊहे शिवजी भी बानी ॥१०॥

अखण्डं येन चैतन्यं व्यज्यते सर्ववस्तुषु।
आत्मयोगप्रभावेण स गुरुर्विश्वभासकः।।११।।

भावार्थ : जेकरा द्वारा अपना जोग के प्रभाव से सब चीज में अखण्ड चैतन्य के अभिव्यक्ति कईल जाला ऊ गुरु विश्व के प्रकाशक होला॥११॥

शिक्षागुरुस्थल - (४६)

दीक्षागुरुरसौ शिक्षाहेतु: शिष्यस्य बोधक:।
प्रश्नोत्तरप्रवक्ता च शिक्षागुरुरितीर्यते।।१२।।

भावार्थ : शिक्षागुरुस्थल वर्णन— ई दीक्षागुरु चेला के ज्ञान करावेवाला भईला के कारन ओकर शिक्षागुरु होवेनी। जवन (चेला के द्वारा कईल गईल) प्रश्न के उत्तर देबेवाला होवेनी ऊ शिक्षागुरु कहल जानी ॥१२॥

बोधकोऽयं समाख्यातो बोध्यमेतदिति स्फुटम्।
शिष्यो नियुज्यते येन स शिक्षागुरुरुच्यते।।१३।।

भावार्थ : ई (शिवसिद्धान्त के) बोधक अर्थात् परतत्त्व के प्रकाशक कहल गईल बानी। ई अर्थात् शिवजोग बोध्य बाटे। जवन चेला में ए ज्ञान के नियुक्त अर्थात् नियमित करे ऊ शिक्षागुरु कहल जानी ॥१३॥

संसारतिमिरोन्माथिशरच्चन्द्रमरीचय: ।
वाचो यस्य प्रवर्तन्ते तमाचार्यं प्रचक्षते।।१४।।

भावार्थ : संसाररूपी अन्हार के नाश करेके खातिर जेकर वाणी शरत्कालीन चनरमा के जईसन काम करेले (विद्वान् लोग) ऊहाँ के आचार्य कहेला ॥१४॥

ददाति य: पतिज्ञानं जगन्मायानिवर्तकम्।
अद्वैतवासनोपायं तमाचार्यवरं विदु:।।१५।।

भावार्थ : जे संसार माया के दूर करेवाला पतिज्ञान के देवेला ; अद्वैतभावना के उपायभूत ओ आदमी के आचार्य मानल गईल बाटे ॥१५॥

पूर्वपक्षं समादाय जगद्भेदविकल्पनम्।
अद्वैतकृतसिद्धान्तो गुरुरेष गुणाधिक:।।१६।।

भावार्थ : जगद्विषयक भेद के विकल्पना के पूर्वपक्ष में स्वीकार कर के सिद्धान्त पक्ष के रूप में अद्वैतवाद के स्थापित करेला ऊ गुणाधिक अर्थात् श्रेष्ठ बाटे ॥१६॥

सन्देहवनसन्दोहसमुच्छेदकुठारिका ।
यत्सूक्तिधारा विमला स गुरूणां शिखामणि:।।१७।।

भावार्थ : जवना आदमी के निर्मल सूक्तिधारा सन्देहरूपी जंगल के समूह के काटे खातिर कुल्हाड़ी जईसन होला ऊ गुरुलोग के शिखामणि बानी ॥१७॥

यत्सूक्तिदर्पणाभोगे निर्मले दृश्यते सदा।
मोक्षश्रीर्बिम्बरूपेण स गुरुर्भवतारक:।।१८।।

भावार्थ : जेकर निर्मल सूक्तिरूपी दर्पन के विस्तार में मोक्षलछिमी हमेशा परछाई के रूप में लऊकत रहेली। ऊ गुरुजी संसार से पार ले जाएवाला होनी ॥१८॥

शिष्याणां हृदयालेख्यं प्रद्योतयति यः स्वयम्।
ज्ञानदीपिकयाऽनेन गुरुणा कः समो भवेत्॥१९॥

भावार्थ : जे स्वयं अपना ज्ञानदीप से शिष्यलोग के हृदयचित्र के प्रकाशित करेला (अर्थात् चित्त के निर्मल बनाके ओईमें अपना सरूप शिव के प्रकाशित करेला) ऊ गुरुजी के जईसन के बाटे? अर्थात् केहू नईखे ॥१९॥

परमाद्वैतविज्ञानपरमौषधदानतः।
संसाररोगनिर्माथी देशिकः केन लभ्यते॥२०॥

भावार्थ : परम अद्वैतविज्ञानरूपी परम औषधि के दान से संसाररूपी रोग के नाश करेवाला आचार्य केकरा मिलेला? अर्थात् शिवजी के करुना से ही अईसन गुरुजी के उपलब्धि (प्राप्त) होला ॥२०॥

ज्ञानगुरुस्थल - (४७)

उपदेष्टोपदेशानां संशयच्छेदकारकः।
सम्यज्ज्ञानप्रदः साक्षादेष ज्ञानगुरुः स्मृतः॥२१॥

भावार्थ : ज्ञानगुरुस्थल वर्णन— (शिवयोग के) उपदेश के देबेवाला (उपदेष्टा), (चेला के) संशय के दूर करेवाला समीचीन ज्ञान के देबेवाला साक्षात् ज्ञानगुरुजी कहल गईल बानी ॥२१॥

निरस्तविश्वसम्भेदं निर्विकारं चिदम्बरम्।
साक्षात्करोति यो युक्त्या स ज्ञानगुरुरुच्यते॥२२॥

भावार्थ : विद्या के भेद के खतम करेवाला निर्विकार चिदाकाश के जे (अद्वैतशास्त्र) युक्ति के द्वारा प्रत्यक्ष करेनी ऊ ज्ञानगुरु कहल जानी ॥२२॥

कलङ्कवानसौ चन्द्रः क्षयवृद्धिपरिप्लुतः।
निष्कलङ्कस्थितो ज्ञानचन्द्रमा निर्विकारवान्॥२३॥

भावार्थ : ई (आकाश में लऊकत) चनरमा कलंकयुक्त आ ह्रास आ बुद्धि से पीड़ित बाटे बाकिर ज्ञानरूपी चन्द्र निष्कलङ्क आ निर्विकार बाटे ॥२३॥

पार्श्वस्थतिमिरं हन्ति प्रदीपो मणिनिर्मितः।
सर्वगामि तमो हन्ति बोधदीपो निरङ्कुशः॥२४॥

भावार्थ : मणि से बनल दीया लगे के अन्हार के दूर करेला बाकिर निर्बाध ज्ञानरूपी दीप सर्वव्यापी अन्हार के दूर करेला ॥२४॥

सर्वार्थसाधकज्ञानविशेषादेशतत्परः ।
ज्ञानाचार्यः समस्तानामनुग्रहकरः शिवः।।२५।।

भावार्थ : सगरी अरथ के साधनभूत विशेष ज्ञान के दान में तत्पर आ सबका ऊपर किरिपा करेवाला ज्ञानाचार्य साक्षात् शिवजी बानी ॥२५॥

कटाक्षचन्द्रमा यस्य ज्ञानसागरवर्धनः।
संसारतिमिरच्छेदी स गुरुर्जानपारगः।।२६।।

भावार्थ : जेकर अनुग्रहकटाक्षरूपी चनरमा ज्ञानरूपी सागर के बढ़ावेवाला होला, संसाररूपी अन्हार के नाश करेवाला ऊ गुरुजी ज्ञान के पार जाएवाला बानी ॥२६॥

बहिस्तिमिरविच्छेत्ता भानुरेष प्रकीर्तितः।
बहिरन्तस्तमश्छेदी विभुर्देशिकभास्करः।।२७।।

भावार्थ : ई (प्राकृतिक सूरूज) बाहर के अन्हार के नाश करेवाला बाटे बाकिर आचार्यरूपी व्यापक सूरूज बाहर आ भीतर[1] दुनु तरह के अज्ञानरूपी अन्हार के नाश करेनी ॥२७॥

कटाक्षलेशमात्रेण विना ध्यानादिकल्पनम्।
शिवत्त्वं भावयेद्यत्र स वेदः शाम्भवो भवेत्।।२८।।

भावार्थ : जेकरा से ध्यान आदि के कल्पना के बिना खाली किरिपा दृष्टि से शिवत्व के भावना उत्पन्न हो जाला ऊ शाम्भव ज्ञान कहल गईल बाटे ॥२८॥

शिववेदकरे ज्ञाने दत्ते येन सुनिर्मले।
जीवन्मुक्तो भवेच्छिष्यः स गुरुर्ज्ञानसागरः।।२९।।

भावार्थ : जेकरा द्वारा शिवभावना से उत्पन्न करेवाला निर्मल ज्ञान देहला पर चेला जीवन्मुक्त हो जाला ऊ गुरुजी ज्ञान के समुन्दर बानी ॥२९॥

क्रियालिङ्गस्थल - (४८)

गुरोर्विज्ञानयोगेन क्रिया यत्र विलीयते।
तत्क्रियालिङ्गमाख्यातं सर्वैरागमपारगैः।।३०।।

---

१. ई संसार शिव से भिन्न बाटे अईसन समझल बाहरवाला अज्ञान बाटे। हम शिव के अलगा बानी अईसन समझल भीतर वाला अज्ञान बाटे।

भावार्थ : क्रियालिङ्गस्थल वर्णन— गुरुजी के विज्ञानयोग से क्रिया जेकरा में लीन हो जाले सगरी आगम के पारङ्गत ओकरा के क्रियालिङ्ग कहेले ॥३०॥

परानन्दचिदाकारं परब्रह्मैव केवलम्।
लिङ्गं सद्रूपतापन्नं लक्ष्यते विश्वसिद्धये।।३१।।

भावार्थ : परानन्द चिदाकार अऊरी खाली अर्थात् अद्वितीय परब्रह्म विश्व के रचना (अर्थात् सगरी क्रिया) के सिद्धि के खातिर सद्रूपता (स्थूलरूपता) के प्राप्त प्रतीत होला ॥३१॥

लिङ्गमेव परं ज्योतिर्भवति ब्रह्म केवलम्।
तस्मात् तत्पूजनादेव सर्वकर्मफलोदयः।।३२।।

भावार्थ : परजोती खाली परब्रह्म ही लिङ्ग (रूप में स्थित बाटे) एही से ओकर पूजा कईला से सगरी कर्मफल के उदय होला ॥३२॥

परित्यज्य क्रियाः सर्वा लिङ्गपूजैकतत्पराः।
वर्तन्ते योगिनः सर्वे तस्माल्लिङ्गं विशिष्यते।।३३।।

भावार्थ : सगरी जोगीजन सगरी क्रिया के छोड़के खाली लिङ्गपूजा में ही लागल रहेले एही कारन क्रियालिङ्ग श्रेष्ठ बाटे ॥३३॥

यज्ञादयः क्रियाः सर्वा लिङ्गपूजांशसंमिताः।
इति यत्पूज्यते सिद्धैस्तत्क्रियालिङ्गमुच्यते।।३४।।

भावार्थ : यज्ञ आदि सगरी क्रिया लिङ्गपूजा के अंशमात्र के बराबर बाटे एही भावना से जेकर सिद्ध लोग पूजा करेला ऊ क्रियालिङ्ग कहल जाला ॥३४॥

किं यज्ञैरग्निहोत्राद्यैः किं तपोभिश्च दुश्चरैः।
लिङ्गार्चनरतिर्यस्य स सिद्धः सर्वकर्मसु।।३५।।

भावार्थ : अग्निहोत्र आदि जज्ञ आ कृच्छ्र चान्द्रायण आदि दुश्चर तपस्यासन से का परयोजन? जेकर लिङ्गार्चन में मन लागल बाटे ऊ सगरी काम में सिद्ध बाटे ॥३५॥

ब्रह्मविष्णवादयः सर्वे विबुधा लिङ्गमाश्रिताः।
सिद्धाः स्वस्वपदे भान्ति जगत्तन्त्राधिकारिणः।।३६।।

भावार्थ : ब्रह्मा, विसनुजी आदि सगरो देवता लिङ्ग के ऊपरा आश्रित भईला से अपना-अपना जगहाँ पर सिद्ध अर्थात् स्थित बा लो आ जगत् के तन्त्र सृजन आदि के अधिकारी ब्रह्मा, विसनुजी आदि सगरी देवता लिङ्ग के ऊपर आश्रित होके अपना-अपना पद पर चमकत बा लो ॥३६॥

भावलिंगस्थल - (४९)

क्रिया यथा लयं प्राप्ता तथा भावोऽपि लीयते।
यत्र तद्देशिकैरुक्तं भावलिङ्गमिति स्फुटम्।।३७।।

भावार्थ : **भावलिङ्गस्थल वर्णन—** जवना तरह क्रिया (क्रियालिङ्ग में) लीन हो जाला ओकरा के आचार्य लोग स्पष्ट रूप से भावलिङ्ग कहेला ।।३७।।

भावेन गृह्यते देवो भगवान् परमः शिवः।
किं तेन क्रियते तस्य नित्यपूर्णो हि स स्मृतः।।३८।।

भावार्थ : भगवान् परम शिव भाव (अर्थात् निर्मल हृदय के भावना) के द्वारा वश में हो जानी। ओकरा (अर्थात् बाहरी पूजा आदि) से ऊहाँ के का लेबे-देबे के बाटे ? ऊहाँ के त हमेशा पूरा कहल गईल बानी ।।३८।।

अखण्डपरमानन्दबोधरूपः परः शिवः।
भक्तानामुपचारेण भावयोगात् प्रसीदति।।३९।।

भावार्थ : परमशिव अखण्ड परमानन्द आ ज्ञानसरूप बानी। भक्तन के उपचार (अर्थात् पूजनसामग्री) के द्वारा ऊहाँ के भाव के कारन ही खुश होवेनी ।।३९।।

मृच्छिलाविहिताल्लिङ्गाद्भावलिङ्गं विशिष्यते।
निरस्तसर्वदोषत्वाद् ज्ञानमार्गप्रवेशनात्।।४०।।

भावार्थ : माटी आ पत्थर के लिङ्ग के अपेक्षा भावलिङ्ग विशिष्ट अर्थात् बढ़िया होला काहे से कि ओई में सगरी दोष खतम हो जाले आ ऊ (भक्तन के) ज्ञान के रास्ता में प्रवेश करावेला ।।४०।।

विहाय बाह्यलिङ्गानि चिल्लिङ्गं मनसि स्मरन्।
पूजयेद् भावपुष्पैर्यो भावलिङ्गीति कथ्यते।।४१।।

भावार्थ : जवन भक्त बाहरी लिङ्ग सन के छोड़के चित् लिङ्ग के मन में सुमिरन करत भावफूल से ऊहाँ के पूजा करेला ऊ भावलिङ्गी कहल जाला ।।४१।।

मूलाधारेऽथवा चित्ते भ्रूमध्ये वा सुनिर्मलम्।
दीपाकारं यजन् लिङ्गं भावद्रव्यैः स योगवान्।।४२।।

भावार्थ : मूलाधार, हृदय अथवा भ्रूमध्य में जवन निर्मल दीपकलिका के आकारवाला लिङ्ग के भावद्रव्य सन से पूजा करेला ऊ शिवजोगी होला ।।४२।।

स्वानुभूतिप्रमाणेन ज्योतिर्लिङ्गेन संयुतः।
शिलामृद्दारुसंभूतं न लिङ्गं पूजयत्यसौ।।४३।।

भावार्थ : जे अपना अनुभव से परमाणित ज्योतिर्लिङ्ग से युक्त होला। ऊ शिला, माटी आ लकड़ी के लिङ्ग के पूजा ना करेला ।।४३।।

क्रियारूपा तु या पूजा सा ज्ञेया स्वल्पसंविदाम्।
आन्तरा भावपूजा तु शिवस्य ज्ञानिनां मता।।४४।।

भावार्थ : शिवजी के जवन क्रियारूपी (बाहरी) पूजा बाटे ऊ कम ज्ञानी लोग के द्वारा कईल जाला। ऊहाँ के आन्तरिक भावपूजा ज्ञानीलोग के पूजा मानल गईल बाठे।।४४।।

ज्ञानलिङ्गस्थल - (५०)

तद्भावज्ञापकज्ञानं लयं यत्र समश्नुते।
तज्ज्ञानलिङ्गमाख्यातं शिवतत्त्वार्थकोविदै:।।४५।।

भावार्थ : ज्ञानलिङ्गस्थल वर्णन— ओ (अर्थात् शिव) भाव के ज्ञान देबेवाला ज्ञान जेकरा में लीन हो जाला शिवतत्त्व रूपी अरथ (अथवा शिवतत्त्व के अरथ) के जानेवाला लोग ओकरा के ज्ञानलिङ्ग कहेला ।।४५।।

त्रिमूर्तिभेदनिर्मुक्तं त्रिगुणातीतवैभवम्।
ब्रह्म यद्बोध्यते तत्तु ज्ञानलिङ्गमुदाहृतम्।।४६।।

भावार्थ : (ब्रह्मा, विष्णु आ रुद्ररूपी) त्रिमूर्ति के भेद से रहित, (सत्त्व, रजस्, तमस् इन) तीनु गुण सन से परे वैभववाला ब्रह्म जेकरा द्वारा बतलावल जाला ऊ ज्ञानलिङ्ग कहल गईल बानी ।।४६।।

स्थूले क्रियासमापत्ति: सूक्ष्मे भावस्य सम्भव:।
स्थूलसूक्ष्मपदातीते ज्ञानमेव परात्मनि।।४७।।

भावार्थ : स्थूल (लिङ्ग) के विषय में क्रिया के समापत्ति (अर्थात् प्राप्ति) होला अर्थात् क्रिया करे के पड़ेला। सूक्ष्म लिङ्ग के सन्दर्भ में भावमय सामग्री के आवश्यकता होला। जवन स्थूल आ सूक्ष्म दुनु स्तर से ऊपर बाटे ऊ परातमा के विषय में ज्ञान ही (पूजासम्भार) होला ।।४७।।

कल्पितानि हि रूपाणि स्थूलानि परमात्मन:।
सूक्ष्माण्यपि च तै: किं वा परबोधं समाचरेत्।।४८।।

भावार्थ : स्थूल आ सूक्ष्म दुनु परमातमा के ही माया द्वारा कल्पित रूप बाटे। ओकरा से का लेबे-देबे के बाटे अर्थात् ऊ मोक्षसाधन ना हो सकेला। परबोधरूप तृप्तिलिङ्ग के आचरन में रखे के चाही अर्थात् ज्ञान विषय बनावे के चाही ।।४८।।

परात्परं तु यदब्रह्म परमानन्दलक्षणम्।
शिवाख्यं ज्ञायते येन ज्ञानलिङ्गीति कथ्यते।।४९।।

भावार्थ : जे परात्पर परमानन्दरूप शिव नामवाला ब्रह्म के जानेला ऊ ज्ञानलिङ्गी कहल जाला ।।४९।।

बाह्यक्रियां परित्यज्य चिन्तामपि मानसीम्।
अखण्डज्ञानरूपत्वं यो भजेन्मुक्त एव सः।।५०।।

भावार्थ : जे भक्त बाहरी क्रिया आ मानस ध्यान के छोड़के अखण्ड ज्ञानरूपता के भजन अर्थात् सेवन करेला ऊ मुक्त ही बाटे ।।५०।।

स्वयस्थल - (५१)

तद्भावज्ञापकं ज्ञानं यत्र ज्ञाने लयं व्रजेत्।
तद्वानेष समाख्यातः स्वाभिधानो मनीषिभिः।।५१।।

भावार्थ : **स्वयंस्थल वर्णन**— ओ अर्थात् भावलिङ्ग के ज्ञान करावेवाला ज्ञान जवना ज्ञान में लीन हो जाला मनीषी लोग के द्वारा ऊ ज्ञानवाला ई व्यक्ति स्वयं नाम से कहल जाला ।।५१।।

स्वच्छन्दाचारसन्तुष्टो ज्योतिर्लिङ्गपरायणः।
आत्मस्थसकलाकारः स्वाभिधो मुनिसत्तमः।।५२।।

भावार्थ : स्वच्छन्द आचार से सन्तुष्ट, ज्योतिर्लिङ्ग के पूजा में तत्पर, अपना आतमा में सगरी आकार आ विश्व के रखेवाला मुनिसत्तम स्वयं कहल जाला ।।५२।।

निर्ममो निरहङ्कारो निरस्तक्लेशपञ्चकः।
भिक्षाशी समबुद्धिश्च मुक्तप्रायो मुनिर्भवेत्।।५३।।

भावार्थ : विषयसन के प्रति ममतारहित, शरीर में आत्मभावनारूप अहङ्कार से रहित आ (अविद्या आदि) पाँच गो कलेशसन के खतम कर देबेवाला, भिक्षा माँगके भोजन करेवाला समबुद्धि मुनि मुक्तप्राय होवेनी ।।५३।।

यदृच्छालाभसन्तुष्टो भस्मनिष्ठो जितेन्द्रियः।
समवृत्तिर्भवेद्योगी भिक्षुके वा नृपेऽथवा।।५४।।

भावार्थ : जेतना आ जवन कुछु मिलेला ओकरा से सन्तुष्ट, भसम धारन करे में श्रद्धा रखेवाला, जितेन्द्रिय, भिक्षामांगेवाला अथवा राजा के विषय में बराबर बुद्धि आ बेवहार वाला शिवजोगी होला ।।५४।।

पश्यन् सर्वाणि भूतानि संसारस्थानि सर्वशः।
स्मयमानः परानन्दे लीनात्मा वर्तते सुधीः।।५५।।

भावार्थ : विद्वान् साधक परानन्द में सदा लीन रहेला लो एही से संसार में रहेवाला सगरी प्राणीलोग मुस्कुराहट (अथवा आश्चर्य) के साथे देखत बेवहार करेला लो ।।५५।।

ध्यानं शैवं तथा ज्ञानं भिक्षा चैकान्तशीलता।
यतेश्चत्वारि कर्माणि न पञ्चममिहेष्यते।।५६।।

भावार्थ : शिव के ज्ञान, शिव के ध्यान, भिक्षा आ एकान्तवास (अकेले रहल) ई चार गो काम शिवजोगी लोग के होला। ए संसार में ओकरा खातिर पाचवाँ काम नईखे ॥५६॥

चरस्थल - (५२)

स्वरूपज्ञानसम्पन्नो ध्वंस्ताहंममताकृतिः।
स्वयमेव स्वयं भूत्वा चरतीति चराभिधः।।५७।।

भावार्थ : चरस्थल वर्णन— जे सरूप के ज्ञान से भरल बाटे जे अहङ्कार आ ममकार (अर्थात् हम आ हमार) ए भावना कर नाश के देहले बाटे आ ए तरह स्वयंस्थली होके स्वयं ए संसार में घूमता ओकरा के चरस्थल कहल जाला ॥५७॥

कामक्रोधादिनिर्मुक्तः शान्तिदान्तिसमन्वितः।
समबुद्ध्या चरेद् योगी सर्वत्र शिवबुद्धिमान्।।५८।।

भावार्थ : काम, क्रोध आदि से रहित, शम, दम आदि से जुड़ल सबका विषय में शिवबुद्धि रखेवाला जोगी के सब जगहा समत्व बुद्धि के बेवहार करे के चाही ॥५८॥

इदं मुख्यमिदं हीनमिति चिन्तामकल्पयन्।
सर्वत्र सञ्चरेद् योगी सर्वं ब्रह्मेति भावयन्।।५९।।

भावार्थ : ई मुख्य बाटे आ ई मुख्य नईखे अईसन विचार ना करत आ सबकुछ ब्रह्म बाटे अईसन भावना करत जोगी सब जगहा घूमल करे ॥५९॥

न सम्मानेषु सम्प्रीतिं नावमानेषु च व्यथाम्।
कुर्वाणः सञ्चरेद्योगी कूटस्थे स्वात्मनि स्थितः।।६०।।

भावार्थ : सम्मान भईला पर खुशी आ अपमान भईला पर दुःख ना करत शिवजोगी के चाही कि ऊ कूटस्थ आतमा में रहके बेवहार करे ॥६०॥

अप्रकृतैर्गुणैः स्वीयैः सर्वं विस्मापयन् जनम्।
अद्वैतपरमानन्दमुदितो देहिवच्चरेत्।।६१।।

भावार्थ : अपना अलौकिक गुन सन से सगरी संसार के आश्चर्यचकित करत आ अद्वैत परमानन्द में आनन्दित (ऊ शिवयोगी साधारन) आदमी के जईसन आचरन करें ॥६१॥

न प्रपञ्चे निजे देहे न धर्मे न च दुष्कृते।
गतवैषम्यधीर्धीरो यतिश्चरति देहिवत्।।६२।।

भावार्थ : जोगी परपञ्च में अर्थात् संसार में अपना शरीर धरम आ अधरम के विषय में वैषम्य बुद्धि से रहित होके साधारन देही के जईसन बेवहार करे ॥६२॥

प्राकृतैश्वर्यसम्पत्तिपराङ्मुखमनःस्थितिः।
चिदानन्दनिजात्मस्थो मोदते मुनिपुङ्गवः।।६३।।

भावार्थ : प्रकृति के ऐश्वर्य वैभव के प्रति पराङ्मुख अर्थात् बिना इच्छा, मनवाला एही से चित्, आनन्द, सरूप आतमा में स्थित अर्थात् आतमा में हमेशा साक्षात्कार करेवाला मुनिश्रेष्ठ आनन्दमय रहेला ।।६३।।

परस्थल - (५३)

स्वयमेव स्वयं भूत्वा चरतः स्वस्वरूपतः।
परं नास्तीति बोधस्य परत्वमभिधीयते।।६४।।

भावार्थ : परस्थल वर्णन— अपने आप ही स्वयं होके अपना सरूप से आचरन करेवाला (शिवजोगी) के (शिव के अतिरिक्त) केहू दोसर नईखे। ई ज्ञान ओकर परत्व कहल जाला ।।६४।।

स्वतन्त्रः सर्वकृत्येषु स्वं परत्वेन भावितः।
तृणीकुर्वन् जगज्जालं वर्तते शिवयोगिराट्।।६५।।

भावार्थ : सगरी काम में स्वतन्त्र अपना के परतत्त्व के रूप में समझेवाला आ संसार के खरपतवार नीयर समझके तुच्छ मानेवाला शिवयोगविराट् होला ।।६५।।

वर्णाश्रमसमाचारमार्गनिष्ठापराङ्मुखः ।
सर्वोत्कृष्टं स्वमात्मानं पश्यन् योगी तु मोदते।।६६।।

भावार्थ : वर्ण आश्रम के आचरन के रास्ता से पराङ्मुख होत शिवजोगी अपना के पर अर्थात् सबसे बढिया समझत आनन्दित होला ।।६६।।

विश्वातीतं परं ब्रह्म शिवाख्यं चित्स्वरूपकम्।
तदेवाहमिति ज्ञानी सर्वोत्कृष्टः स उच्यते।।६७।।

भावार्थ : विश्वातीत शिवनामवाला चित्सरूप ब्रह्म पर अर्थात् अन्तिम तत्त्व बाटे। हम ऊहे हई ए तरह के ज्ञान रखेवाला पर अर्थात् सर्वोत्कृष्ट कहल जाला ।।६७।।

अचलं ध्रुवमात्मानमनुपश्यन्निरन्तरम्।
निरस्तविश्वविभ्रान्तिर्जीवन्मुक्तो भवेन्मुनिः।।६८।।

भावार्थ : अपना के निरन्तर अचल ध्रुव समझेवाला आ जेकर सगरी भरम दूर हो गईल बाटे अईसन मुनि जीवन्मुक्त होला ।।६८।।

ब्रह्माद्याः किं नु कुर्वन्ति देवताः कर्ममार्गगाः।
कर्मातीतपदस्थस्य स्वयं ब्रह्मस्वरूपिणः।।६९।।

भावार्थ : करम से परे अर्थात् ऊर्ध्व पद में स्थित स्वयं ब्रह्मरूपी जोगी के करमजोगी ब्रह्मा आदि देवगन का कर सकेला लो ॥६९॥

स्वेच्छया सञ्चरेद्योगी विमुञ्चन् देहमानिताम्।
दर्शनैः स्पर्शनैः सर्वानज्ञानपि विमोचयेत्।।७०।।

भावार्थ : देह में (अहं भाव आ मम भाव) के तियाग करेवाला जोगी ए संसार में स्वेच्छा से आचरन करेला आ अपना दर्शन आ स्पर्श से सगरी अज्ञानीलोग के विमुक्त करा देला ॥७०॥

नित्ये निर्मलभावने निरुपमे निर्धूतविश्वभ्रमे
सत्तानन्दचिदात्मके परशिवे साम्यं गतः संयमी।
प्रध्वस्ताश्रमवर्णधर्मनिगलः स्वच्छन्दसञ्चारवान्
देहीवाद्भुतवैभवो विजयते जीवन्विमुक्तः सुधीः।।७१।।

भावार्थ : नित्य, निर्मल, भावरूप, अनुपम, सगरी भरम के नाशवाला, सत् चित् आनन्द सरूप परशिव के साथे सामरस्य के स्थापित करेवाला संजमी आश्रम, वर्ण धरम के बन्धक के शृंखला के तुरके स्वच्छन्द अर्थात् अपना इच्छानुसार विचरन करेवाला विद्वान् अद्भूत वैभव से युक्त भईल जीवन्मुक्त होके भी सामान्य जन के जईसन बेवहार करेला ॥७१॥

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां
शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये
श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ
लिङ्गस्थलान्तर्गतभक्तस्थले दीक्षागुरुस्थलादि
नवविधस्थलप्रसङ्गो नाम पञ्चदशः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के भक्तस्थल में दीक्षागुरुस्थलादिनवविधस्थलप्रसङ्ग नामवाला पनरहवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।१५।।



षोडश: परिच्छेद: (सोलहवाँ परिच्छेद)

लिङ्गस्थलान्तर्गत
माहेश्वरस्थल

अगस्त्य उवाच—

स्थलानां नवकं प्रोक्तं भक्तस्थलसमाश्रयम्।
माहेश्वरस्थले सिद्धं स्थलभेदं वदस्व मे।।१।।

भावार्थ : क्रियागमस्थल वर्णन— अगस्त्य ऋषि कहनी— (हे रेणुकाचार्य! रऊवा) भक्तस्थल के भीतर के नवस्थल सन के वर्णन कईनी। माहेश्वर स्थल में सिद्ध स्थलभेद के हमरा के बतलाईं ।।१।।

माहेश्वरस्थले सन्ति स्थलानि नव तापस।
क्रियागमस्थलं पूर्वं ततो भावागमस्थलम्।।२।।

ज्ञानागमस्थलं चाथ सकायस्थलमीरितम्।
ततोऽकायस्थलं प्रोक्तं परकायस्थलं ततः।।३।।

धर्माचारस्थलं चाथ भावाचारस्थलं ततः।
ज्ञानाचारस्थलं चाथ क्रमादेषां भिदोच्यते।।४।।

भावार्थ : रेणुकाचार्य कहनी— हे तपस्वी! माहेश्वरस्थल में नव गो स्थल बाटे। पहिला क्रियागमस्थल ओकरा बाद भावागमस्थल, ओकरा बाद ज्ञानागमस्थल फेर सकायस्थल कहल गईल बाटे। ओकरा बाद अकायस्थल फेर परकायस्थल कहल गईल बाटे। धर्माचारस्थल फेर भावात्मकस्थल आ ज्ञानाचारस्थल बाटे। अब क्रम से एकर भेद कहल जा रहल बाटे ।।२-४।।

क्रियागमस्थल - (५४)

शिवो हि परमः साक्षात् पूजा तस्य क्रियोच्यते।
तत्परा आगमा यस्मात् तदुक्तोऽयं क्रियागमः।।५।।

भावार्थ : परलिङ्ग शिवयोगी साक्षात् शिव होनी। ऊहाँ के पूजा क्रिया कहल जाला। ओ क्रिया के बतावेवाला आगम क्रियागम कहल गईल बाटे ।।५।।

प्रकाशते यथा नाग्निररण्यां मथनं विना।
क्रियां विना तथान्तस्थो न प्रकाशो भवेच्छिवः।।६।।

भावार्थ : जवना तरह अग्नि (प्रच्छन्न रूप से स्थित) अरणि के मन्थन के प्रकट बिना ना रहेला ओही तरह क्रिया के बिना अन्दर स्थित शिव प्रकाशित ना होला ।।६।।

न यथा विधिलोपः स्यद्यथा देवः प्रसीदति।
यथागमः प्रमाणं स्यत्तथा कर्म समाचरेत्।।७।।

भावार्थ : जवना तरह से विधान अर्थात् इति कर्तव्यता के लोप ना होवे आ जवना विधि से देव अर्थात् शिवजी खुश होईं आ जवना में आगम प्रमान हो (अर्थात् आगम जवना करम के करे खातिर कहेला) ओ तरह के करम करे के चाही ।।७।।

विधिः शिवनियोगोऽयं यस्माद्विहितकर्मणि।
शिवाराधनबुद्ध्यैव निरतः स्याद्विचक्षणः।।८।।

भावार्थ : आगम शास्त्रसन के द्वारा विहित करम के विषय में ई शिवजी के आज्ञा बाटे अईसन समझके विद्वान् के शिवजी के पूजा वाली बुद्धि से (पूजा करम में) लागे के चाही ।।८।।

गुरोरादेशमासाद्य पूजयेत् परमेश्वरम्।
पूजिते परमेशाने पूजिताः सर्वदेवताः।।९।।

भावार्थ : (शिवभक्त) गुरुजी के आज्ञा लेके परमेसर शिवजी के पूजा करे काहे से कि शिवजी के पूजा भईला पर सब देवलोग के पूजा हो जाला ।।९।।

सदा शिवार्चनोपायसामग्रीव्यग्रमानसः।
शिवयोगरतो योगी मुच्यते नात्र संशयः।।१०।।

भावार्थ : शिवजी के पूजा के सामान के जुटावे में हमेशा व्याकुल चित्तवाला आ शिवजोग में हमेशा लागल जोगी मुक्त हो जाला एईमें सन्देह नईखे ।।१०।।

अन्धपङ्गुवदन्योन्यसापेक्षे ज्ञानकर्मणी।
फलोत्पत्तौ विरक्तस्तु तस्मात्तद्द्वयमाचरेत्।।११।।

भावार्थ : आन्हर आ लंगड़ के जईसन ज्ञान आ करम परस्पर सापेक्ष बाटे । एही कारन फल के उत्पत्ति में अनासक्त होत जोगी के ऊ दुनुन के करे के चाही ।।११।।

ज्ञाने सिद्धेऽपि विदुषां कर्मापि विनियुज्यते।
फलाभिसन्धिरहितं तस्मात् कर्म न सन्त्यजेत्।।१२।।

भावार्थ : विद्वान् अर्थात् ज्ञानीलोग के ज्ञान सिद्ध अर्थात् प्राप्त भईला पर भी कर्म के करे के होला। एही से यद्यपि फल इच्छा से रहित होवे तथापि करम के तियाग ना करे ॥१२॥

आचार एव सर्वेषामलङ्कााराय कल्प्यते।
आचारहीनः पुरुषो लोके भवति निन्दितः।।१३।।

भावार्थ : आचार ही सबके अलङ्कार होला। आचारहीन पुरुष लोक, निन्दा के पात्र होला ॥१३॥

ज्ञानेनाचारयुक्तेन प्रसीदति महेश्वरः।
तस्मादाचारवान् ज्ञानी भवेदादेहपातनाम्।।१४।।

भावार्थ : सदाचारयुक्त ज्ञान से महेश्वर खुश होनी। एही से ज्ञानी के शरीर के मरे के बेरा ले आचारवान् होवे के चाही ॥१४॥

भावागमस्थल - (५५)

भावचिह्नानि विदुषो यानि सन्ति विरागिणः।
तानि भावागमत्वेन वर्तन्ते सर्वदेहिनाम्।।१५।।

भावार्थ : भावागमस्थल वर्णन— वैराग्ययुक्त विद्वान् के जे भावचिन्ह होला ऊहे सगरी सामान्य जन के भावागम अर्थात् भावरूपी आगमशास्त्र के रूप में प्रमाण हो जाला ॥१५॥

शिवोऽहमिति भावोऽपि शिवतापत्तिकारणम्।
न ज्ञानमात्रं नाचारो भावयुक्तः शिवो भवेत्।।१६।।

भावार्थ : 'शिवोऽहम्' (हम शिव हईं) ईं भाव भी शिवत्व के पावे के कारन होला। ना खाली ज्ञान अथवा खाली आचार युक्त वरन् खाली भावयुक्त भक्त शिव हो जाला ॥१६॥

ज्ञानं वस्तुपरिच्छेदो ध्यानं तद्भावकारणम्।
तस्माद् ज्ञाते महादेवे ध्यानयुक्तो भवेत्सुधीः।।१७।।

भावार्थ : ज्ञान वस्तु के परिच्छेद अर्थात् ओकर असली सरूप के निर्णायक होला। ध्यान ओकरा भाव के कारन होला। एही कारन महादेवजी के ज्ञान भईला पर भी विद्वान् के शिवध्यान से जुड़ल रहे के चाही ॥१७॥

अन्तर्बहिश्च सर्वत्र परिपूर्णं महेश्वरम्।
भावयेत् परमानन्दलब्धये पण्डितोत्तमः।।१८।।

भावार्थ : उत्तम पण्डित के चाही कि ऊ परमानन्द के पावे खातिर शरीर के भीतर आ बाहर सब जगह परिपूर्ण महेश्वर के ध्यान आ ऊहाँ के भावना करे ॥१८॥

अर्थहीना यथा वाणी पतिहीना यथा सती।
श्रुतिहीना यथा बुद्धिर्भावहीना तथा क्रिया।।१९।।

भावार्थ : जवना तरह से अरथ से रहित बानी, पति से रहित सती, वेदज्ञान से रहित बुद्धि होले ओही तरह से शिवभावना से रहित क्रिया (बेकार) होवेले ॥१९॥

चक्षुर्हीनो यथा रूपं न किञ्चिद्वीक्षितुं क्षमः।
भावहीनस्तथा योगी न शिवं द्रष्टुमीश्वरः।।२०।।

भावार्थ : जवना तरह से आँख से हीन आदमी कुछुओ देखे में समर्थ ना होला ओही तरह से भावहीन जोगी शिव के साक्षात्कार करे में समर्थ ना होला ॥२०॥

भावशुद्धेन मनसा पूजयेत्परमेष्ठिनम्।
भावहीनां न गृह्णाति पूजां सुमहतीमपि।।२१।।

भावार्थ : एही से आदमी के चाही कि ऊ शुद्धभाव से युक्त मन के द्वारा परमेसर शिवजी के पूजा करे। केतना भी बड़हन पूजा जदि भाव से हीन बाटे त परमेसर ओकरा के स्वीकार ना करेनी ॥२१॥

नैरन्तर्येण सम्पन्ने भावे ध्यातुं शिवं प्रति।
तद्भावो जायते यद्वत् क्रिमेः कीटस्य चिन्तनात्।।२२।।

भावार्थ : जईसे कीड़ा भौंरा के ध्यान करत-करत भौंरा हो जाला ओईसे ही शिवजी के प्रति ध्यान के निरन्तरता से सम्पन्न भईला पर जोगी भी शिव हो जाला ॥२२॥

निष्कलङ्कं निराकारं परब्रह्म शिवाभिधम्।
निर्ध्यातुमसमर्थोऽपि तद्विभूतिं विभावयेत्।।२३।।

भावार्थ : जदि कवनो भक्त शिवनामवाला निष्कलङ्क निराकार परब्रह्म के ध्यान करे में समर्थ ना होवे तब भी शिवजी के सर्वज्ञता आदि ऐश्वर्य के ध्यान करे ॥२३॥

ज्ञानागमस्थल - (५६)

परस्य ज्ञानचिह्नानि यानि सन्ति शरीरिणाम्।
तानि ज्ञानागमत्वेन प्रवर्तन्ते विमुक्तये।।२४।।

भावार्थ : ज्ञानागमस्थल वर्णन— पर अर्थात् भावागम से भरल ज्ञानजोगी के जवन ज्ञान के चिन्हासी होला ऊहे सामान्य देहधारन करेवाला लोग के खातिर ज्ञानागम के रूप में व्यवहृत होला ।।२४।।

भावेन किं फलं पुंसां कर्मणा वा किमिष्यते।
भावकर्मसमायुक्तं ज्ञानमेव विमुक्तिदम्।।२५।।

भावार्थ : खाली भाव से आदमी के कवनो फल ना मिलेला। खाली करम से भी कवनो फायदा नईखे। भाव आ करम दुनु से जुड़ल ज्ञान ही मोक्ष के देबेवाला होला ।।२५।।

केवलं कर्ममात्रेण जन्मकोटिशतैरपि।
नात्मनां जायते मुक्तिर्ज्ञानं मुक्तेर्हि कारणम्।।२६।।

भावार्थ : खाली करम के द्वारा करोड़न जनम सन में भी आतमा लोग के मुक्ति ना होला। ज्ञान ही मुक्ति के खाली एगो कारन बाटे ।।२६।।

ज्ञानहीनं सदा कर्म पुंसां संसारकारणम्।
तदेव ज्ञानयोगेन संसारविनिवर्तकम्।।२७।।

भावार्थ : पुरुषलोग के ज्ञानहीन करम हमेशा संसार अर्थात् पुनर्जनम के कारन बनेला। ऊहे करम ज्ञान से युक्त क लेहला पर संसार के विनिवर्तक अर्थात् मोक्ष के देबेवाला होला ।।२७।।

फलं क्रियावतां पुंसां स्वर्गाद्यं नश्वरं यतः।
तस्मात्स्थायिफलप्राप्त्यै ज्ञानमेव समभ्यसेत्।।२८।।

भावार्थ : चूँकि क्रिया करेवाला पुरुष लोग के अर्थात् जीव सन के क्रिया के द्वारा मिलल सरग आदि फल नाश हो जाएवाला होला। एही से स्थायी अर्थात् अनश्वर फल के पावे खातिर ज्ञान के अभ्यास करे के चाही ।।२८।।

शास्त्राभ्यासादियत्नेन सद्गुरोपुपदेशतः।
ज्ञानमेव समभ्यस्येत् किमन्येन प्रयोजनम्।।२९।।

भावार्थ : शास्त्र के अभ्यास आदि प्रयास आ सद्गुरु के उपदेश के द्वारा ज्ञान के ही अभ्यास करे के चाही। अऊरी साधन सन से का परयोजन? ।।२९।।

ज्ञानं परशिवाद्वैतपरिपाकविनिश्चयः।
येन संसारसम्बन्धविनिवृत्तिर्भवेत् सताम्।।३०।।

भावार्थ : ज्ञान के अरथ बाटे— परशिव के अद्वैत भाव के परिपाक के सन्दर्भ में एकदमे पक्का अवधारना। एही के द्वारा महातमा लोग के संसार के निवृत्ति प्राप्त होला ॥३०॥

शिवात्मकमिदं सर्वं शिवादन्यन्न विद्यते।
शिवोऽहमिति या बुद्धिस्तदेव ज्ञानमुत्तमम्।।३१।।

भावार्थ : ई सगरी शिवजी ही हईं शिव से अलगा अऊरी कुछु नईखे, हम भी शिव ही हईं अईसन जेकर बुद्धि बाटे ऊहे सबसे बढिया ज्ञान बाटे ॥३१॥

अन्धो यथा पुरस्थानि वस्तूनि च न पश्यति।
ज्ञानहीनस्तथा देही नात्मस्थं वीक्षते शिवम्।।३२।।

भावार्थ : जवना तरह से आन्हर आदमी सामने ही रखल चीज के ना देखेला ओही तरह से ज्ञानहीन जीव अपना भीतर स्थित शिव के ना देख पावेला ॥३२॥

शिवस्य दर्शनात् पुंसां जन्मरोगनिवर्तनम्।
शिवदर्शनमप्याहुः सुलभं ज्ञानचक्षुषाम्।।३३।।

भावार्थ : शिव के साक्षात्कार भईला से आदमी सन के जनमरूपी रोग दूर हो जाला। ज्ञानरूपी आँखवाला महातमा लोग के शिव के दर्शन भी सुलभ हो जाला ॥३३॥

दीपं विना यथा गेहे नान्धकारो निवर्तते।
ज्ञानं विना तथा चित्ते मोहोऽपि न निवर्तते।।३४।।

भावार्थ : जवनां तरह घर में अन्हार दीपक के बिना ना हटेला ओही तरह से चित्त में स्थित मोह भी ज्ञान के बिना दूर ना हटेला ॥३४॥

सकायस्थल - (५७)

परस्य या तनुर्ज्ञेयाऽदेहकर्माभिमानिनः।
तया सकायो लोकोऽयं तदात्मत्वनिरूपणात्।।३५।।

भावार्थ : सकायस्थल वर्णन— (स्थूल आदि विशिष्ट) देह आ कर्म के जे अभिमानी नईखे अईसन पर अर्थात् ज्ञानस्थली के जवन ज्ञेय बाटे ओकरा द्वारा ई लोक सकाय कहल जाला काहे से कि ओ (ज्ञानी) के देह आदमी के रूप में प्रतिपादित बाटे ॥३५॥

कायं विना समस्तानां न क्रिया न च भावना।
न ज्ञानं यत्ततो योगी कायवानेव सञ्चरेत्।।३६।।

भावार्थ : चूँकि काय के बिना सब लोग के ना त क्रिया, नाही भावना अऊरी ना ही ज्ञान ही सम्भव होला एही जोगी लोगे के चाही कि ऊ कायवान् होके (संसार में) घूमल करें ।।३६।।

शिवैकज्ञानयुक्तस्य योगिनोऽपि महात्मनः।
काययोगेन सिद्ध्यन्ति भोगमोक्षादयः सदा।।३७।।

भावार्थ : शिवजी के ज्ञान से युक्त महान् आतमावाला जोगी के भी भोग मोक्ष आदि हमेशा कायजोग से ही सिद्ध होला ।।३७।।

काष्ठं विना यथा वह्निर्जायते न प्रकाशवान्।
मूर्तिं विना तथा योगी नात्मतत्त्वप्रकाशवान्।।३८।।

भावार्थ : जवना तरह से आग काठ के बिना प्रकाशवान् अर्थात् परगट ना होले ओही तरह से मूर्ति (देह) के बिना जोगी आत्म-तत्त्व के प्रकाश नईखे कर सकत ।।३८।।

मूर्त्यात्मनैव देवस्य यथा पूज्यत्वकल्पना।
तथा देहात्मनैवास्य पूज्यत्वं परयोगिनः।।३९।।

भावार्थ : जवना तरह से मूर्तियुक्त भईला के कारन देवता के पूज्य मानल जाला ओही तरह से परजोगी भी देहधारन कईला के कारन ही पूज्य होला ।।३९।।

निष्कलो हि महादेवः परिपूर्णः सदाशिवः।
जगत्सृष्ट्यादिसंसिद्ध्यै मूर्तिमानेव भासते।।४०।।

भावार्थ : निष्कल (कला से रहित फेर भी), परिपूर्ण (एही से) महादेव भी सदाशिव जगत् के सृष्टि आदि के करे खातिर मूर्तिमान् होके सब जगहाँ भासित होनी ।।४०।।

ब्रह्माद्या देवताः सर्वा मुनयोऽपि मुमुक्षवः।
कायवन्तो हि कुर्वन्ति तपः सर्वार्थसाधकम्।।४१।।

भावार्थ : ब्रह्मा आदि सगरी देवता लोग, मोक्ष चाहेवाला सगरी मुनि लोग भी सगरी अरथ के साधना करेवाला तप के देह धारन करके ही करेला लो ।।४१।।

तपो हि मूलं सर्वासां सिद्धीनां यज्जगत्त्रये।
तपस्तत्कायमूलं हि तस्मात् कायं न सन्त्यजेत्।।४२।।

भावार्थ : चूँकि तीनु लोग में सगरी सिद्धि सन के मूल कारन तप बाटे आ ऊहे तप कायमूल (अर्थात् शरीर के द्वारा सम्पादित कईल) बाटे एही से देह के तियाग ना करे के चाही ।।४२।।

अकायस्थल - (५८)

औपचारिकदेहित्वाज्जगदात्मत्वभावनात्।
मायासम्बन्धराहित्यादकायो हि परः स्मृतः।।४३।।

भावार्थ : **अकायस्थल वर्णन**— पर अर्थात् सकाय परजोगी औपचारिक (गौण रूप से) देह धारन कईला, संसार के आपन सरूप समझला, आ माया के सम्बन्ध से रहित भईला के कारन अकाय मानल गईल बाटे ।।४३।।

परस्य देहयोगोऽपि न देहाश्रयविक्रिया।
शिवस्येव यतस्तस्मादकायोऽयं प्रकीर्तितः।।४४।।

भावार्थ : जवना तरह शिव के पर भईला के कारन ओईमें देहसम्बन्धी विकार ना होला ओही तरह से पर अर्थात् शिवसरूप भईल जोगी के देह धारन कईला पर भी (सामान्य लोग के भी) शरीर के द्वारा सम्पन्न होनेवाली क्रियासन के संस्काररूप विकार ना होला एही कारन ई जोगी भी अकाय कहल गईल बाटे ।।४४।।

परलिङ्गे विलीनस्य परमानन्दचिन्मये।
कुतो देहेन सम्बन्धो देहिवद्भासनं भ्रमः।।४५।।

भावार्थ : परम आनन्द सरूप आ चिन्मय परलिङ्ग अर्थात् परमशिव में विलीन जोगी के देह से सम्बन्ध कहाँ रहेला? अर्थात् ना रहेला। जे ऊ देह के धारन करेवाला देखायी पड़ेला ऊ भरम बाटे ।।४५।।

देहाभिमानहीनस्य शिवभावे स्थितात्मनः।
जगदेतच्छरीरं स्याद् देहेनैकेन का व्यथा।।४६।।

भावार्थ : देहाभामिन से रहित एही से शिवभाव में स्थित (जोगी) के खातिर ई सगरी संसार ही ओकर शरीर हो जाला फेर भी एक (लऊकत आदमी के) देह से का घाटा आ का फायदा? ।।४६।।

शिवज्ञानैकनिष्ठस्य नाहंकारभवभ्रमः।
न चेन्द्रियभवं दुःखं त्यक्तदेहाभिमानिनः।।४७।।

भावार्थ : जे शिवाद्वैत ज्ञान में हमेशा लागल बाटे ओकरा अहङ्कार से जनमल भरम ना होला। जे देहाभिमान के तियाग देहले बाटे ओकरा के इन्द्रिय से जनमल दुःख ना होला ।।४७।।

न मनुष्यो न देवोऽहं न यक्षो नैव राक्षसः।
शिवोऽहमिति यो बुद्ध्यात् तस्य किं देहकर्मणा।।४८।।

भावार्थ : हम ना मनुष्य हई, ना देवता, ना यक्ष आ ना ही राक्षस हम खाली शिव बानी अईसन जे अपना के समझेला ओकरा शरीर के करम से का लेबे-देबे के बाटे? (अर्थात् शरीर के द्वारा कईल गईल करम से ऊ घेराइल ना होला) ।।४८।।

परकायस्थल - (५९)

वशीकृतत्वात् प्रकृतेर्मायामार्गातिवर्तनात्।
परकायोऽयमाख्यातः सत्यज्ञानसुखात्मकः।।४९।।

भावार्थ : परकायस्थल वर्णन— प्रकृति के अपना अधीन कईला आ माया के रास्ता के अतिक्रमण कईला के कारन सच्चिदानन्दसरूप ई जोगी परकायसरूप कहल जाला ।।४९।।

परब्रह्मवपुर्यस्य प्रबोधानन्दभासुरम्।
प्राकृतेन शरीरेण किमेतेनास्य जायते।।५०।।

भावार्थ : जेकर प्रकृष्ट बोध अर्थात् पर ज्ञान आ आनन्द से चमकत देह परब्रह्मसरूप हो गईल बाटे ओकरा के प्रकृति के तत्त्व सन से जनमल ए स्थूल शरीर से का परयोजन? (अर्थात् एक देह से कइल गइल करम से ऊ प्रभावित ना होला) ।।५०।।

सम्यग्ज्ञानाग्निसन्दग्धजन्मबीजकलेवरः।
शिवतत्त्वावलम्बी यः परकायः स उच्यते।।५१।।

भावार्थ : सम्यक् ज्ञान (अर्थात् सर्वं शिवमयम् ए तरह के ज्ञान) रूपी अग्नि से जेकर जनम के कारनभूत सूक्ष्म देह जर गईल बाठे आ जे शिव तत्त्वावलम्बी बाटे ऊ परकाय कहल जाला ।।५१।।

इन्द्रियाणि मनोवृत्तिवासनाः कर्मसंभवाः।
यत्र यान्ति लयं तेन सकायोऽयं परात्मना।।५२।।

भावार्थ : करम के द्वारा उत्पन्न मानसिक भावना, संस्कार आ इन्द्रिय आदि जवना में लीन हो जाला ऊ परमातमा के कारन ई सकाय (कहल आ चाहे) हो जाला ।।५२।।

पराहन्तामनुप्राप्य पश्येद् विश्वं चिदात्मकम्।
सदेहोऽतिभ्रमस्तस्य निश्चिता हि शिवात्मता।।५३।।

भावार्थ : पर अहन्ता (अर्थात् अहं परः शिवः अथवा अहं सर्वम् ए भावना) के पाके जोगी सगरी संसार के चिन्मय देखेला। ओकर शिवरूपता निश्चित बाटे (अर्थात् ऊ निश्चित रूप से शिव हो गईल बाटे) ओकरा के सन्देह समझल बहुत बड़हन भरम बाटे ।।५३।।

स्वस्वरूपं चिदाकारं ज्योतिः साक्षाद्विचिन्तयन्।
देहवानपि निर्देहो जीवन्मुक्तो हि साधकः।।५४।।

भावार्थ : अपना सरूप के चिदाकार आ साक्षाते जोती सरूप समझेवाला देहवान भी वस्तुतः देहरहित हो जाला। ऊ साधक निश्चित रूप से जीवन से मुक्त बाटे ।।५४।।

देहस्तिष्ठतु वा यातु योगिनः स्वात्मबोधिनः।
जीवन्मुक्तिर्भवेत् सद्यश्चिदानन्दप्रकाशिनी।।५५।।

भावार्थ : जेकरा आत्मसाक्षात्कार हो गईल बाटे अईसन जोगी के शरीर रहे आ चाहे जाव ओकरा के चिदानन्द प्रकाश करेवाली जीवन्मुक्ति तत्काल प्राप्त हो जाले ।।५५।।

आत्मज्ञानावसानं हि संसारपरिपीडनम्।
सूर्योदयेऽपि किं लोकस्तिमिरेणोपरुध्यते।।५६।।

भावार्थ : संसार के पीड़ा आत्मज्ञान के पहिले तक ही बाटे। का सूरूज उगला पर भी संसार अन्हार से घेराईल रहेला? (अर्थात् ना) ।।५६।।

देहाभिमाननिर्मुक्तः कलातीतपदाश्रयः।
कथं याति परिच्छेदं शरीरेषु महाबुधः।।५७।।

भावार्थ : जे देहाभिमान से रहित आ कलातीत अर्थात् निष्कल पद पर प्रतिष्ठित हो गईल बाटे अईसन महा विद्वान् देह के विषय में सीमित कईसन हो सकेला ।।५७।।

धर्माचारस्थल - (६०)

तस्यैव परकायस्य समाचारो य इष्यते।
स धर्मः सर्वलोकानामुपकाराय कल्पते।।५८।।

भावार्थ : धर्माचारस्थल वर्णन— अइसेही परकाय शिवजोगी के जवन आचरन होला ऊ करम कहल जाला। अईसन धरम सगरी लोग के उपकार करे में सक्षम होला ।।५८।।

अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं दया क्षमा।
दानं पूजा जपो ध्यानमिति धर्मस्य संग्रहः।।५९।।

भावार्थ : अहिंसा, सत्य, चोरी ना कईल, ब्रह्मचर्य, दया, क्षमा, पूजा (शिवलिङ्गार्चन), जप (पञ्चाक्षर के जप), ध्यान (शिवजी के ध्यान) ई धरम के संग्रह बाड़न ॥५९॥

शिवेन विहितो यस्मादागमैर्धर्मसंग्रहः।
तस्मात्तमाचरन् विद्वान् तत्प्रसादाय कल्पते।।६०।।

भावार्थ : चूँकि आगमशास्त्र सन में शिवजी के द्वारा धरम संग्रह के वर्णन आ उपदेश कईल बाटे एही से ओकर आचरन करेवाला विद्वान् ओ (शिवजी) के प्रसन्न करे में सक्षम होला ॥६०॥

अधर्मं न स्पृशेत् किञ्चिद् विहितं धर्ममाचरेत्।
तं च कामविनिर्मुक्तं तमपि ज्ञानपूर्वकम्।।६१।।

भावार्थ : अधरम के तनी-सा भी स्पर्श ना करे के चाही। (शास्त्र सन के द्वारा) विधान कईल गईल धरम के आचरन करे के चाही आ ओ (धरम) के फल के इच्छा से रहित होके करे के चाही आ ई (निष्काम कर्म) ज्ञानी होके करे के चाही ॥६१॥

आत्मवत् सर्वभूतानि संपश्येद् योगवित्तमः।
जगदेकात्मताभावान्निग्रहादिविरोधतः ।।६२।।

भावार्थ : जोग के जानेवाला साधक संसार के खाली परमात्मसरूप समझत निग्रह अनुग्रह के अवसर ना देत सगरी परानी लोग के अपना जईसन (आत्मवत) ही देखे ॥६२॥

एक एव शिवः साक्षज्जगदेतदिति स्फुटम्।
पश्यतः किं न जायेत ममकारो हि विभ्रमः।।६३।।

भावार्थ : एक ही शिवजी ए जगत् के रूप में बानी अईसन स्पष्ट दृष्टि रखेवाला जोगी के का ना मिलेला अर्थात् ओकरा के सब कुछु मिल जाला। ममकार (अर्थात् ई हमार बाटे, ई हमार ना बाटे अईसन ज्ञान) भरमावे वाला होला ॥६३॥

धर्म एव समस्तानां यतः संसिद्धिकारणम्।
निस्पृहोऽपि महायोगी धर्ममार्गं च न त्यजेत्।।६४।।

भावार्थ : चूँकि धरम ही सगरी सिद्धि सन के कारन होला एही से जोगी के चाही कि बिना कवनो इच्छा के भी ऊ धरम के रास्ता के ना छोड़े (अर्थात् धरम के आचरन करत जाव) ॥६४॥

ज्ञानामृतेन तृप्तोऽपि योगी धर्मं न संत्यजेत्।
आचारं महतां दृष्ट्वा प्रवर्तन्ते हि लौकिकाः।।६५।।

भावार्थ : ज्ञान के अमरित से अघाईल (तृप्त) भी जोगी के धरम के ना तियागे के चाही काहे से कि बड़हन लोग के बेवहार देखके ही मनुष्य ए संसार में प्रवृत्त होवेले ।।६५।।

सदाचारप्रियः शम्भुः सदाचारेण पूज्यते।
सदाचारं विना तस्य प्रसादो नैव जायते।।६६।।

भावार्थ : सदाचार प्रिय शिव के सदाचार से ही पूजा कईल जाला। बिना सदाचार के ऊ खुश ना होनी ।।६६।।

भावाचारस्थल - (६१)

भाव एवास्य सर्वेषां भावाचारः प्रकीर्तितः।
भावो मानसचेष्टात्मा परिपूर्णः शिवाश्रयः।।६७।।

भावार्थ : भावाचारस्थल वर्णन— ए धरमाचारस्थली जोगी के भाव ही सबका खातिर भावाचार कहल गईल बाटे। भाव के अरथ बाटे— मानसिक चेष्टा अर्थात् विचारात्मिका क्रिया। ई परिपूर्ण आ शिव के आश्रित करके होला ।।६७।।

भावनाविहितं कर्म पावनादपि पावनम्।
तस्माद् भावनया युक्तं परधर्मं समाचरेत्।।६८।।

भावार्थ : भावना के साथे विहित करम (अर्थात् एक काम के करेवाला, करावेवाला आ स्वयं करम भी शिवजी हईं— अईसन भावना से कईल गईल करम) पवितर से भी पवितर बाटे एही कारन शिवभावना से जुड़ल परधरम के आचरन करे के चाही ।।६८।।

भावेन हि मनः शुद्धिर्भावशुद्धिश्च कर्मणा।
इति सञ्चिन्त्य मनसा योगी भावं न सन्त्यजेत्।।६९।।

भावार्थ : भाव के द्वारा मन के शुद्धि होला आ भाव के शुद्धि (शिवाराधन आदि) करम से होला। अईसन सोच के जोगी कभी भी भाव के त्याग ना करे ।।६९।।

शिवभावनया सर्वं नित्यनैमित्तिकादिकम्।
कुर्वन्नपि महायोगी गुणदोषैर्न बाध्यते।।७०।।

भावार्थ : महाजोगी शिवभावना के साथे सगरी नित्य, नैमित्तिक आदि (काम्य) करम सन के करत भी (ओ करम सन के) गुन आ चाहे दोष (अर्थात् ओकरा से जनमल पुण्य आ पाप) से ना बन्हाला ।।७०।।

अन्तः प्रकाशमानस्य संवित्सूर्यस्य सन्ततम्।
भावेन यदुपस्थानं तत्सन्ध्यावन्दनं विदुः।।७१।।

भावार्थ : अपना भीतर प्रकाशमान संविद् रूपी सूरूज के शिवभावना के द्वारा हमेशा जवन उपस्थान[1] बाटे (विद्वान् लोग) ओकरा के ही सन्ध्या-वन्दन कहेला ।।७१।।

आत्मज्योतिषि सर्वेषां विषयाणां समर्पणम्।
अन्तर्मुखेन भावेन होमकर्मेति गीयते।।७२।।

भावार्थ : आत्मरूपी जोती अर्थात् चिदग्नि में अन्तर्मुखी भाव से सगरी विषयसन के समर्पन होम करम कहल जाला ।।७२।।

भावयेत् सर्वकर्माणि नित्यनैमित्तिकानि च।
शिवप्रीतिकराण्येव सङ्गराहित्यसिद्धये।।७३।।

भावार्थ : संसार के आसक्ति से रहित होवे के खातिर साधक के चाही कि ऊ नित्य नैमित्तिक आदि सगरी करम के शिव के खुश करेवाला समझे ।।७३।।

शिवे निवेश्य सकलं कार्याकार्यं विवेकतः।
वर्तते यो महाभागः स सङ्गरहितो भवेत्।।७४।।

भावार्थ : जवन महाभागशाली साधक विवेकपूर्वक करे जोग, ना करे के जोग सगरी काम के शिवजी के समर्पित कर देला उ आसक्तिरहित हो जाला ।।७४।।

आत्मानमखिलं वस्तु शिवमानन्दचिन्मयम्।
एकभावेन सततं संपश्यन्नेव पश्यति।।७५।।

भावार्थ : आतमा, सगरी संसार आ चिन्मय आनन्द सरूप शिवजी के एकही भाव (अर्थात् ई सब शिवजी ही बानी अईसन भावना) से हरदम देखेवाला ही असली दर्शन करेला (अर्थात् ऊहे असली शिव के देखेवाला बाटे) ।।७५।।

---

१. सबेरे सूरूज भगवान् के अरघ देहला के बाद "उदयं..............। उदुत्यं.............। चित्रं देवानां ....। आ तच्चक्षुर्देवहितं..............।" इ चार गो मन्तर के दुनु हाथ उठाके उच्चारन कईल सूर्योपस्थान कहल जाला।

ज्ञानाचारस्थल - (६२)

अस्य ज्ञानसमाचारो योगिनः सर्वदेहिनाम्।
ज्ञानाचारो यदुक्तोऽयं ज्ञानाचारः स कथ्यते।।७६।।

भावार्थ : ज्ञानाचारस्थल वर्णन— (भावाचार से भरल) ए जोगी के ज्ञानाचार ही सगरी मनुष्य लोग के खातिर ज्ञानाचार कहल गईल बाटे। ईहे ज्ञानाचार स्थल बाटे ।।७६।।

शिवाद्वैतपरं ज्ञानं ज्ञानमित्युच्यते बुधैः।
सिद्धेन वाप्यसिद्धेन फलं ज्ञानान्तरेण किम्।।७७।।

भावार्थ : विद्वान् लोग शिवाद्वैतपरक ज्ञान के ही असली ज्ञान कहेला लो। दोसर ज्ञान चाहे सिद्धि दे आ चाहे सिद्धि ना दे आ चाहे शास्त्र समान होवे आ चाहे शास्त्र ऊलटा, ओकरा से का फल? (अर्थात् ऊ सब हमेशा खातिर बेकार बाटे) ।।७७।।

निर्मलं हि शिवज्ञानं निःश्रेयसकरं परम्।
रागद्वेषादिकलुषं भूयः संसृतिकारणम्।।७८।।

भावार्थ : शिवज्ञान ही निरमल (अर्थात् आणव, मायीय आ कार्म ई तीनु मल से रहित) एही से मोक्ष के देबेवाला बाटे। जवन ज्ञान रोग द्वेष आदि के कारन मलिन बाटे उ संसार अर्थात् जनम मृत्यु के कारन होला ।।७८।।

परिपूर्णं महाज्ञानं परतत्त्वप्रकाशकम्।
अवलम्ब्य प्रवृत्तो यो ज्ञानाचार स उच्यते।।७९।।

भावार्थ : पर तत्त्व (अर्थात् परम शिव नामवाला तत्त्व) के प्रकाशक अर्थात् आभास करावेवाला परिपूर्ण महाज्ञान के आधार बनाके जे प्रवृत्त होला उ ज्ञानाचार कहल जाला ।।७९।।

निर्विकल्पे परे धाम्नि निष्कले शिवनामनि।
ज्ञानेन योजयेत् सर्वं ज्ञानाचारी प्रकीर्तितः।।८०।।

भावार्थ : जवन सब कुछु के निष्कल (कला के बिना) निर्विकल्प शिव नामवाला पर धाम में जोड़ देबेला ऊहे ज्ञानाचारी कहल जाला ।।८०।।

ज्ञानं मुक्तिप्रदं प्राप्य गुरुदृष्टिप्रसादतः।
कः कुर्यात् कर्मकार्पण्ये वाञ्छां संसारवर्धने।।८१।।

भावार्थ : गुरु के किरिपादृष्टि से मुक्ति के देबेवाला ज्ञान के प्राप्त करके कवन आदमी करम के कारन दुख के देबेवाला संसार के बढ़ावे के इच्छा करी ।।८१।।

कर्म ज्ञानाग्निना दग्धं न प्ररोहेत् कथञ्चन।
यदाहुः संसृतेर्मूलं प्रवाहानुगतं बुधाः।।८२।।

भावार्थ : विद्वान् लोग प्रवाहानुगत अर्थात् अनादि परम्परा से मिलल जवना करम के संसार के कारन मानेला लो ऊ करम ज्ञानरूपी आग से जर गईला पर कवनो भी तरह संसार के अंकुरन ना करेला ॥८२॥

ज्ञानेन हीनः पुरुषः कर्मणा बद्ध्यते सदा।
ज्ञानिनः कर्मसङ्कल्पा भवन्ति किल निष्फलाः।।८३।।

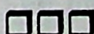
भावार्थ : ज्ञान से रहित पुरुष हमेशा करम द्वारा बन्धन में डाल दिहल जाले। ज्ञानी के करम संकलप निश्चित रूप से निष्फल (बिना फल के) होला ॥८३॥

शुद्धाचारे शुद्धभावो विवेकी
ज्योतिः पश्यन् सर्वतश्चैवमेकम्।
ज्ञानध्वस्ताप्राकृतात्मप्रपञ्चो
जीवन्मुक्तश्चेष्टते दिव्ययोगी।।८४।।

भावार्थ : विशुद्ध ज्ञानाचार भईला पर शुद्ध भावनावाला एही से विवेकपूर्ण दिव्यजोगी हमेशा एक (शिवात्मक) जोती के साक्षात्कार करत आ ज्ञान के द्वारा प्राकृत प्रपञ्च के नष्ट करेवाला जीवन्मुक्त हो जाला फेनु ऊ सामान्य जन के जईसन बेवहार करेला ॥४२॥

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ लिङ्गस्थलान्तर्गत माहेश्वरस्थले क्रियागमस्थलादि-नवविधस्थलप्रसङ्गो नाम षोडशः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के लिङ्गस्थलान्तर्गत में माहेश्वरस्थल में क्रियागमस्थलादिनवविधप्रसङ्ग नामवाला सोरहवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।१६।।



सप्तदशः परिच्छेदः (सतरहवाँ परिच्छेद)

लिंगस्थलांतर्गत

प्रसादिस्थल

अगस्त्य उवाच—

स्थलानि तानि चोक्तानि यानि माहेश्वरस्थले।
वदस्व स्थलभेदं मे प्रसादिस्थलसंश्रितम्।।१।।

भावार्थ : प्रसादिस्थल वर्णन— अगस्त्य ऋषि कहनी— (हे आचार्य!) रऊवा माहेश्वर स्थल में जेतना स्थल बाटे ओ सब के वर्णन कर देहनी। अब प्रसादिस्थल में आवेवाला स्थल भेद के हमरा के बतलाई ।।१।।

रेणुक उवाच—

स्थलभेदा नव प्रोक्ताः प्रसादिस्थलसंश्रिताः।
कायानुग्रहणं पूर्वमिन्द्रियानुग्रहं ततः।।२।।

प्राणानुग्रहणं पश्चात् ततः कायार्पितं मतम्।
करणार्पितमाख्यातं ततो भावार्पितं मतम्।।३।।

शिष्टस्थलं ततः प्रोक्तं शुश्रूषास्थलमेव च।
ततः सेव्यस्थलं चैषां क्रमशः शृणु लक्षणम्।।४।।

भावार्थ : श्री रेणुकाचार्य कहनी— प्रसादिस्थल के भीतर नव स्थलभेद कहल गईल बाड़न। ऊ बाड़न— १) कायानुग्रहस्थल, २) इन्द्रियानुग्रहस्थल, ३) प्राणानुग्रहस्थल, ४) कायार्पितस्थल, ५) करणार्पितस्थल, ६) भावार्पित-स्थल, ७) शिष्यस्थल, ८) शुश्रूषस्थल अऊरी ९) सेव्यस्थल। अब ई सगरी में से एकहगो के लछन सुनी ।।२-४।।

कायानुग्रहस्थल - (६३)

अनुगृह्णाति यल्लोकान् स्वकायं दर्शयन्नसौ।
तस्मादेष समाख्यातः कायानुग्रहनामकः।।५।।

भावार्थ : कायानुग्रहस्थल वर्णन— इ अर्थात् ज्ञानाचारसम्पन्न शिवजोगी (परब्रह्मरूप) अपना देह के दर्शन करावत जवन लोग के ऊपर किरिपा करेनी एही से ई कायानुग्रह नामवाला स्थल कहल गईल बाटे ।।५।।

शिवो यथाऽनुगृह्णाति मूर्तिमाविश्य देहिनः।
तथा योगी शरीरस्थः सर्वानुग्राहको भवेत्।।६।।

भावार्थ : जवना तरह से शिवजी (मूर्तिसन के) देह अर्थात् विग्रह में घुस के देहधारी लोग के ऊपर किरिपा करेनी ओही तरह से जोगी भी (शिवदीक्षादि से संस्कृत अपना) दिव्य शरीर में रहके सबका ऊपर अनुग्रह (किरिपा) करेला ॥६॥

शिवः शरीरयोगेऽपि यथा सङ्गविवर्जितः।
तथा योगी शरीरस्थो निःसङ्गो वर्तते सदा।।७।।

भावार्थ : जवना तरह शिव (स्वयं) शरीर धारन करके भी (अपना ओ शरीर के प्रति) आसक्ति से रहित होनी ओही तरह से जोगी भी शरीर के धारन करके हमेशा (अपना शरीर के प्रति) अनासक्त रहेला ॥७॥

शिवभावनया युक्तः स्थिरया निर्विकल्पया।
शिवो भवति निर्धूतमायावेशपरिप्लवः।।८।।

भावार्थ : दृढ़ आ विकल्परहित भावना से युक्त एही से माया के आवेश के उपदरव से रहित उ शिव ही हो जाला ॥८॥

चित्तवृत्तिषु लीनासु शिवे चित्सुखसागरे।
अविद्याकल्पितं वस्तु नान्यत् पश्यति संयमी।।९।।

भावार्थ : चित् आ आनन्द के समुन्दर के जईसन शिवजी में चित्तवृत्तिसन के लीन हो गईला के बाद ऊ संजमी (शिवजोगी) अविद्या के द्वारा बनावल कवनो दोसर चीज के ना देखेला (बल्कि सगरी संसार ओकरा शिवमय शिवसरूप ही लऊके लागेला) ॥९॥

नेदं रजतमित्युक्ते यथा शुक्तिः प्रकाशते।
नेदं जगदिति ज्ञाते शिवतत्त्वं प्रकाशते।।१०।।

भावार्थ : ई चाँदी ना बाटे अईसन कहला पर जईसे (देखेवाला के) सीपी बुझाला ओही तरह से ई संसार ना बाटे अईसन ज्ञान भईला पर शिवतत्त्व प्रकाशित होला ॥१०॥

यथा स्वप्रकृतं वस्तु प्रबोधेनैव शाम्यति।
तथा शिवस्य विज्ञाने संसारं नैव पश्यति।।११।।

भावार्थ : जईसे सपना के द्वारा बनावल गईल चीज (झूठ होले आ) जागला पर ना रहेले ओही तरह से जोगी शिवजी के ज्ञान भईला संसार के ना देखेला (ई संसार ओकरा सपना के जईसन ही झूठा लागेला) ॥११॥

अज्ञानमेव सर्वेषां संसारभ्रमकारणम्।
तन्निवृत्तौ कथं भूयः संसारभ्रमदर्शनम्।।१२।।

भावार्थ : सगरी जीवसन के संसार भरम के कारन अज्ञान (असली चीज के ज्ञान ना भईल) ही बाटे। ओ अज्ञान के हट गईला पर फेर संसार रूपी भरम के दर्शन कईसे हो सकेला? ॥१२॥

गलिताहङ्कृतिग्रन्थिः क्रीडाकल्पितविग्रहः।
जीवन्मुक्तश्चरेद्योगी देहिवन्निरूपाधिकः।।१३।।

भावार्थ : जेकर अहङ्कार नामवाला ग्रन्थि (हम ई शरीर बानी हमार नाम देवदत्त आदि बाटे ए तरह के भावना) नाश हो गईल बाटे आ जे लोक में खेला करे खातिर देह के धारन कईले बाटे अईसन उपाधि से रहित जोगी जीवन्मुक्त होके संसार में बेवहार आ घुमल करेला ॥१३॥

इन्द्रियानुग्रहस्थल - (६४)

दर्शनात्परकायस्य करणानां विवेकतः।
इन्द्रियानुग्रहः प्रोक्तः सर्वेषां तत्त्ववेदिभिः।।१४।।

भावार्थ : इन्द्रियानुग्रहस्थल वर्णन— परकाय जोगी के दर्शन आ सगरी इन्द्रिय सन के विवेक (ई सब इन्द्रिय अलगा कवनो चीज ना होके शिवजी ही बानी अईसन ज्ञान) के तत्त्व के जानकार लोग इन्द्रियानुग्रह कहले बाटे ॥१४॥

इन्द्रियाणां समस्तानां स्वार्थेषु सति सङ्गमे।
रागो वा जायते द्वेषस्तौ योगी परिवर्जयेत्।।१५।।

भावार्थ : सगरी इन्द्रिय के स्वारथ अर्थात् अपना-अपना विषय (गन्ध, रस, रूप, स्पर्श आ शब्द) के साथे सन्निकर्ष भईला पर या त राग उत्पन्न होला आ चाहे द्वेष उत्पन्न होला (विषयप्राप्ति के खातिर राग आ प्राप्ति में बाधक उपस्थित भईला पर द्वेष उत्पन्न होला)। जोगी के चाही कि ऊ ई दुनु के तियाग करे ॥१५॥

इन्द्रियाणां बहिर्वृत्तिः प्रपञ्चस्य प्रकाशिनी।
अन्तः शिवे समावेशो निष्प्रपञ्चस्य कारणम्।।१६।।

भावार्थ : इन्द्रियसन के बाहर के विषयन में प्रवृत्ति परपञ्च (अर्थात् संसार आ ओकर सुख दु:ख) के उत्पन्न करेला। जदी ऊहे वृत्ति अन्त:स्थित शिवसमावेश वाली होवे त निष्परपञ्च अर्थात् संसारराहित्य के कारन बनेले ॥१६॥

क्षणमन्तः शिवं पश्यन् केवलेनैव चेतसा।
बाह्यार्थानामनुभवं क्षणं कुर्वन् दृगादिभिः।।१७।।

सर्वेन्द्रियनिरूढोऽपि सर्वेन्द्रियविहीनवान्।
शिवाहितमना योगी शिवं पश्यति नापरम्।।१८।।

भावार्थ : खाली चित्त के द्वारा एक छन खातिर शिंव के अपना भीतर साक्षात्कार करेवाला आ बाहर के विषय सन के आँख आदि से एक छन खातिर अनुभव करेवाला जोगी सगरी इन्द्रियसन से रहित होवत शिव के प्रति समर्पित मनवाला होके शिव के ही सब जगहा देखेला कवनो दोसर पदारथ के नाही ॥१७-१८॥

न जरा मरणं नास्ति न पिपासा न च क्षुधा।
शिवाहितेन्द्रियस्यास्य निर्मानस्य महात्मनः।।१९।।

भावार्थ : शिवजी के प्रति समर्पित इन्द्रियवाला एही से दैहिक आदि अभिमान से रहित होला ए महातमा के ना बुढ़ापा, ना मरला, ना पियास आ ना भूख के कष्ट होला काहे से कि बुढ़ापा, आ मरल, देह के अऊरी भूख आ पियास परान के धरम बाटे ॥१९॥

मनो यत्र प्रवर्तेत तत्र सर्वेन्द्रियस्थितिः।
शिवे मनसि सल्लीने क्व चेन्द्रियविचारणा।।२०।।

भावार्थ : जवना विषय में मन लागेला इन्द्रिय भी ओही में रहे के चाहेले। जब ई मन शिवजी में लीन हो गईल तब (आधारहीन) इन्द्रिय के बेवहार कहाँ? ॥२०॥

यद्यत् पश्यन् दृशा योगी मनसा चिन्तयत्यपि।
तत्तत् सर्वं शिवाकारं संविद्रूपं प्रकाशते।।२१।।

भावार्थ : शिवजोगी आँख से जवना-जवना चीज के देखत मन से ओकर ध्यान करत रहेला ऊ-ऊ चीज ओकरा के शिवाकार संवित् रूप में भावित होला ॥२१॥

करणैः सहितं प्राणं मनस्याधाय संयमी।
योजयेत् स शिवः साक्षात् यत्र नास्ति जगद्भ्रमः।।२२।।

भावार्थ : (नेत्र आदि) इन्द्रिय सन के साथे परान के मन में समाहित करके जवन शिवजोगी जवना में ई सब के योजना करेला ऊ चीज साक्षाते शिवरूप (में प्रकाशित) होले। ओईमें संसार के भरम ना होला ॥२२॥

सर्वेन्द्रियप्रवृत्त्या च बहिरन्तः शिवं यजन्।
स्वच्छन्दचारी सर्वत्र सुखी भवति संयमी।।२३।।

भावार्थ : ऊ संजमी अर्थात् शिवजोगी सगरी इन्द्रिय सन के द्वारा अपना भीतर आ बाहरी जगत् में सब जगहा शिव के पूजा ऊहाँ के ध्यान ऊहाँ के खातिर दान आदि करेला ऊ सब जगहा निर्बाध भरमण करत आ सुखी रहेला ॥२३॥

प्राणानुग्रहस्थल - (६५)

शिवस्य परकायस्य यत् तात्पर्यावलोकनम्।
तत्प्राणानुग्रहः प्रोक्तः सर्वेषां तत्त्वदर्शिभिः।।२४।।

भावार्थ : प्राणानुग्रहस्थल वर्णन— परकाय (अर्थात् इन्द्रियानुग्रहसम्पन्न) शिव (अर्थात् शिवोजोगी) के जवन तात्पर्यावलोकन (अर्थात् परानवायु के निरोध) बाटे। ऊ तत्त्व के देखेवाला मनीषी लोग के द्वारा सगरी लोग के प्राणानुग्रह कहल गईल बाटे ॥२४॥

प्राणो यस्य लयं याति शिवे परमकारणे।
कुतस्तस्येन्द्रियस्फूर्तिः कुतः संसारदर्शनम्।।२५।।

भावार्थ : जवन जोगी के परान परमकारन अर्थात् पाँच गो कारन के भी कारनभूत शिवजी में लीन हो जाला ओकर इन्द्रियव्यापार कहवाँ आ संसारदर्शन कहवाँ ? ॥२५॥

करणेषु निवृत्तेषु स्वार्थसङ्गात् प्रयत्नतः।
तैः समं प्राणमारोप्य स्वान्ते शान्तमतिः स्वयम्।।२६।।

भावार्थ : प्रयत्न अर्थात् कुम्भक आदि के द्वारा इन्द्रियसन के अपना-अपना विषय सन से निवृत्त भईला पर ओकर अर्थात् इन्द्रियसन के परान के भी एकरूप करके जोगी स्वयं शान्तमना हो जाला ।।२६।।

शान्तत्वात् प्राणवृत्तीनां मनः शाम्यति वृत्तिभिः।
तच्छान्तौ योगिनां किञ्चिच्छिवादन्यन्न दृश्यते।।२७।।

भावार्थ : परान के वृत्तिसन (श्वास, प्रश्वास आ चाहे रेचक, पूरक) के शान्त भईला पर मन भी ओ वृत्ति सन के साथे शान्त हो जाला। ऊ माने मन के शान्त भईला पर जोगीलोग के शिव के अलावा दोसर कुछऊ भी ना देखाई देला ॥२७॥

प्राण एव मनुष्याणां देहधारणकारणम्।
तदाधारः शिवः प्रोक्तः सर्वकारणकारणम्।।२८।।

भावार्थ : परान ही मनुष्यलोग के देह धारन करे के कारन बाटे आ सगरी कारन के कारन सरूप शिवजी ओ (परान) के कारन कहल गईल बानी ।।२८।।

निराधारः शिवः साक्षात् प्राणस्तेन प्रतिष्ठितः।
तदाधारा तनुर्ज्ञेया जीवो येनैव चेष्टते।।२९।।

भावार्थ : शिवजी त निराधार बानी आ परान ऊहाँ में प्रतिष्ठित बाटे। शरीर के परान के आधारवाला समझे के चाही। जीव एही परान के कारन चेष्टा करेला ।।२९।।

शिवे प्राणो विलीनोऽपि योगिनो योगमार्गतः।
स्वशक्तिवासनायोगाद् धारयत्येव विग्रहम्।।३०।।

भावार्थ : जोगी के परान अपना जोगमार्ग से शिवजी में विलीन भईला पर भी अपना शक्ति के संस्कार बल से शरीर के धारन करबे करेला ।।३०।।

स चाभ्यासवशाद्भूयः सर्वतत्त्वातिवर्तिनि।
निष्कलङ्के निराकारे निरस्ताशेषविक्लवे।।३१।।

चिद्विलासपरिस्फूर्तिपरिपूर्णसुखाद्वये ।
शिवे विलीनः सर्वात्मा योगी चलति न क्वचित्।।३२।।

भावार्थ : आ ऊहे परानवायु फेर अभ्यास के द्वारा सर्वतत्त्वातिशायी, निष्कलङ्क, निराकार आ सगरी बाधा से रहित चिद् शक्ति के विकास के परिस्फुरन से परिपूर्ण आनन्दरूप अद्वितीय शिव में जब विलीन हो जाला तब अईसन सर्वातमा जोगी कही भी ना चलेला (अर्थात् स्थिर रहत सर्वव्यापी हो जाला) ।।३१-३२।।

प्रध्वस्तवासनासङ्गात् प्राणवृत्तिपरिक्षयात्।
शिवैकीभूतसर्वात्मा स्याणुवद्भाति संयमी।।३३।।

भावार्थ : वासना के आसक्ति के नाश हो गईला आ परानवृत्ति के परिक्षय अर्थात् विराम हो गईला के कारन शिवजी के साथे एक भईल सर्वातमा जोगी स्थाणु (खम्भा) के जईसन लागेला (अर्थात् निश्चल हो जाला) ।।३३।।

कायार्पितस्थल - (६६)

शिवस्य पररूपस्य सर्वानुग्रहिणोऽर्चने।
त्यागो देहाभिमानस्य कायार्पितमुदाहृतम्।।३४।।

भावार्थ : कायार्पितस्थल वर्णन— सबका ऊपर किरिपा करेवाला पररूप शिवजी के पूजा के बेरा देह के घमण्ड के तियाग कईल क़ायार्पित क़हल गईल बाटे ।।३४।।

यदा योगी निजं देहं शिवाय विनिवेदयेत्।
तदा भवति तद्रूपं शिवरूपं न संशयः।।३५।।

भावार्थ : जोगी सब अपना शरीर के शिवजी खातिर अर्पित कर देला तब ओकर ऊ रूप शिवरूप हो जाला एईमें कवनो सन्देह नईखे ।।३५।।

इन्द्रियप्रीतिहेतूनि विषयासङ्गजानि च।
सुखानि सुखचिद्रूपे शिवयोगी निवेदयेत्।।३६।।

भावार्थ : जोगी के चाही कि ऊ इन्द्रियसन के आनन्द पहुँचावे के साधनभूत आ विषय सन के आसङ्ग (अर्थात् पूरा लिप्तता) से जनमल सुख के चिदानन्द रूप शिवजी के अर्पित कर दे ।।३६।।

दर्शनात् स्पर्शनात् भुक्तेः श्रवणाद् घ्राणनादपि।
विषयेभ्यो यदुत्पन्नं शिवे तत्सुखमर्पयेत्।।३७।।

भावार्थ : जोगी के चाही कि ऊ दर्शन, स्पर्शन, भोजन, श्रवण (सुनल) आ घ्राणन (सूँघल) आ धन, जन आदि अन्य विषयसन से जनमल जवन सुख बाटे ओकरा के शिवजी के सौंप देबे ।।३७।।

देहद्वारेण यद्यत् स्यात् सुखं प्रासङ्गमात्मनः।
तत्तन्निवेदयन् शम्भोर्योगी भवति निर्मलः।।३८।।

भावार्थ : देह के द्वारा जवन-जवन सुख आतमा के मिलेला जोगी ओ-ओ सुख के शिवजी के निवेदित करे। अईसन जोगी निरमल हो जाला ।।३८।।

करणार्पितस्थल - (६७)

आसञ्जनं समस्तानां करणानां परात्परे।
शिवे यत् तदिदं प्रोक्तं करणार्पितमागमे।।३९।।

भावार्थ : करणार्पितस्थल वर्णन— परात्पर शिवलिङ्ग में सगरी इन्द्रियसन के जवन संयोजन बाटे ऊ शैवागम में करणार्पित कहल गईल बाटे ।।३९।।

यद्यत्करणमालम्ब्य भुङ्क्ते विषयजं सुखम्।
तत्तच्छिवे समर्प्यैष करणार्पक उच्यते।।४०।।

भावार्थ : (शिवयोगी) जवन-जवन इन्द्रिय के आधार बनाके विषय से जनमल सुख के अनुभव करेला ओ-ओ इन्द्रिय के शिवजी के खातिर अर्पण करेवाला ई करणार्पक कहल जाला ॥४०॥

अहङ्कारमदोद्रिक्तमन्तःकरणवारणम् ।
बध्नीयाद् यः शिवालाने स धीरः सर्वसिद्धिमान्॥४१॥

भावार्थ : अहङ्काररूपी मद से मत्त अन्तःकरन रूपी हाथी के जे शिवरूपी आलान (अर्थात् बन्धनशृङ्खला) में बान्हेला ऊ धीर पुरुष सगरी सिद्धि सन के पावेला (आ चाहे सगरी सिद्धिसन के स्वामी ऊ धीर कहल जाला) ॥४१॥

इन्द्रियाणां समस्तानां मनः प्रथममुच्यते।
वशीकृते शिवे तस्मिन् किमन्यैस्तद्वशानुगैः॥४२॥

भावार्थ : सगरी इन्द्रियसन के मन में प्रथम (पहिलका अर्थात् प्रधान) इन्द्रिय कहल जाला। ओकरा के शिवजी के वश में भईला पर ओकरा अधीन रहेवाली अऊरी इन्द्रियसन के का बात? (अर्थात् ऊ त खुद ही शिवजी के वश में हो जाली सन) ॥४२॥

इन्द्रियाणां वशीकारो निवृत्तिरिति गीयते।
लक्षीकृते शिवे तेषां कुतः संसारगाहनम्॥४३॥

भावार्थ : इंद्रिय के वश में भईला आ चाहे कईला के निवृत्ति कहल गईल बाटे। जब ऊ इन्द्रिय शिवजी के समर्पित हो गईल तब ओकनी के संसार में डूबली सन कहाँ? (अर्थात् शिवार्पित भईला पर ऊ भी शिवमय हो जाली सन) ॥४३॥

संसारविषकान्तारसमुच्छेदकुठारिका ।
उपशान्तिर्भवेत् पुंसामिन्द्रियाणां वशीकृतौ॥४४॥

भावार्थ : मनुष्यलोग के इन्द्रियसन के वश में भईला पर ओकर संसाररूपी विषवृक्षसन के जंगल के काटे खातिर कुल्हाड़ीरूपी उपशान्ति के प्राप्ति होला ॥४४॥

इन्द्रियैरेव जायन्ते पापानि सुकृतानि च।
तेषां समर्पणादीशे कुतः कर्मनिबन्धनम्॥४५॥

भावार्थ : इन्द्रियसन के ही द्वारा पाप आ पुण्य दुनु होला। ओकनी के ईश्वर में समर्पित कर देहला पर कर्मबन्धन कहवाँ? (काहे से कि अईसन स्थिति में ओकनी के द्वारा कईल गईल करमसन के उत्तरदायित्व शिवजी के हो जाला) ॥४५॥

प्रकाशमाने चिद्वह्नौ बहिरन्तर्जगन्मये।
समर्प्य विषयान् सर्वान् मुक्तवज्जायते जनः।।४६।।

भावार्थ : बाहरी आ भीतरी जगत् वाली आ प्रकाशमान चिदग्नि में सगरी विषयसन के समर्पित करके मनुष्य जीवन्मुक्त के जईसन हो जाला ।।४६।।

चित्तद्रव्यं समादाय जगज्जातं महाहविः।
चिद्वह्नौ जुह्वतामन्तः कुतः संसारविप्लवः।।४७।।

भावार्थ : पञ्चतन्मात्रात्मकसंसार (के भीतर वर्तमान शब्द, स्पर्श आदि विषय) समूह चित्त रूपी हवन करे जोग द्रव्य के भीतर स्थित चैतन्यरूपी आग में होम करेवाला लोग के खातिर संसार के उपद्रव कहवाँ ।।४७।।

आत्मज्योतिषि जिद्रूपे प्राणवायुनिबोधिते।
जुह्वन् समस्तविषयान् तन्मयो भवति ध्रुवम्।।४८।।

भावार्थ : परानवायु से उद्बोधित चिद्रूप आत्मजोती अर्थात् शिवाग्नि में सगरी विषयसन के होम करेवाला निश्चित रूप से तन्मय अर्थात् चिन्मय अर्थात् शिवस्वरूप हो जाला ।।४८।।

इन्द्रियाणि समस्तानि शरीरं भोगसाधनम्।
शिवपूजाङ्गभावेन भावयन् मुक्तिमाप्नुयात्।।४९।।

भावार्थ : सगरी इन्द्रियसन आ भोगसाधन देह के शिवपूजा के अङ्ग के रूप में भावना करेवाला मोक्ष के प्राप्त करेला ।।४९।।

भावार्पितस्थल - (६८)

शिवे निश्चलभावेन भावानां यत्समर्पणम्।
भावार्पितमिदं प्रोक्तं शिवसद्भाववेदिभिः।।५०।।

भावार्थ : भावार्पितस्थल वर्णन— शिवलिङ्ग के विषय में दृढ़ भावना के साथे जवन मनन होला शिवजी में ओकर साक्षाते अरपन मानस भाव कहल जाला ।।५०।।

चित्तस्थसकलार्थानां मननं यत्तु मानसे।
तदर्पणं शिवे साक्षन्मानसो भाव उच्यते।।५१।।

भावार्थ : चित्त में स्थित सगरी विषय सन के मन में जवन मनन होला शिवजी में ओकर साक्षाते अरपन मानस भाव कहल जाला ।।५१।।

भाव एव हि जन्तूनां कारणं बन्धमोक्षयोः।
भावशुद्धौ भवेन्मुक्तिर्विपरीते तु संसृतिः।।५२।।

भावार्थ : भाव ही आदमी लोग के बन्धन अऊरी मोक्ष के कारन बाटे। भाव सन के शुद्ध भईला (अर्थात् शिवार्पित भईला) पर मुक्ति आ ऊलटा स्थिति (अर्थात् अशुद्ध भईला पर) संसार अर्थात् बन्धन होला ।।५२।।

भावस्य शुद्धिराख्याता शिवोऽहमिति योजना।
विपरीतसमायोगे कुतो दुःखनिवर्तनम्।।५३।।

भावार्थ : 'हम शिवजी हईं'— अईसन योजना (अर्थात् शिवजी के साथे सम्बन्ध) के भाव के शुद्धि कहल गईल बाटे। ओकरा से ऊलटा योजना (अर्थात् हम शिवजी से अलगा बानी ई संसार शिवजी आ हमरा से अलगा बाटे अईसन योजना) भईला पर दुःख कईसे दूर हो सकेला? ।।५३।।

भोक्ता भोग्यं भोजयिता सर्वमेतच्चराचरम्।
भावयन् शिवरूपेण शिवो भवति वस्तुतः।।५४।।

भावार्थ : (जवन साधक) भोग करेवाला अर्थात् जीव भोज्य अर्थात् विषय आ भोजयिता शिव आ ई सगरी चराचर के शिवरूप में भावना करेला (अर्थात् सबके शिव समझेला) असली में ऊ शिव ही हो जाला ।।५४।।

मिथ्येति भावयन् विश्वं विश्वातीतं शिवं स्मरन्।
सत्तानन्दचिदाकारं कथं बद्धमिहार्हति।।५५।।

भावार्थ : जवन संसार के झूठ आ शिवजी के विश्व के ओने सच्चिदानन्द रूप समझेला। ऊ ए संसार में (माया आदि के पाशबन्धन के) बन्धन में कईसे आ सकेला? ।।५५।।

सर्वं कर्मार्चनं शम्भोर्वचनं तस्य कीर्तनम्।
इति भावयतो नित्यं कथं स्यात्कर्मबन्धनम्।।५६।।

भावार्थ : सगरी काम शिवजी के पूजा बाटे। सगरी वचन ऊहाँ के नामसङ्कीर्तन बाटे। रोजे अईसन भावना करेवाला के करम बन्धन कईसे हो सकेला? ।।५६।।

सर्वेन्द्रियगतं सौख्यं दुःखं वा कर्मसम्भवम्।
शिवार्थं भावयन् योगी जीवन्मुक्तो भविष्यति।।५७।।

भावार्थ : सगरी इन्द्रिय सन में वर्तमान (अर्थात् सगरी इन्द्रियसन के द्वारा भोगे जाएवाला) सुख आ चाहे दुःख करम से जनमेला। ओ सगरी दुःख सुखसन के शिवलिङ्ग के समर्पित करेवाला जोगी जीवन्मुक्त होला ॥५७॥

शिष्यस्थल - (६९)

शासनीयो भवेद्यस्तु परकायेन सर्वदा।
तत्प्रसादात्तु मोक्षार्थी स शिष्य इति कीर्तितः ।।५८।।

भावार्थ : शिष्यस्थल वर्णन— परकाय अर्थात् परब्रह्म के देहवाला शिवजोगी के द्वारा जवन हमेशा शासन करे जोग बाटे, आ ओ अर्थात् शिवजोगी के किरिपा से मोक्ष के चाहेवाला बाटे ऊ शिष्य कहल जाला ॥५८॥

भावो यस्य स्थिरो नित्यं मनोवाक्कायकर्मभिः।
गुरौ निजे गुणोदारे स शिष्य इति गीयते।।५९।।

भावार्थ : जेकर भावना अपना गुणोदार (अर्थात् ज्ञान, वैराग्य आदि के कारन उन्नत) गुरु के विषय में मन, वाणी आ कर्म से हमेशा स्थिर बाटे (अर्थात् जवन मन, वाणी आ कर्म से हमेशा गुरु के प्रति भक्तिभाव से भरल बाटे) ऊ शिष्य कहल जाला ॥५९॥

शान्तो दान्तस्तपश्शीलः सत्यवाक् समदर्शनः।
गुरौ शिवे समानस्थः स शिष्याणामिहोत्तमः।।६०।।

भावार्थ : शान्त (अर्थात् अपना मन के बिना कवनो कलंक), दान्त (बाहरी इन्द्रिय सन के वश में रखेवाला), तपस्वी (अर्थात् यम, नियम आदि आठ योगांग सन के अभ्यास करेवाला), हमेशा सांच बोलेवाला, बराबर देखेवाला, गुरु आ शिवजी के प्रति समान भाव रखेवाला आदमी ए संसार में शिष्य सन में बढिया कहल गईल बाटे ॥६०॥

गुरुमेव शिवं पश्येच्छिवमेव गुरुं तथा।
नैतयोरन्तरं किञ्चिद्विजानीयाद्विचक्षणः।।६१।।

भावार्थ : विद्वान् शिष्य के चाही कि ऊ गुरु के शिवजी के रूप में आ शिवजी के गुरु के रूप में देखे। ऊ ईहाँ लो में कवनो अन्तर ना बुझे ॥६१॥

शिवाचारे शिवध्याने शिवज्ञाने च निर्मले।
गुरोरादेशमात्रेण परां निष्ठामवाप्नुयात्।।६२।।

भावार्थ : (कहल गईल गुण सन से युक्त चेला) शिवाचार, शिवध्यान आ निरमल शिवज्ञान के विषय में गुरुजी के खाली आदेश से श्रेष्ठ विश्वास आ श्रद्धा के पा लेला ॥६२॥

ब्रह्माण्डबुद्बुदोद्भूतं मायासिन्धुं महत्तरम्।
गुरोः कवलयत्याशु कटाक्षवडवानलः।।६३।।

भावार्थ : गुरुजी के किरिपा दृष्टि रूपी बड़वानल (समुन्दर में लागे वाला आग) ब्रह्माण्डरूपी बुदबुद से जनमल बड़हन मायारूपी समुन्दर के जल्दीये (शीघ्र) लील्ह (निगल) जाला ॥६३॥

गुरोः कटाक्षवेधेन शिवो भवति मानवः।
रसवेधाद् यथा लोहो हेमतां प्रतिपद्यते।।६४।।

भावार्थ : जवना तरह से रस अर्थात् पारा के द्वारा विद्ध भईला पर लोहा सोना हो जाला ओही तरह से गुरु के किरिपा दृष्टि से मनुष्य शिव हो जाला ॥६४॥

न लङ्घयेद् गुरोराज्ञां ज्ञानमेव प्रकाशयन्।
शिवासक्तेन मनसा सर्वसिद्धिमवाप्नुयात्।।६५।।

भावार्थ : गुरुजी के आज्ञा के कबहु उल्लंघन ना करे के चाही। ए तरह आज्ञा के मानेवाला चेला शिव में तल्लीन मन के द्वारा शिवाद्वैत ज्ञान के पा लेला आ सगरी सिद्धि सन के भी पा लेला ॥६५॥

शिवादन्यज्जगन्मिथ्या शिवः संवित्स्वरूपकः।
शिवस्त्वमिति निर्दिष्टो गुरुणा मुक्त एव सः।।६६।।

भावार्थ : शिव से अलगा जगत् झूठ बाटे। शिव ज्ञानसरूप बानी। तुहू शिवेजी हऊव अईसन गुरुजी के द्वारा निर्देश कईल गईल साधक मुक्त हो जाला ॥६६॥

गुरोर्लब्ध्वा महाज्ञानं संसारामयभेषजम्।
मोदते यः सुखी शान्तः स जीवन्मुक्त एव हि।।६७।।

भावार्थ : जवन गुरुजी से संसाररूपी रोग के महा औषधि रूप महाज्ञान के पा लेला ऊ सुखी, शान्त आ जीवन्मुक्त हो जाला ॥६७॥

शुश्रूषुस्थल - (७०)

बोध्यमानः स गुरुणा परकायेन सर्वदा।
तच्छुश्रूषारतः शिष्यः शुश्रूषुरिति कीर्त्यते।।६८।।

भावार्थ : शुश्रूषुस्थल वर्णन— परकाय गुरुजी के द्वारा हमेशा उपदिष्ट भईला आ ऊहाँ के सेवा में लागल चेला शुश्रूषु कहल जाला ।।६८।।

किं सत्यं किं नु वासत्यं क आत्मा कः परः शिवः।
इति श्रवणसंसक्तो गुरोः शिष्यो विशिष्यते।।६९।।

भावार्थ : का सांच बाटे? का झूठ? कवन आतमा बाटे? परशिव के हईं? अईसन गुरुजी से उपदेश गरहण करे में लागल चेला खाली सेवा करेवाला चेला के अपेक्षा विशेष (किरिपा के पात्र) होला ।।६९।।

श्रुत्वा श्रुत्वा गुरोर्वाक्यं शिवसाक्षात्क्रियावहम्।
उपशाम्यति यः स्वान्ते स मुक्तिपदमाप्नुयात्।।७०।।

भावार्थ : शिवजी के साक्षात्कार करावेवाला गुरूजी के वचन सुन-सुनके जवन शिष्य मन में शान्तिलाभ करेला, ऊहे मुक्तिपद के पावेला ।।७०।।

न बुध्यति गुरोर्वाक्यं विना शिष्यस्य मानसम्।
तेजो विना सहस्रांशोः कथं स्फुरति पङ्कजम्।।७१।।

भावार्थ : गुरुजी के (उपदेश) वाक्य के बिना चेला के मन प्रबुद्ध ना होला। सूरूज के रोसनी के बिना कमल कईसे खिल सकेला? ।।७१।।

सूर्यस्योदयमात्रेण सूर्यकान्तः प्रकाशते।
गुरोरालोकमात्रेण शिष्यो बोधेन भासते।।७२।।

भावार्थ : (जईसे) सूरूज के खाली उगला से सूरूजकान्त मनि प्रकाश करे लागेला (ओही तरह) गुरु के (उपदेशरूपी) आलोक से चेला ज्ञान के कारन चमके लागेला ।।७२।।

अद्वैतपरमानन्दप्रबोधैकप्रकाशकम् ।
उपायं शृणुयाच्छिष्यः सद्गुरुं प्राप्य प्राञ्जलिः।।७३।।

भावार्थ : चेला बढिया गुरुजी के पा के (ऊहाँ के सामने) हाथ जोड़के (अर्थात् श्रद्धावन्त होके) अद्वैत परमानन्द ज्ञान के खाली प्रकाशक उपाय सुनो ।।७३।।

किं तत्त्वं परमं ज्ञेयं केन सर्वे प्रतिष्ठिताः।
कस्य साक्षात्क्रिया मुक्तिः कथयेति समासतः।।७४।।

भावार्थ : (चेला गुरुजी से कहे कि हे गुरुदेव !) कवन तत्त्व परम अर्थात् श्रेष्ठ एहीं से ज्ञेय बाटे? कवना के कारन सगरी चराचर स्थित बाटे? केकर साक्षात्कार मुक्ति कहल जाला, एकरा के रऊवा संक्षेप में बतलाई ।।७४।।

इति प्रश्ने कृते पूर्वं शिष्येण नियतात्मना।
ब्रूयात्तत्त्वं गुरुस्तस्मै येन स्यात् संसृतेर्लयः।।७५।।

भावार्थ : नियतात्मा अर्थात् एकाग्रचित्त वाला चेला के द्वारा ए तरह के प्रश्न कईला पर ओ चेला के गुरु (ओ) तत्त्व के उपदेश दे जवना से संसार के लय हो जाव (अर्थात् बन्धन कट जाव) ।।७५।।

शिव एव परं तत्त्वं चिदानन्दसदाकृतिः।
स यथार्थस्तदन्यस्य जगतो नास्ति नित्यता।।७६।।

भावार्थ : (एकरा बाद गुरुजी कही)— सत्, चित् आ आनन्द सरूप शिवजी ही परम (अर्थात् अन्तिम आ सबका ले बड़हन) तत्त्व बानी । ऊहे के सांच बानी । ऊहाँ से अलगा संसार नित्य नईखे ।।७६।।

अयथार्थप्रपञ्चोऽयं प्रतितिष्ठति शङ्करे।
सदात्मनि यथा शुक्तौ रजतत्त्वं व्यवस्थितम्।।७७।।

भावार्थ : ई झूठ परपञ्च सत् सरूप शिवजी में ओही तरह से स्थित बाटे जईसे सीपी में मोती स्थिर रहेला ।।७७।।

शिवोऽहमिति भावेन शिवे साक्षात्कृते स्थिरम्।
मुक्तो भवति संसारान्मोहग्रन्थेर्विभेदतः।।७८।।

भावार्थ : हम शिव हई ए भाव से शिवजी के साक्षात्कार भईला पर संसाररूपी मोह ग्रन्थी के तुरला से साधक निश्चित रूप से मुक्त हो जाला ।।७८।।

शिवं भावय चात्मानं शिवादन्यं न चिन्तय।
एवं स्थिरे शिवाद्वैते जीवन्मुक्तो भविष्यसि।।७९।।

भावार्थ : अपना के शिवजी समझी, शिवजी से अलगा अऊरी के अपना विचार के विषय मत बनाव, ए तरह से शिवाद्वैत में स्थिर भावना भईला पर जीवन्मुक्त हो जईब ।।७९।।

एवं प्रचोदितः शिष्यो गुरुणा गुणशालिना।
शिवमेव जगत् पश्यन् जीवन्मुक्तोऽभिजायते।।८०।।

भावार्थ : गुनवान् गुरुजी के द्वारा उपदेश पावेवाला चेला संसार के शिवसरूप देखत जीवन्मुक्त हो जाला ।।८०।।

सेव्यस्थल - (७१)

गुरुवाक्यामृतास्वादात् प्राप्तबोधमहाफलः।
शुश्रूषुरेव सर्वेषां सेव्यत्वात् सेव्य उच्यते।।८१।।

भावार्थ : सेव्यस्थल वर्णन— गुरुजी के उपदेशवाक्यरूपी अमरित के गरहण कईला से जेकर बोध (अर्थात् शिवाद्वैत रूपी ज्ञान) महाफल प्राप्त हो गईल अईसन शुश्रूषु ही सगरी सामान्य जन के सेवा करे जोग भईला के कारन सेव्य कहल जाला ।।८१।।

गुरूपदिष्टे विज्ञाने चेतसि स्थिरतां गते।
साक्षात्कृतशिवः शिष्यो गुरुवत् पूज्यते सदा।।८२।।

भावार्थ : गुरुजी के द्वारा उपदेश कईल गईल विज्ञान (विशिष्ट ज्ञान अर्थात् शिवाद्वैत ज्ञान) जब चित्त में स्थिर हो जाला तब शिवजी के साक्षात्कार करेवाला चेला हमेशा गुरुजी के जईसन ही पूजित होला ।।८२।।

ज्ञानादाधिक्यसम्पत्तिर्गुरोर्यस्मादुपस्थिता ।
तस्माज्ज्ञानागमाच्छिष्यो गुरुवत् पूज्यतां व्रजेत्।।८३।।

भावार्थ : जेकरा कारन (शिष्य के भीतर) गुरुजी से अधिका ज्ञानसम्पदा उपस्थित हो जाला। एही कारन ओ ज्ञानागम में चेला गुरुजी के जईसन पूजा करे जोग (पूज्य) हो जाला ।।८३।।

शिवोऽहमिति भावस्य नैरन्तर्याद् विशेषतः।
शिवभावे समुत्पन्ने शिववत् पूज्य एव सः।।८४।।

भावार्थ : हम शिव हईं ए भावना के हमेशा भईला के कारन (चेला के भीतर) जब शिवभाव विशेष रूप से उत्पन्न होला तब ऊ शिवजी के जईसन पूज्य होला ।।८४।।

विषयासक्तचित्तोऽपि विषयासङ्गवर्जितः।
शिवभावयुतो योगी सेव्यः शिव इवापरः।।८५।।

भावार्थ : (अईसन चेला) विषय सन में लागल मनवाला होके भी विषय के आसक्ति से रहित होला (काहे से कि शरीर धरम के कारन ऊ विषय के सेवन करेला बाकिर सगरी जगहां शिवदृष्टि भईला के कारन ऊ विषय सन के भोगला से जनमल पाप आ पुण्य से लिप्त ना होला एही में) शिवभाव से युक्त जोगी दोसरका शिव के जईसन पूजा करे जोग (पूजनीय) होला ।।८५।।

मुक्तः संशयपाशतः स्थिरमना बोधे च मुक्तिप्रदे
मोहं देहभृतां दृशा विघटयन् मूलं महासंसृतेः।
सत्तानन्दचिदात्मके निरुपमे शैवे परस्मिन् पदे
लीनात्मा क्षयितप्रपञ्चविभवो योगी जनैः सेव्यते।।८६।।

भावार्थ : संशयरूपी पाश से मुक्त, मुक्ति देबेवाला ज्ञान के विषय में दृढ़ मतिवाला, महासंसार के मूल कारन देहधारी लोग के मोह के अपना किरिपा कटाक्ष से नाश करेवाला आ सत् चित् आनन्दरूप, निरूपम (जेकर कवनो उपमा ना दिहल जा सके) शिवपद में लीन एही से परपंच के विस्तार के नाश करेवाला जोगी हमेशा लोग के द्वारा सेवित होला ॥८६॥

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ लिङ्गस्थलान्तर्गतप्रसादिस्थले कायानुग्रहादिनवविध-स्थलप्रसङ्गो नाम सप्तदशः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के लिङ्गस्थलान्तर्गतप्रसादिस्थल में कायानुग्रहादिनवविधस्थलप्रसङ्ग नामवाला सतरहवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।१७।।



अष्टादश: परिच्छेद: (अठरहवाँ परिच्छेद)

लिंगस्थलांतर्गत

प्राणलिंगीस्थल

अगस्त्य उवाच—

प्रसादिस्थलसम्बद्धा: स्थलभेदा: प्रकीर्तिता:।
प्राणलिङ्गिस्थलारूढान् स्थलभेदान् वदस्व मे।।१।।

भावार्थ : अगस्त्य मुनि कहनी— (हे आचार्य! रऊवा) प्रसादिस्थल से सम्बद्ध स्थली के भेद सन के वर्णन कईनी। अब प्राणलिङ्गी स्थल के भीतर आवेवाला स्थलभेद के हमरा से बतलाईं ।।१।।

श्रीरेणुक उवाच—

स्थलानां नवकं प्रोक्तं प्राणलिङ्गिस्थलाश्रितम्।
आदावात्मस्थलं प्रोक्तमन्तरात्मस्थलं तत:।।२।।

परमात्मस्थलं पश्चान्निर्देहागमसंज्ञितम्।
निर्भावागमसंज्ञं च ततो नष्टागमस्थलम्।।३।।

आदिप्रसादनामाथ ततोऽन्त्यप्रसादकम्।
सेव्यप्रसादकं चाथ शृणु तेषां च लक्षणम्।।४।।

भावार्थ : श्री रेणुकाचार्यजी कहनी— प्राणलिंगी स्थल में नव गो स्थल कहल गईल बाड़न। पहिला आत्मस्थल, ओकरा बाद अंतरात्मस्थल, फेर परमात्मस्थल, एकरा बाद निर्देहागमस्थल, निर्भावागमस्थल, ओकरा बाद नष्टागमस्थल, फेर आदिप्रसादिस्थल आ अंत्यप्रसादिस्थल आ आखिर में सेव्यप्रसादिस्थल बाटे। अब ए सब के लछन सुनी ।।२-४।।

आत्मस्थल - (७२)

जीवभावं परित्यज्य यदा तत्त्वं विभाव्यते।
गुरोश्च बोधयोगेन तदात्मायं प्रकीर्तित:।।५।।

भावार्थ : आत्मस्थल वर्णन— ई माने सेव्यस्थल गुरु के द्वारा प्रवर्तित बोध के कारन जब जीवभाव के तियाग कर तत्त्व के रूप में जानल जाला तब ऊहे आत्मा कहल जाला ।।५।।

वालाग्रशतभागेन सदृशो हृदयस्थितः।
अश्नन् कर्मफलं सर्वमात्मा स्फुरति दीपवत्।।६।।

भावार्थ : बाल के अगिला भाग के सौवां भाग के बराबर ई हिरिदय में स्थिर रहत कर्मफल के भोग ना करत आतमा दीया के जईसन प्रकाशित होला आ प्रकाश करेला ।।६।।

आत्मापि सर्वभूतानामन्तःकरणमाश्रितः।
अणुभूतो मलासङ्गादादिकर्मनियन्त्रितः।।७।।

भावार्थ : सगरी प्राणीलोग के अन्तःकरन में रहत आतमा भी मल से जुड़ला के कारन आदि माने पुरानका कर्म से नियन्त्रित भईल अणु बनकर रहेला। (आ चाहे सगरी पांच गो महाभूत सन के आतमा अर्थात् आश्रय परमेसर भी मल के संसर्ग से अनादि कर्मवासना से नियंत्रित होके अणु अर्थात् जीव के रूप में तत्तत् अन्तःकरन में स्थिर रहेनी) ।।७।।

जपायोगाद्यथा रागः स्फटिकस्य मणेर्भवेत्।
तथाऽहङ्कारसम्बन्धादात्मनो देहमानिता।।८।।

भावार्थ : जवना तरह स्वच्छ स्फटिक मणि जपाकुसुम (गुड़हल के फूल) के साथे संयुक्त भईला पर लाल रंग के हो जाला ओही तरह अहंकार के सम्बन्ध से आतमा भी देहाभिमानी हो जाला (अर्थात् देह के ही आपन सरूप समझे लागेला) ।।८।।

अशरीरोऽपि सर्वत्र व्यापकोऽपि निरञ्जनः।
आत्मा मायाशरीरस्थः परिभ्रमति संसृतौ।।९।।

भावार्थ : देहरहित होवत भी सगरी जगहां विद्यमान, व्यापक होवत भी निरंजन अर्थात् दोषरहित ई आतमा माया के द्वारा कल्पित शरीर में स्थिर होके संसार में भरमण करत रहेला ।।९।।

आत्मस्वरूपविज्ञानं देहेन्द्रियविभागतः।
अखण्डब्रह्मरूपेण तदात्मप्राप्तिरुच्यते।।१०।।

भावार्थ : जब देह आ इन्द्रिय के विभाग से (अर्थात् आतमा देह अऊरी इन्द्रिय से अलगा बाटे अईसन विचार से) अखण्ड ब्रह्म के रूप में आत्मसरूप के ज्ञान हो जाला तब आत्मप्राप्ति कहल जाला ।।१०।।

न चास्ति देहसम्बन्धो निर्देहस्य स्वभावतः।
अज्ञानकर्मयोगेन देही भवति भुक्तये।।११।।

भावार्थ : जे सुभावे से देहरहित बाटे ओकर देह से सम्बन्ध कबहुं ना होला। अज्ञान आ ओकरा से जनमल अपना करम के जोग से (ई आतमा) भोग करे खातिर देह के धारन करेवाला बनेला ॥११॥

नासौ देवो न गन्धर्वो न यक्षो नैव राक्षसः।
न मनुष्यो न तिर्यक्च न च स्थावरविग्रहः।।१२।।

भावार्थ : (ई आतमा) ना देव, ना गन्धर्व, ना यक्ष आ ना राक्षसे बाटे। साथ ही इ ना आदमी, ना तिर्यक् अर्थात् चिड़िया-चुरुंग आ ना स्थावरे देहवाला पेड़-खूट आदि बाटे ॥१२॥

नानाकर्मविपाकाश्च नानायोनिसमाश्रिताः।
नानायोगसमापन्नाः नानाबुद्धिविचेष्टिताः।।१३।।

नानामार्गसमारूढाः नानासङ्कल्पकारिणः।
अस्वतन्त्राश्च किञ्चिज्ज्ञाः किञ्चित्कर्तृत्वहेतवः।।१४।।

लीलाभाजनतां प्राप्ताः शिवस्य परमात्मनः।

भावार्थ : (ई आतमा) नाना कर्मविपाक वाला बिया एही से देव, आदमी, पशु, पक्षी आदि अनेक जोनि में जनमेले। एही के बाद अनेक तरह के सुखदुःखात्मक भोग सन के पाके अनेक तरह के विचार आ चेष्टा करेले। ई जीव जैन, बौद्ध आ वैष्णव आदि अनेक धर्म के रास्ता के आश्रयण करके अनेक तरह के विचार करत रहेले। अस्वतन्त्र, अल्पज्ञ, अल्पकर्तृत्व से युक्त ई परमातमा शिवजी के द्वारा खेलल गईल लीला के पात्र के जईसन बिया ॥१३-१४॥

चोदिता परमेशेन स्वस्वकर्मानुरूपतः।।१५।।
स्वर्गं वा नरकं वापि प्राणिनो यान्ति कर्मिणः।

भावार्थ : ई करम करेवाला परानी परमेसर के द्वारा अपना-अपना करम सन के अनुसार प्रेरित होके सरग अथवा नरक के पा लेबेला ॥१५॥

पुनः कर्मावशेषेण जायन्ते गर्भकोटरात्।।१६।।

जाता मृताः पुनर्जाताः पुनर्मरणभाजिनः।
भ्रमन्ति घोरसंसारे विश्रान्तिकथया विना।।१७।।

भावार्थ : फेर भोग से बचल करम के कारन ई जीव गरभ से जनमेले (कुछ समय तक ई संसार में रहेले। फेर) मर जाले। फेर जनम लेले आ फेर मृत्यु के पात्र

बन जाले। ई लोग ए घोर संसार में हमेशा भरमन करत रहेला। जीव भईल ही दुःख के सर्वस्व बाटे आ ई जीवत्व मल से कल्पित बाटे। गुरुजी के द्वारा दीइल गईल ज्ञान से ई दूर होला आ (जीव के) ज्ञानशक्ति मिलेला ॥१६-१७॥

जीवत्वं दुःखसर्वस्वं तदिदं मलकल्पितम्।
निरस्यते गुरोर्बोधाज्ज्ञानशक्तिः प्रकाशते।।१८।।

भावार्थ : गुरुजी के उपदेश से जब साधक के जीवभाव खतम हो जाला तब खतम जीवभाव वाला ओ आदमी के निश्चित रूप से अन्तरात्मभाव भी हो जाला ॥१८॥

अन्तरात्मस्थल - (७३)

यदा निरस्तं जीवत्वं भवेद् गुर्वनुबोधतः।
तदान्तरात्मभावोऽपि निरस्तस्य भवेद् ध्रुवम्।।१९।।

भावार्थ : अन्तरात्मस्थल वर्णन— देह के भीतर भी ई जीव जब देह के प्रति आसक्ति से रहित हो जाला तब बोध के कारन आ परात्मभाव से युक्त भईला से ऊ अन्तरातमा कहल गईल बाटे ॥१९॥

देहस्थितोऽप्ययं जीवो देहसङ्गविवर्जितः।
बोधात् परात्मभावित्वादन्तरात्मेति कीर्तितः।।२०।।

भावार्थ : जीवातमा आ परमातमा के बीच के भईला के कारन आतमा कहल गईल दुनु के धरम से युक्त भईला से अन्तरात्मा कहल गईल बिया ॥२०॥

आत्मान्तरालवर्तित्वाज्जीवात्मपरमात्मनोः।
योगादुभयधर्माणामन्तरात्मेति कीर्तितः।।२१।।

भावार्थ : अहङ्कार के सम्बन्ध के कारन (जीव के) मनुष्यत्व आदि के भरम होला। (मनुष्यत्व) आतमा के सुभाव ना बाटे। अईसन ज्ञान भईला से साधक अन्तरातमा कहल जाला ॥२१॥

अहङ्कारस्य सम्बन्धान्मनुष्यत्वादिविभ्रमः।
न स्वभाव इति ज्ञानादन्तरात्मेति कथ्यते।।२२।।
यथा पद्मपलाशस्य न सङ्गो वारिणा भवेत्।
तथा देहजुषोऽप्यस्य न शरीरेण सङ्गतिः।।२३।।
नीडस्थितो यथा पक्षी नीडाद्भिन्नः प्रदृश्यते।
देहस्थितस्तथात्मायं देहादन्यः प्रकाश्यते।।२४।।

भावार्थ : जवना तरह कमल के पतई के जल के साथे सम्बन्ध ना होला ओही तरह से देह के साथे संयुक्त भी ए जीव के देह के साथे संगति ना होला। घोसला में रहेवाला पक्षी भी घोसला से भिन्न दिखाई देला ओही तरह से आतमा देह में रहत देह से दोसर रूप में प्रकाशित होला। ॥२२-२४॥

आच्छाद्यते यथा चन्द्रो मेघैरासङ्गवर्जितैः।
तथात्मा देहसङ्घातैरसङ्गपरिवेष्टितः॥२५॥

भावार्थ : जवना तरह चनरमा सम्बन्धरहित बादल सन से ढ़का जाला ओही तरह से आतमा भी सम्बन्ध ना रहत देहसमूह सन से ढका जाला ॥२५॥

निर्ममो निरहङ्कारो निरस्तोपाधिविक्लवः।
देहस्थोऽपि सदा ह्यात्मा शिवं पश्यति योगतः॥२६॥

भावार्थ : ममकार आ अहङ्कार से रहित आ शरीर इन्द्रिय आदि सगरी उपाधि सन से वर्जित आतमा देह में स्थिर रहके भी जोग के सामर्थ्य से शिवजी के साक्षात्कार करेले ॥२६॥

भोक्तृभोज्यपरित्यागात् प्रेरकस्य प्रसादतः।
भोक्तृताभावगलितः स्फुरत्यात्मा स्वभावतः॥२७॥

भावार्थ : भोक्ता आ भोज्य के तियगला से, प्रेरक अर्थात् ईश्वर के किरिपा से भोक्तृत्वभाव से रहित होके आतमा अपना सुभाव के अनुसार प्रकाशित होले ॥२७॥

सर्वेषां प्रेरकत्वेन शम्भुरन्तःस्थितः सदा।
तत्परिज्ञानयोगेन योगी नन्दति मुक्तवत्॥२८॥

भावार्थ : भगवान् शिवजी सबका भीतर प्रेरणा देबेवाला के रूप में स्थित बानी। ए तरह के भरल ज्ञान के कारन जोगी मुक्त के जईसन आनन्द के अनुभव करेला ॥२८॥

परमात्मस्थल - (७४)

निर्धूते तत्प्रबोधेन मले संसारकारणे।
सामरस्यात् परात्मस्थात् परमात्मायमुच्यते॥२९॥

भावार्थ : परमात्मस्थल वर्णन— शिवाद्वैत ज्ञान के द्वारा संसार के कारनभूत मल के नाश भईला पर परमातमा में स्थिर सामरस्य के कारन ई जीव परमातमा कहल जाला ॥२९॥

सर्वेषामात्मभेदानामुत्कृष्टत्वात् स्वतेजसा
परमात्मा शिवः प्रोक्तः सर्वगोऽपि प्रकाशवान्।।३०।।

भावार्थ : अपना तेज के कारन सर्वव्यापी आ प्रकाशमान शिवजी सगरी आत्मभेद सन में उत्कृष्ट भईला के कारन परमातमा कहल गईल बानी ॥३०॥

ब्रह्माण्डबुद्बुदस्तोमा यस्य मायामहोदधौ।
उन्मज्जन्ति निमज्जन्ति परमात्मा स उच्यते।।३१।।

भावार्थ : जेकर मायारूपी समुन्दर में ब्रह्माण्डरूपी बुलबुला सन के स्तोम अर्थात् समूह डूबत आ उतरात रहेला ऊ परमातमा कहल जानी ॥३१॥

यस्मिन् ज्योतिर्गणाः सर्वे स्फुलिङ्गा इव पावकात्।
उत्पत्य विलयं यान्ति तद्रूपं परमात्मनः।।३२।।

भावार्थ : जवना तरह आग स्फुलिङ्ग (अर्थात् चिनगारी) के स्थिति बाटे ओही तरह से जेकरा में जोती के समूह जनम लेके विलीन हो जाला ऊहे परमातमा के रूप बाटे ॥३२॥

यस्मिन् समस्तवस्तूनि कल्लोला इव वारिधौ।
सम्भूय लयमायान्ति तद्रूपं परमात्मनः।।३३।।

भावार्थ : जवना तरह समुन्दर में लहर बिया ओही तरह सगरी चीज जेकरा में जनम लेके लीन हो जाला। ऊहे परमातमा के रूप बाटे ॥३३॥

निरस्तमलसम्बन्धं निःशेषजगदात्मकम्।
सर्वतत्त्वोपरि प्रोक्तं स्वरूपं परमात्मनः।।३४।।

भावार्थ : परमातमा के सरूप सगरी तरह के मल सन से अलगा आ सगरी संसारात्मक भईला पर भी सगरे तत्त्व सन से परे कहल गईल बाटे ॥३४॥

यथा व्याप्य जगत्सर्वं स्वभासा भाति भास्करः।
तथा स्वशक्तिभिर्व्याप्य परमात्मा प्रकाशते।।३५।।

भावार्थ : जवना तरह सूरूज अपना तेज से सगरी संसार के व्याप्त करके प्रकाशित होले ओही तरह अपना शक्ति सन से (सगरी संसार के) व्याप्त करके परमातमा प्रकाश करेनी ॥३५॥

विश्वतो भासमानोऽपि विश्वमायाविलक्षणः।
परमात्मा स्वयंज्योतीरूपो जीवात्मनां भवेत्।।३६।।

भावार्थ : परमातमा सगरी विश्व में भासमान होवत भी विश्वमाया से विलक्षन बानी। ऊ जीवातमा सन खातिर स्वप्रकाशरूप बानी ।।३६।।

निर्देहागमस्थल - (७५)

देहिनोऽपि परात्मत्वभाविनो निरहङ्कृतेः।
निरस्तदेहधर्मस्य निर्देहागम उच्यते।।३७।।

भावार्थ : निर्देहागमस्थल वर्णन— अहङ्काररहित परमात्मभाव से युक्त शिवजोगी जब देहधर्म से रहित हो जाला तब ऊ निर्देहागम कहल जाला ।।३७।।

गलिते ममताहन्ते संसारभ्रमकारणे।
पराहन्तां प्रविष्टस्य कुतो देहः कुतो रतिः।।३८।।

भावार्थ : संसार के भरम के कारनभूत ममकार आ अहंकार के नाश भईला पर पराहन्ता में प्रवेश कईल शिवजोगी के देह कहवाँ आ (ओ देह में) प्रीति कहवाँ? (अर्थात् पराहन्ता में समाईल जोगी के देह में ना त ममकार भावना रहेले आ ना ही ओकरा प्रति प्रेमवे रहेला) ।।३८।।

केवले निष्प्रपञ्चौघे गम्भीरे चिन्महोदधौ।
निमग्नमानसो योगी कथं देहं विचिन्तयेत्।।३९।।

भावार्थ : खाली अर्थात् अद्वितीय, परपंच से रहित, गंभीर, चैतन्यरूप समुन्दर में डूबल मनवाला जोगी देह के बारे में काहे चिन्ता करी ।।३९।।

अपरिच्छेद्यमात्मानं चिदम्बरमिति स्मरन्।
देहयोगेऽपि देहस्थैर्विकारैर्न विलिप्यते।।४०।।

भावार्थ : अपना के असीम आ चिदाकाश रूप समझेवाला जोगी शरीर से सम्बद्ध रहला पर भी देह में रहेवाला (काम, क्रोध, लोभ आदि) विकारसन से लिप्त ना होला ।।४०।।

अखण्डसंविदाकारमद्वितीयं सुखात्मकम्।
परमाकाशमात्मानं मन्वानः कुत्र मुह्यति।।४१।।

भावार्थ : अपना के अखण्ड, चिदाकार, अद्वितीय, सुखसरूप परमाकाश समझेवाला कही भी मोहग्रस्त ना होला ।।४१।।

उपाधिविहिता भेदा दृश्यन्ते चैकवस्तुनि।
इति यस्य मतिः सोऽयं कथं देहमितो भवेत्।।४२।।

भावार्थ : एके गो चीज में जवन भेद लऊकेला, ऊ सगरी उपाधि के द्वारा बनावल होला - अईसन जेकर बुद्धि बिया ऊ देह में सीमित कइसे हो सकेला? ॥४२॥

भेदबुद्धिः समस्तानां परिच्छेदस्य कारणम्।
अभेदबुद्धौ जातायां परिच्छेदस्य का कथा।।४३।।

भावार्थ : सगरी परिच्छेद सन अर्थात् परिसीमन के कारन भेदबुद्धि होला। अभेद बुद्धि (अर्थात् सर्वं शिवमयम् अईसन बुद्धि) भईला पर परिच्छेद के का बात? (अर्थात् ऊ सम्भव नईखे) ॥४३॥

शिवोऽहमिति यस्यास्ति भावना सर्वगामिनी।
तस्य देहेन सम्बन्धः कथं स्यादमितात्मनः।।४४।।

भावार्थ : हम शिव हईं— अईसन जेकर सर्वव्यापिनी भावना बाटे अमितातमा ओ जोगी के देह से सम्बन्ध कईसे हो सकेला? ॥४४॥

निर्भावागमस्थल - (७६)

व्यतिरेकात्स्वरूपस्य भावान्तरनिराकृतेः।
भावो विकारनिर्मुक्तो निर्भावागम उच्यते।।४५।।

भावार्थ : निर्भावागमस्थल वर्णन— अपना निर्देह सरूप से अलगा आ अऊरी भाव के निराकरन से विकाररहित भाव निर्भावागम कहल जाला ॥४५॥

अहं ब्रह्मेति भावस्य वस्तुद्वयसमाश्रयः।
एकीभूतस्य चिद्व्योम्नि तदभावो विनिश्चितः।।४६।।

भावार्थ : "हम ब्रह्म हईं" ई भाव दुनु चीज (हम अऊरी ब्रह्म) पर आधृत बाटे। चिदाकाश में एक अर्थात् समरस भईल ओकर (अर्थात् द्वित्व के) अभाव निश्चित बाटे ॥४६॥

एकभावनिरूढस्य निष्कलङ्के चिदम्बरे।
क्व जातिवासनायोगः क्व देहित्वं परिभ्रमः।।४७।।

भावार्थ : निष्कलङ्क चिदाकाश में एक भाव रखेवाला के कहाँ जातिवासना के जोग, कहाँ देही के भावना आ कहाँ संसारके जनम-मृत्यु के चक्कर? ॥४७॥

शून्ये चिदम्बरे स्थाने दूरे वाङ्मानसाध्वनः।
विलीनात्मा महायोगी केन किं वापि भावयेत्।।४८।।

भावार्थ : वाणी आ मनके रासता से दूर अर्थात् परे शून्य चिदाकाश में विलीन आत्मवाला महाजोगी केकरा द्वारा आ केकर भावना करे ॥४८॥

अविशुद्धे विशुद्धे वा स्थले दीप्तिर्यथा रवेः।
पतत्येवं सदाद्वैती सर्वत्र समवृत्तिमान्।।४९।।

भावार्थ : जवना तरह सूरूज के किरन शुद्ध, अशुद्ध सगरी चीज के ऊपर पड़ेला ओही तरह अद्वैती सगरी जगहा समदृष्टि वाला होले ॥४९॥

न बिभेति जरामृत्योर्न क्षुधया वशं व्रजेत्।
परिपूर्णनिजानन्दं समास्वादन् महासुखी।।५०।।

भावार्थ : अईसन शिवजोगी बुढापा आ मृत्यु से ना डरेला। ऊ भूख आ पियास के वश में ना होला। परिपूर्ण निजानन्द के आस्वादन करत ऊ महासुखी रहेला ॥५०॥

नष्टागमस्थल - (७७)

भेदशून्ये महाबोधे ज्ञात्रादित्रयहीनकः।
ज्ञानस्य नष्टभावेन नष्टागम इहोच्यते।।५१।।

भावार्थ : नष्टागमस्थल वर्णन— भेद से खाली महाबोध के भईला पर ज्ञाता, ज्ञान आ ज्ञेय ए तीनु से रहित ज्ञान से भरल ओ निर्भावागम जोगी के ज्ञान के अपनेआप नाश भईला पर नष्टागम कहल जाला (अर्थात् ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय रूप त्रिपुटी के नाश भईला के बाद हमार ई त्रिपुटी ज्ञान नाश हो गईल ई ज्ञान भी नाश हो जाए के चाही अईसन स्थिति नष्टागम कहल जाले) ॥५१॥

अद्वैतवासनाविष्टचेतसां परयोगिनाम्।
पश्यतामन्तरात्मानं ज्ञातृत्वं कथमन्यथा।।५२।।

भावार्थ : अद्वैतवासना से भरल चित्तवाला आ अन्तरात्मा के हमेशा साक्षात्कार करेवाला पर जोगी के दोसरा तरह के ज्ञातृता कहवाँ? (अर्थात् ऊ अन्तरात्मा से भिन्न विषय के ज्ञान कईसे हो सकेला) ॥५२॥

अकर्ताऽहमवेत्ताहमदेहोऽहं निरञ्जनः।
इति चिन्तयतः साक्षात् संविदेव प्रकाशये।।५३।।

भावार्थ : हम करेवाला (कर्ता) ना हईं, हम जानेवाला (ज्ञाता) ना हईं, हम देह ना हईं, हम निरंजन हईं अईसन चिन्तन करेवाला (शिवजोगी) के साक्षाते संवित् (ज्ञान) के ही प्रकाश होला॥५३॥

निरस्तभेदजल्पस्य निरीहस्य प्रशाम्यतः।
स्वे महिम्नि विलीनस्य किमन्यज्ज्ञेयमुच्यते।।५४।।

भावार्थ : भेदवाक्य के दूरकरेवाला, इच्छारहित शम दमादि से युक्त आ अपना महिमा में विलीन (शिवजोगी) के खातिर दोसर का जाने जोग कहल जाव ।।५४।।

एकीभूते निजाकारे संविदा निष्प्रपञ्चया।
केन किं वेदनीयं तद्वेत्ता कः परिभाष्यते।।५५।।

भावार्थ : अपना सरूप के निष्परपंच संविदाकार के साथ एकरूप हो गईला पर केकरा द्वारा का जाने जोग होई? आ ओकर जानकार केकरा के कहल जाई? ।।५५।।

महासत्ता महासंविद् विश्वरूपा प्रकाशते।
तद्भिना नास्ति वस्त्वेकं भेदबुद्धिं विमुञ्चतः।।५६।।

भावार्थ : महासत्ता, महासंवित् विश्व के रूप में प्रकाशित हो रहल बाटे। भेदबुद्धि से रहित जोगी के खातिर ओकरा बिना दोसर वस्तु नईखे ।।५६।।

आदिप्रसादिस्थल - (७८)

सर्वाधिष्ठातृकः शम्भुरादिस्तस्य प्रसादतः।
आदिप्रसादीत्युक्तोऽयं निर्विकारपदे स्थितः।।५७।।

भावार्थ : **आदिप्रसादीस्थल वर्णन—** सब केहू के अधिष्ठाता शिव आदि (अर्थात् सृष्टि आदि परपंच के मूल कारन) बानी। ऊहे के किरिपा से निर्विकार पद में प्रतिष्ठा पावल जोगी आदिप्रसादी कहल जाला ।।५७।।

अनेकजन्मशुद्धस्य निरहङ्कारभाविनः।
अप्रपञ्चस्यादिदेवः प्रसीदति विमुक्तये।।५८।।

भावार्थ : जे अनेक जनम से शुद्ध बाटे, अहंकार भावना से रहित बाटे आ परपंच से हीन बाटे अईसन आदमी के मुक्ति के खातिर भगवान् शिवजी खुश होनी ।।५८।।

शिवप्रसादसम्पत्त्या शिवभावमुपेयुषि।
शिवादन्यज्जगज्जालं दृश्यते न च दृश्यते।।५९।।

भावार्थ : शिवजी के किरिपा के पावला से शिवभाव के पा लेबेवाला (जोगी) के खातिर ई संसार शिवजी से अलगा देखायी भी पड़ेला आ ना देखायी भी पड़ेला (अर्थात् ई जोगी के इच्छा पर निर्भर करेला कि ऊ बेवहार जगत् में उतर के संसार के

भगवान् से अलगा देखे आ संसार से ओने सुभाव में रहके जगत् के शिवसरूप आ आत्मसरूप देखे) ॥५९॥

शम्भोः शिवप्रसादेन संसारच्छेदकारिणा।
मोहग्रन्थिं विनिर्भिद्य मुक्तिं यान्ति विवेकिनः।।६०।।

भावार्थ : नित्यानित्य के भेद के जानेवाला लोग भगवान् शिवजी के संसार के छेदन करेवाला कल्यानमय किरिपा कटाक्ष से मोहग्रन्थि के भेद करके मुक्ति के पावेला लो ॥६०॥

विना प्रसादमीशस्य संसारो न निवर्तते।
विना सूर्योदयं लोके कुतः स्यात् तमसो लयः।।६१।।

भावार्थ : भगवान् के किरिपा के बिना संसार से छुटकारा ना होला। बिना सुरूज ऊगला के संसार में अन्हार के नाश ना होला ॥६१॥

सर्वानुग्राहकः शम्भुः केवलं कृपया प्रभुः।
मोचयेत् सकलान् जन्तून् न किञ्चिदिह कारणम्।।६२।।

भावार्थ : प्रभु अर्थात् सर्वतन्त्रस्वतन्त्र एही से सबका ऊपर किरिपा करेवाला भगवान् शिवजी अपना किरिपा के द्वारा सगरी परानी लोग के मुक्त कर देनी। ए मोक्ष के विषय में कवनो दोसर कारन नईखे ॥६२॥

अन्त्यप्रसादिस्थल - (७९)

लयः सर्वपदार्थानामन्त्य इत्युच्यते बुधैः।
प्रसादोऽनुभवस्तस्य तद्वानन्त्यप्रसादवान्।।६३।।

भावार्थ : अन्त्यप्रसादीस्थल वर्णन— विद्वान् लोग सगरी पदारथ सन के लय के अन्त्य कहेला लो। ओ लय के अनुभव प्रसाद कहलाला। ई परसाद जेकरा लगे होखे ऊ अन्त्यप्रसादी होला ॥६३॥

देवतिर्यङ्मनुष्यादिव्यवहारविकल्पना ।
मायाकृता परे तत्त्वे तल्लये तत्क्षयो भवेत्।।६४।।

भावार्थ : देवता, तिर्यक् अर्थात् पक्षी, मनुष्य आदि के बेवहार के विकल्पना माया के द्वारा रचल गईल बाटे। पर तत्त्व में ओकर लय भईला पर ओकर अर्थात् माया के भी क्षय हो जाला ॥६४॥

साक्षात्कृते परे तत्त्वे सच्चिदानन्दलक्षणे।
क्व पदार्थपरिज्ञानं कुतो ज्ञातृत्वसंभवः।।६५।।

भावार्थ : सत् चित् आनन्द रूप पर तत्त्व के साक्षात्कार भईला पर पदारथ के ज्ञान कहवाँ? आ जानेवाला के सम्भावना कहवाँ? (अर्थात् ई दुनु सम्भव नईखे काहे से कि ई मायीय स्तर पर ही अनुभूत होला। माया के लय भईला पर एकर अस्तित्व अपने आपे मेट जाला) ॥६५॥

सुषुप्तस्य यथा वस्तु न किञ्चिदपि भासते।
तथा मुक्तस्य जीवस्य न किञ्चिद्वस्तु दृश्यते।।६६।।

भावार्थ : जवना तरह से गहिरा अंघी में सुतल आदमी के कुछऊ ना बुझाला ओही तरह मुक्त जीव के भी कवनो भी वस्तु भासित ना होला (काहे से कि ऊ अपना सरूप में प्रतिष्ठित रहेला) ॥६६॥

यथाकाशमविच्छिन्नं निर्विकारं स्वरूपतः।
तथा मुक्तस्य जीवस्य स्वरूपमवशिष्यते।।६७।।

भावार्थ : जवना तरह आकाश सरूपे से निर्विकार, आ अविच्छिन्न बाटे ओही तरह से मुक्त जीव के सरूप अवशिष्ट होला ॥६७॥

न किञ्चदपि मुक्तस्य दृश्यं कर्तव्यमेव वा।
सुखस्फूर्तिस्वरूपेण निश्चला स्थितिरुच्यते।।६८।।

भावार्थ : मुक्त जीव के खातिर ना कवनो देखे जोग पदारथ बाटे आ ना ही कवनो करे जोग काम। आनन्द के स्फुरन रूप से ओकर निश्चल स्थिति रहेला ॥६८॥

शिवाद्वैतपरिज्ञानशिथिलाशेषवस्तुनः ।
केवलं संविदुल्लासदर्शिनः केन को भवेत्।।६९।।

भावार्थ : शिवाद्वैत के परिज्ञान के कारन वस्तुसन में भेदभाव ना रखेवाला आ खाली संवित् शक्ति के उल्लास देखेवाला शिवजोगी के कवनो (इन्द्रिय व्यापार आ चाहे कवनो चीज) से का लाभ होई ॥६९॥

सेव्यप्रसादिस्थल - (८०)

सेव्यो गुरुः समस्तानां शिव एव न संशयः।
प्रसादोऽस्य परानन्दप्रकाशः परिकीर्त्यते।।७०।।

भावार्थ : सेव्यप्रसादीस्थल वर्णन— सब लोग के खातिर शिवजी ही सेवा करे जोग गुरु बानी। ए (सेवा करे जोग गुरुजी) के प्रसाद अर्थात् किरिपा ही परानन्दप्रकाश कहल जाला ॥७०॥

सेव्यो गुरुः स्मृतो ह्यस्य प्रसादोऽनुभवो मतः।
तदेकावेशरूपेण तद्वान् सेव्यप्रसादवान्।।७१।।

भावार्थ : शिवजोगी सेवा करे जोग गुरु कहल गईल बानी। एकर अनुभव प्रसाद कहल गईल बाटे। जवन ऊ दुनु अर्थात् गुरुजी आ प्रसाद के एक मानेवाला बाटे ऊ सेव्यप्रसादवान् कहल गईल बाटे ।।७१।।

गुरुदेवः परं तत्त्वं परतत्त्वं गुरुः स्मृतः।
तदेकत्वानुभावेन न किञ्चिदवशिष्यते।।७२।।

भावार्थ : गुरुदेव पर तत्त्व बानी। परतत्त्व ही गुरुजी बानी। ऊ दुनु लोग के एक ही बुझला के बाद शेष कुछु ना बचेला ।।७२।।

अपरिच्छेद्यमात्मस्थमवाङ्मानसगोचरम्।
आनन्दं पश्यतां पुंसां रतिरन्यत्र का भवेत्।।७३।।

भावार्थ : असीम आतमा के भीतर रहेवाला, वाणी आ मन के भी पहुँच से ओने, आनन्द के साक्षाते अनुभव करेवाला आदमी लोग के अऊरी विषय सन में का प्रीति हो सकेला? ।।७३।।

ज्ञानामृतेन तृप्तस्य किमन्यैर्भोज्यवस्तुभिः।
ज्ञानादेव परानन्दं प्रकाशयति सच्छिवः।।७४।।

भावार्थ : ज्ञान के अमरित से अघाईल आदमी के खातिर अऊरी खाये जोग पदारथ से का परयोजन? सदाशिव ज्ञान से ही परानन्द प्रकाश करेले ।।७४।।

मुक्तिरेव परा तृप्तिः सच्चिदानन्दलक्षणा।
नित्यतृप्तस्य मुक्तस्य किमन्यैर्भोगसाधनैः।।७५।।

भावार्थ : सच्चिदानन्दस्वरूप मुक्ति ही अन्तिम आ सर्वोत्कृष्ट तृप्ति बाटे। जवन नित्यतृप्त आ नित्य मुक्त बाटे ओकरा भोग के अऊरी साधन सन से का लेबे-देबे के बाटे? ।।७५।।

न बाह्यकर्म तस्यास्ति न चान्तर्नैव कुत्रचित्।
शिवैक्यज्ञानरूढस्य देहभ्रान्तिं विमुञ्चतः।।७६।।

भावार्थ : जे शिवैक्य ज्ञान से रूढ़ अर्थात् पूरा आ दृढ़ शिवैक्य ज्ञानवाला अर्थात् देहभरम (अर्थात् देह के आतमा समझे के भरम) से रहित बाटे अईसन मुक्त पुरुष के खातिर कही भी ना त कवनो बाहरी आ ना ही कवनो भीतरी करम करे जोग होला ।।७६।।

न कर्मबन्धे न तपोविशेषे
न मन्त्रयोगाभ्यसने तथैव।
ध्याने न बोधे च तथात्मतत्त्वे
मनःप्रवृत्तिः परयोगभाजाम्।।७७।।

भावार्थ : जे परजोग में उच्चस्तर के पवले बाटे ओकर मन के बेवहार कर्मबन्धन, विशेष तप, मन्तर, जोगाभ्यास, ध्यान, बोध में ना होला बाकिर आत्मतत्त्व में जरूर होला ।।७७।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्य संवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ लिङ्गस्थलान्तर्गत प्राणलिङ्गीस्थले आत्मस्थलादि-नवविधस्थलप्रसङ्गो नाम अष्टादशः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के लिङ्गस्थलान्तर्गतप्राणलिङ्गीस्थल में आत्मस्थलादिनवविधस्थलप्रसङ्ग नामवाला अठरहवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।१८।।

□□□

एकोनविंश: परिच्छेद: (ऊनईसवाँ परिच्छेद)

लिंगस्थलांतर्गत

शरणस्थल

अगस्त्य उवाच—

स्थलभेदा: समाख्याता: प्राणलिङ्गिस्थलाश्रिता:।
कथय स्थलभेदं मे शरणस्थलसमाश्रितम्।।१।।

भावार्थ : शरणस्थल वर्णन— अगस्त्य मुनि कहनी— (हे आचार्य! रऊवा) प्राणलिङ्गी स्थल के भीतर गणनीय स्थल भेद सन के बतईनी। अब शरणस्थल में आवेवाला स्थलभेद सन के बतलाई ॥१॥

रेणुक उवाच—

शरणस्थलमाश्रित्य स्थलद्वादशकं मया।
उच्यते नाम सर्वेषां स्थलानां शृणु तापस ।।२।।

भावार्थ : श्री रेणुकाचार्यजी कहनी— हे तपस्विन्! शरणस्थल के आश्रित बारह गो भेद बाड़न। हम ओ सब स्थल सन के नाम बतलावत बानी। सुनी ॥२॥

दीक्षापादोदकं पूर्वं शिक्षापादोदकं तत:।
ज्ञानपादोदकं चाथ क्रियानिष्पत्तिकं तत:।।३।।

भावनिष्पत्तिकं चाथ ज्ञाननिष्पत्तिकं तत:।
पिण्डाकाशस्थलं चाथ बिन्द्वाकाशस्थलं तत:।।४।।

महाकाशस्थलं चाथ क्रियायाश्च प्रकाशनम्।
भावप्रकाशनं पश्चात् ततो ज्ञानप्रकाशनम्।।
स्वरूपं पृथगेतेषां कथयामि यथाक्रमम्।।५।।

भावार्थ : पहिले दीक्षापादोदक, फेर शिक्षापादोदक, ओकरा बाद ज्ञानपादोदक, ओकरा बाद क्रियानिष्पत्ति फेर भावनिष्पत्ति आ ज्ञाननिष्पत्ति स्थल बाटे। पिंडाकाशस्थल, बिंद्वाकाशस्थल, महाकाशस्थल, क्रियाप्रकाशनस्थल, भावप्रकाशन स्थल तथा अन्त में ज्ञानप्रकाशनस्थल बाटे। अब ए सबके अलगा-अलगा सरूप के क्रम से बतलाएम ॥३-५॥

दीक्षापादोदकस्थल - (८१)

दीक्षयाऽपगतद्वैतं यज्ज्ञानं गुरुशिष्ययोः।
आनन्दस्यैक्यमेतेन दीक्षापादोदकं स्मृतम्।।६।।

भावार्थ : दीक्षापादोदकस्थल वर्णन— दीक्षा के द्वारा द्वैतरहित होवत जवन ज्ञान आ ओकर कारन गुरु आ चेला के आनन्द के ऐक्य बाटे ओकरा के दीक्षापादोदक कहल गईल बाटे (तात्पर्य ई बाटे कि पहिले गुरु के द्वारा दीहल गईल दीक्षा से चेला के भीतर रहेवाला द्वैतज्ञान नाश हो जाला आ ओकरा भीतर मात्र परानन्द स्थित रहेला। गुरु के भीतर परानन्द पहिले से ही रहेला काहे से कि ऊहाँ के अपना गुरुजी से पहिलही दीक्षित बानी। एही से अब दुनु लोग के आनन्द एक हो जाला। सच पूछल जाव त आनन्द एक ही बाटे। गुरु आ चेला रूपी उपाधि के भेद से ई दु गो बुझाला। ए उपाधि के मेट गईला पर ऐक्य ही बुझाये लागेला) ।।६।।

अथवा पादशब्देन गुरुरेव निगद्यते।
शिष्यश्चोदकशब्देन तयोरैक्यं तु दीक्षया।।७।।

भावार्थ : अथवा पाद शब्द से गुरुजी कहल जानी। उदक शब्द से चेला के कथन होला। दुनु के ऐक्य दीक्षा के द्वारा होला ।।७।।

परमानन्द एवोक्तः पादशब्देन निर्मलः।
ज्ञानं चोदकशब्देन तयोरैक्यं तु दीक्षया।।८।।

भावार्थ : पाद शब्द से निरमल परमानन्द कहल गईल बाटे आ उदक शब्द से ज्ञान के निरवचन होला। ई दुनु के ऐक्य दीक्षा से होला ।।८।।

परसंवित्प्रकाशात्मा परमानन्दभावनाम्।
अधिगम्य महायोगी न भेदं क्वापि पश्यति।।९।।

भावार्थ : महाजोगी परासंवित् प्रकाशरूप होके परमानन्द के भावना के पा लेहला के बाद कही भी भेद के ना देखेला ।।९।।

देशकालाद्यवच्छेदविहीनं नित्यनिर्मलम्।
आनन्दं प्राप्य बोधेन नान्यत् काङ्क्षति संयमी।।१०।।

भावार्थ : संजमशील[१] जोगी देश काल आदि (अर्थात् आकार) के सीमा से ओने नित्य, निरमल आनन्द के बोध के द्वारा आनन्द पाके कवनो दोसर चीज के इच्छा ना करेला ।।१०।।

---

१. ध्यान, धारणा आ समाधि तीनु के एक नाम बाटे संयम। त्रतमेकसंयमः (पातञ्जलयोगसूत्र, ३/४)

ज्ञानामृतमपि स्वच्छं गुरुकारुण्यसम्भवम्।
आस्वाद्य रमते योगी संसारामयवर्जितः।।११।।

भावार्थ : (खाली) गुरुजी के किरिपा से मिलल अत्यन्त निरमल ज्ञानरूपी अमरित के स्वाद लेके जोगी संसार रूपी आमय अर्थात् रोग से रहित होवत आत्म सरूप में रमन करेला ।।११।।

शिक्षापादोदकस्थल - (८२)

गुरुशिष्यमयं ज्ञानं शिक्षा योगिनमीर्यते।
तयोः समरसत्वं हि शिक्षापादोदकं स्मृतम्।।१२।।

भावार्थ : शिक्षापादोदकस्थल वर्णन— शिक्षा अर्थात् पहिले कहल गईल ज्ञान के मनन आ गुरुशिष्यमय अर्थात् गुरु आ चेला के एकरूपता के ज्ञान जेकरा से जोगी के प्रेरणा मिलेला ऊ दुनु अर्थात् शिक्षा आ ज्ञान के समरसता शिक्षापादोदक कहल जाला ।।१२।।

मथिताच्छास्त्रजलधेर्युक्तिमन्थानवैभवात्।
गुरुणा लभ्यते बोधसुधा सुमनसां गणैः।।१३।।

भावार्थ : तर्करूपी मन्थनदण्ड से गुरुजी के द्वारा मथल गईल निगमागम-शास्त्ररूपी समुन्दर से निकलल शिवाद्वैतरूपी बोधसुधा के विद्वान् लोग के द्वारा पावल जाला ।।१३।।

ज्ञानचन्द्रसमुद्भूतां परमानन्दचन्द्रिकाम्।
पश्यन्ति परमाकाशे मुक्तिरात्रौ महाधियः।।१४।।

भावार्थ : (चकोररूपी) महाबुद्धिमान् जोगी मुक्ति के रात में ज्ञानरूपी चनरमा से जनमल परम आनन्दरूपी अंजोरिया के परमाकाश अर्थात् चिदाकाश में साक्षात्कार करेले ।।१४।।

दृष्टे तस्मिन् परानन्दे देशकालादिवर्जिते।
द्रष्टव्यं विद्यते नान्यच्छ्रोतव्यं ज्ञेयमेव वा।।१५।।

भावार्थ : देश, काल आदि से रहित ओ परानन्द के साक्षात्कार हो गईला के बाद शिवजोगी के खातिर कुछु भी सुने जोग (श्रवणीय) अथवा जाने जोग (ज्ञेय) ना रह जाला ।।१५।।

आत्मानन्देन तृप्तस्य का स्पृहा विषये सुखे।
गङ्गाजलेन तृप्तस्य कूपतोये कुतो रतिः।।१६।।

भावार्थ : आत्मानन्द से तृप्त (शिवाचार्य) के वैषयिक सुख में का इच्छा हो सकेला ? (काहे से कि विषयसुख परिणाम में दु:खदायी होला आ परमानन्द नित्य, निरन्तर सुख बाटे) । जवन गङ्गाजल से अघाईल बाटे ओकर कुआँ के पानी में मन काहे लागी ॥१६॥

यस्मिन्नप्राप्तकल्लोले सुखसिन्धौ निमज्जति।
सामरस्यान्महायोगी तस्य सीमा कुतो भवेत्।।१७।।

भावार्थ : (राग, द्वेष, काम, क्रोध आदि) लहर सन से रहित जवना सुख के समुन्दर में सामरस्य के साथे महाजोगी डूबल रहेला ओ समुन्दर के आ ओ आनन्द के सीमा कईसे हो सकेला? अर्थात् ओ आनन्द के परिच्छिन्न नईखे कईल जा सकत ॥१७॥

गुरुप्रसादचन्द्रेण निष्कलङ्केन चारुणा।
यन्मन:कुमुदं नित्यबोधितं तस्य को भ्रम:।।१८।।

भावार्थ : निष्कलङ्क गुरुजी के किरिपा रूपी चनरमा से जवन मनरूपी कमल रोज प्रकाशित रहेला ओ मन में भेद के भरम कईसे हो सकेला ॥१८॥

ज्ञानपादोदकस्थल - (८३)

तदैक्यसम्पदानन्दज्ञानं ज्ञानगुरुर्मत:।
तत्सामरस्यं शिष्यस्य ज्ञानपादोदकं विदु:।।१९।।

भावार्थ : ज्ञानपादोदकस्थल वर्णन— (विद्वान् लोग) आनन्द के ज्ञान के ज्ञानगुरु मानेला लो । ओकर ऐक्य के सम्पत्ति के साथे चेला के ओ ज्ञान के सामरस्य ज्ञानपादोदक मानल गईल बाटे ॥१९॥

अविद्याराहुनिर्मुक्तो ज्ञानचन्द्र: सुनिर्मल:।
प्रकाशते पराकाशे परानन्दमहाद्युति:।।२०।।

भावार्थ : अविद्यारूपी राहु से निर्मुक्त एही से अत्यन्त स्वच्छ आ परानन्दरूपी महाद्युति वाला ज्ञान के चनरमा पराकाश अर्थात् चिदाकाश में प्रकाशित होला ॥२०॥

अज्ञानमेघनिर्मुक्त: पूर्णज्ञानसुधाकर:।
आनन्दजलधेर्वृद्धिमनुपश्यन् विभासते।।२१।।

भावार्थ : अज्ञानरूपी बादल से निर्मुक्त पूर्णज्ञानरूपी चनरमा आनन्दरूपी समुन्दर के वृद्धि देखत विशेष रूप से चमकेला ॥२१॥

ज्ञानचन्द्रोदये जाते ध्वस्तमोहतमोभरा:।
पश्यन्ति परमां काष्ठां योगिन: सुखरूपिणीम्।।२२।।

भावार्थ : ज्ञानरूपी चनरमा के उगला पर मोहान्धकारसमूह के नाश करेवाला जोगी सुखरूपी पराकाष्ठा (अर्थात् आनन्द के अन्तिम सीमा) के देखेला ॥२२॥

मायारजन्या विरमे बोधसूर्ये प्रकाशिते।
निरस्तसर्वव्यापारश्चित्रं स्वपिति संयमी।।२३।।

भावार्थ : मायारूपी रात के खतम आ ज्ञानरूपी सूरूज के ऊगला पर संजमी अर्थात् जोगी सगरी बेवहार से रहित होके सुतल अर्थात् सुषुप्तिस्थ जीव के जईसन परमानन्द के अनुभव करत रहेले— ई आश्चर्य बाटे (काहे से कि सामान्य जन के सगरी बेवहार रात में ना बल्कि दिन में होला) ॥२३॥

अनाद्यविद्याविच्छित्तिवेलायां परयोगिनः।
प्रकाशते परानन्दः प्रपञ्चेन विना कृतः।।२४।।

भावार्थ : अनादि अविद्या के छुटकारा के बेरा जोगी के परपञ्चरहित परानन्द[१] के आभास होला ॥२४॥

नित्यानन्दे निजाकारे विमले परतेजसि।
विलीनचेतसां पुंसां कुतो विश्वविकल्पना।।२५।।

भावार्थ : नित्य आनन्दसरूप निर्मल निजसरूप पर तेज में लीन चित्तवाला पुरुष लोग के खातिर विश्व के कलपना कहवाँ ? ॥२५॥

कुतो ब्रह्मा कुतो विष्णुः कुतो रुद्रः कुतो रविः।
साक्षात्कृतपरानन्दज्योतिषः साम्यकल्पना।।२६।।

भावार्थ : कहवाँ ब्रह्मा, कहवाँ विसनु, कहवाँ रुद्र आ कहवाँ सूरूज? जे परानन्द तेज के साक्षात्कार कर लेहले बाटे ओकर समानता के कलपना (केहू से भी ना हो सकेला) ॥२६॥

अपरोक्षपरानन्दविलासस्य महात्मनः।
ब्रह्मविष्ण्वादयो देवा विशेषाः सुखबिन्दवः।।२७।।

---

१. आनन्द दू तरह के होला— सप्रपञ्चानन्द आ निष्प्रपञ्चानन्द। सप्रपञ्चानन्द विषयानन्द के दोसर नाम बाटे। निष्प्रपञ्चानन्द भी अपर आ पर भेद से दू तरह के होला। अपर आनन्द ब्रह्मा, विसनुजी, रुद्र आ सदाशिव पद में रहेवाला परानी सन के अनुभव के विषय होला। शक्ति अथवा शिवसरूप के समावेश से मिलल आनन्द परानन्द कहलाला।

भावार्थ : जवन अपरोक्ष परानन्द के विलास से परिपूर्ण बाटे अईसन महातमा के (तुलना में) ब्रह्मा, विसनु आदि देवतागण सुख के विशिष्ट बिन्दु के समान बाड़न ॥२७॥

यन्मात्रासहितं लोके वाञ्छन्ति विषयं नराः।
तदप्रमेयमानन्दं परमं को न वाञ्छति॥२८॥

भावार्थ : ए संसार में आदमी लोग जेकर एक मात्रा अर्थात् जेकर एक अंश वाला आनन्द के कामना करेले ओ परम अप्रमेय आनन्द के कवन ना चाहेला ॥२८॥

क्रियानिष्पत्तिस्थल - (८४)

परकाये क्रियापत्तिः कल्पितैव प्रकाशते।
रज्जौ भुजङ्गवद् यस्मात् क्रियानिष्पत्तिमानयम्॥२९॥

भावार्थ : क्रियानिष्पत्तिस्थल वर्णन— चूँकि परकाय अर्थात् परब्रह्म देहवाला शिवजोगी के भीतर क्रिया के स्थिति कल्पित होके दृष्ट होला एही से रस्सी में साँप के जईसन ई किरिपा करेवाला होला (अर्थात् शिवजोगी के देह में क्रिया के दर्शन खाली भरम बाटे असली में ऊ शिवसरूप भईला के कारन निष्कल, निष्क्रिय आ शान्त हो जाला) ॥२९॥

ज्ञानिनां यानि कर्माणि तानि नो जन्महेतवः।
अग्निदग्धानि बीजानि यथा नाङ्कुरकारणम्॥३०॥

भावार्थ : ज्ञानीलोग के जवन काम होला उ जनम के कारन ना बनेला जईसे कि आग में जरल बिया अङ्कुर के कारन ना होले ॥३०॥

कर्मणा कृतेनापि ज्ञानिनो निरहङ्कृतेः।
विक्रिया प्रतिबिम्बस्था किं करोति हिमद्युतेः॥३१॥

भावार्थ : अहङ्काररहित ज्ञानी के द्वारा कईल गईल काम से का होला? (अर्थात् ओ काम सन के ज्ञानी पर कवनो परभाव ना पड़ेला) हिमद्युति अर्थात् चनरमा के परछाई में होवेवाला विकार से का होला? ॥३१॥

चन्द्रस्य मेघसम्बन्धाद् यथा गमनकल्पना।
तथा देहस्य सम्बन्धादारोप्या स्यात् क्रियात्मनः॥३२॥

भावार्थ : जवना तरह मेघ के साथे सम्बन्ध भईला से चनरमा चलत जईसन लागेला (जबकि असली में बादल ही एने-ओने घुमेले ना कि चनरमा) ओही तरह देह के साथे सम्बन्ध भईला से आतमा के ऊपर किरिपा आरोपित होवेले ॥३२॥

ज्ञानी कर्मनिरूढोऽपि लिप्यते न क्रियाफलैः।
घृतादिना यथा जिह्वा भोक्त्री चापि न लिप्यते।।३३।।

भावार्थ : जवना तरह (घी आदि) के भोग करेवाली जीभ घी आदि से उपलिप्त ना होले ओही तरह ज्ञानी काम करत भी ओकर फल से उपलिप्त (अर्थात् परभावित) ना होला ।।३३।।

निरस्तोपाधिसम्बन्धे जीवे या या क्रियास्थितिः।
सा सा प्रतीतिमात्रेण निष्फला चात्र लीयते।।३४।।

भावार्थ : (अहङ्कार आ ममकार रूप) उपाधि के सम्बन्ध से रहित भईल जीव में जवन-जवन किरिपा होला, ऊ-ऊ प्रतीति मात्र अर्थात् निष्फल होके ए आतमा में विलीन हो जाला ।।३४।।

गच्छंस्तिष्ठन् स्वपन् वापि न निष्कर्मास्ति कश्चन।
स्वभावो देहिनां कर्म ज्ञानिनां तत्तु निष्फलम्।।३५।।

भावार्थ : चलत, बईठत आ सुतत भी कवनो देहवाला काम के बिना ना रहेला (अर्थात् सबलोग सगरी अवस्था में काम करत रहेला काहे से कि जे देह के धारन कईले बाटे काम कईल ओकर सुभाव बाटे । अन्तर खाली एतने बाटे कि अज्ञानी लोग के काम कालान्तर में फल देला बाकिर) ज्ञानीलोग के काम फल ही ना देला ।।३५।।

परिपूर्णमहानन्दभाविनः शुद्धचेतसः।
न भवेत् कर्मकार्पण्यं नानाभोगफलप्रदम्।।३६।।

भावार्थ : जवन शुद्ध चित्त वाला एही से परिपूर्ण महानन्द के भावना से ओत-प्रोत बाटे ओकर अनेक भोगरूपी फल देबेवाला काम कार्पण्य (अर्थात् काम से उत्पन्न दुःख) ना होला ।।३६।।

भावनिष्पत्तिस्थल - (८५)

भावः प्रतीयमानोऽपि परकाये तु कल्पितः।
शुक्तौ रजतवद् यस्माद्भावनिष्पत्तिमानयम्।।३७।।

भावार्थ : भावनिष्पत्तिस्थल वर्णन— परकाय अर्थात् परब्रह्मशरीरधारी शिवजोगी के भीतर बुझाएवाला भाव भी कल्पित होला (असली ना होला) । ई सीपी में रजत के जईसन (भरमावेवाला) होला । ए कारन ऊ जोगी भावनिष्पत्तिमान् होला ।।३७।।

भावेन नास्ति सम्बन्धः केवलज्ञानयोगिनः।
तथापि भावं कुर्वीत शिवे संसारमोचके।।३८।।

भावार्थ : यद्यपि खाली ज्ञानजोगी के भाव के साथे कवनो सम्बन्ध ना होला फिर भी जोगी के चाही कि संसार के बन्धन से मुक्ति दिलावेवाला शिवजी के प्रति (आराध्य के) भावना करे ॥३८॥

परिपूर्णप्रबोधेऽपि भावं शम्भौ न वर्जयेत्।
भावो हि निहितस्तस्मिन् भवसागरतारकः।।३९।।

भावार्थ : परबोध के बढ़िया से पूरा भईला पर भी शिवजी के प्रति सेव्यसेवक भाव के तियाग ना करे के चाही काहे से कि भवसागर से पार करेवाला भाव ओ शिवजी में समाईल रहेला ॥३९॥

निवर्त्य जन्मजं दुःखं भावः शैवो निवर्तते।
यथा काष्ठादिकं दग्ध्वा स्वयं शाम्यति पावकः।।४०।।

भावार्थ : (शैवभाव के जरूरत जनम से जनमल दुःख के छुटकारा पावे के बेरा ले होला) जनम के कारक दुःख के निवारन कईला के बाद शैवभाव ओही तरह से शान्त हो जाला - जईसे काठ आदि के जरावला के बाद आग शान्त हो जाला ॥४०॥

प्रकाशिते शिवानन्दे तद्भावैः किं प्रयोजनम्।
सिद्धे साध्ये चिरेणापि साधनैः किं प्रयोजनम्।।४१।।

भावार्थ : शिवानन्द के परगट भईला पर ओकर भाव सन (अर्थात् शिवजी के प्रति आराध्य आराधक आदि भाव सन) के का परयोजन? (अर्थात् ऊ निष्फल हो जाल सन)। बहुते विलम्ब से भी साध्य के सिद्ध भईला पर साधन सन के का परयोजन ॥४१॥

एकीकृते शिवे भावे ज्ञानेन सह संयमी।
विस्मितात्मसमावेशः शिवभावे विभासते।।४२।।

भावार्थ : ज्ञान के साथे शिवभावना के एक भईला पर अपना शिवसमावेश से आश्चर्यचकित संजमी शिव के रूप में विशेष रूप से परकाशित होला ॥४२॥

न भावेन विना ज्ञानं न भावो ज्ञानमन्तरा।
मोक्षाय कारणं प्रोक्तं तस्मदुभयमाश्रयेत्।।४३।।

भावार्थ : भाव के बिना ज्ञान ना होला आ ज्ञान के बिना भाव ना होला एही से मोक्ष के प्रति कारनभूत दुनु के आश्रयन करे के चाही[१] ।।४३।।

ज्ञाननिष्पत्तिस्थल - (८६)

ज्ञानस्य व्यवहारेऽपि ज्ञेयाभावात् स्वभावतः।
स्वप्नवज्ज्ञाननिष्पत्त्यां ज्ञाननिष्पन्न इत्यसौ।।४४।।

भावार्थ : ज्ञाननिष्पत्तिस्थल वर्णन— (शिवज्ञान से भरल शिवजोगी के) बेवहार में भी ओकर ज्ञान के विषय सुभाव से कुछु ना होला (काहे से कि शिवजी के अलावा ओकरा कुछऊ ना बुझाला) एही से ओकर ज्ञान के उत्पत्ति सपना के जईसन होला अईसन शिवजोगी ज्ञाननिष्पन्न कहल जाला ।।४४।।

स्वप्नजातं यथा ज्ञानं सह स्वार्थैर्निवर्तते।
तथात्मनि प्रकाशे तु ज्ञानं ज्ञेयं निवर्तते।।४५।।

भावार्थ : जवना तरह से सपना में जनमल ज्ञान अपना घट पट आदि विषय सन के साथे नष्ट हो जाला ओही तरह आत्मस्वरूप के प्रकाश भईला पर ज्ञान आ ज्ञेय दुनु से छुटकारा हो जाला ।।४५।।

परिपूर्णे महानन्दे परमाकाशलक्षणे।
शिवे विलीनचित्तस्य कुतो ज्ञेयान्तरे कथा।।४६।।

भावार्थ : परिपूर्ण महानन्दसरूप एही से पराकाश लछनवाला शिवजी में विलीन चित्तवाला शिवजोगी के खातिर दोसर ज्ञेय के का चरचा? (अर्थात् ओकरा खातिर दोसर ज्ञेय होईबे ना करेला) ।।४६।।

अखण्डानन्दसंवित्तिस्वरूपं ब्रह्म केवलम्।
मिथ्या तदन्यदित्येषा स्थितिर्ज्ञानमिहोच्यते।।४७।।

---

१. जद्यपि ज्ञान आ भाव अन्योन्याश्रित बाटे फिर भी ज्ञान के मिले खातिर सबसे पहिले भाव के जरूरत होला। ई भाव पर कोटि के ना होके अवर कोटि के होला। अवर कोटि के भाव से ज्ञान आ ज्ञान से परकोटि के भाव आवेला ऊ शिवसामरस्य होला। ओकरा बाद जोगी के इच्छा पर निर्भर करेला कि ऊ फेर आनन्द के अनुभव करे खातिर भाव के स्तर पर अवरोहण करे के चाहे आ चाहे ना करे, काहे से कि भगवद्भक्ति मोक्ष से बढ़के बिया अईसन कुछु सिद्ध महातमा लोग के सिद्धान्त बाटे एही से बाली आदि भगवान् से जनम-जनम में भक्ति के मांगल लो।

भावार्थ : अखण्ड आनन्द आ (अखण्ड) ज्ञान सरूप ब्रह्म ही खाली बानी (अर्थात् खाली सांच बानी) ऊहाँ से अलगा सब कुछु झूठ बाटे— अईसन स्थिति ए संसार अथवा ए विषय में ज्ञान कहल जाले ।।४७।।

सत्तात्मनानुवृत्तं यद् घटादिषु परं हि तत्।
व्यावर्तमाना मिथ्येति स्थितिर्ज्ञानमिहोच्यते।।४८।।

भावार्थ : जवन घड़ा आदि में सत्ता के रूप में अनुवृत्त बाटे (अर्थात् व्याप्त बाटे- घटोऽस्ति, पटोऽस्ति, मठोऽस्ति सगरी जगहां अस्ति के रूप में भासित (होला) बाकिर ऊ परतत्त्व अर्थात् शिवजी बानी। जवन व्यावर्तमान् बानी (अर्थात् एक ही भईला पर दोसर ना रहेला जईसे घड़ा के रहला पर पट नईखे) ऊ मिथ्या बाटे। अईसन स्थिति ज्ञान कहल जाले ।।४८।।

अकारणमकार्यं यदशेषोपाधिवर्जितम्।
तद्ब्रह्म तदहं चेति निष्ठा ज्ञानमुदीर्यते।।४९।।

भावार्थ : जवन ना कारन बानी ना कार्य आ सगरी उपाधि सन से रहित बानी ऊहे ब्रह्म बानी आ हम भी ब्रह्म हईं अईसन दृढ़ धारणा ज्ञान कहल जाला ।।४९।।

ज्ञाताप्यहं ज्ञेयमिदमिति व्यवहृतिः कुतः।
अभेदब्रह्मस्वारस्ये निरस्ताखिलवस्तुनि।।५०।।

भावार्थ : सगरी सांसारिक परपञ्च से रहित अभेद ब्रह्म के सामरस्य में हम ज्ञाता बानी ऊ ज्ञेय बाटे अईसन बेवहार कहवाँ सम्भव बाटे? ।।५०।।

पिण्डाकाशस्थल - (८७)

यथा पिण्डस्थ आकाशस्तथात्मा पूर्ण उच्यते।
एतदर्थविवेको यः पिण्डाकाशस्थलं विदुः।।५१।।

भावार्थ : पिण्डाकाशस्थल वर्णन— जवना तरह ए पिण्ड अर्थात् देह में रहेवाला आकाश पूरा कहल जाला। ओही तरह ए पिण्ड में रहेवाला आतमा भी पूरा कहल जाला। ए अरथ के जवना ज्ञान बाटे ऊहे पिण्डाकाशस्थल कहल गईल बाटे ।।५१।।

घटोपाधिर्यथाकाशः परिपूर्णः स्वरूपतः।
तथा पिण्डस्थितो ह्यात्मा परिपूर्णः प्रकाशते।।५२।।

भावार्थ : जवना तरह घटरूप उपाधि से युक्त आकाश स्वरूप से परिपूरन होला। ओही तरह देह में रहेवाला आतमा परिपूरन होके परकाशित होला ।।५२।।

अन्त:स्थितं पराकाशं शिवमद्वैतलक्षणम्।
भावयेद् यः सुमनसा पिण्डाकाशः स उच्यते।।५३।।

भावार्थ : अद्वैत लछन शिव के जवन अन्त:स्थित पराकाश के रूप में शुद्ध मन से भावना करेला ऊ पिण्डाकाश कहल जाला ।।५३।।

शिवागारमिदं प्रोक्तं शरीरं बोधदीपितम्।
षट्त्रिंशत्तत्त्वघटितं सुमनःपद्मपीठकम्।।५४।।

भावार्थ : छत्तीस गो तत्त्व सन से रचाईल शुद्ध मन रूपी कमलपीठ से युक्त आ बोध अर्थात् शिवज्ञान से दीक्षित (अर्थात् परकाशित) ई देह शिव के आगार (अर्थात् रहे के जगहाँ) कहल जाला ।।५४।।

पराकाशस्वरूपेण प्रकाशः परमेश्वरः।
हृदाकाशगुहालीनो दृश्यतेऽन्तः शरीरिणाम्।।५५।।

भावार्थ : पराकाशरूप से प्रकाशमान परमेसर जीवसन के भीतर हृदयाकाशरूपी गुफा में लीन देखलायी पड़ेले ।।५५।।

एतच्छिवपुरं प्रोक्तं सप्तधातुसमावृतम्।
अत्र हृत्पङ्कजं वेश्म सूक्षाम्बरमनोहरम्।।५६।।

तत्र सन्निहितं साक्षात् सच्चिदानन्दलक्षणम्।
नित्यसिद्धं प्रकाशात्मा जलस्थाकाशवच्छिवः।।५७।।

भावार्थ : सात गो धातु[1] सन से समावृत (अर्थात् बनल) ई शरीर शिव के पुर कहल जाला। एईमें सूक्ष्म आकाश से युक्त एही से मनोहर हृदयकमल शिव के अन्त:पुर बाटे । ओईमें साक्षाते सच्चिदानन्द सरूप नित्य सिद्ध प्रकाशमान् शिवजी जल में स्थित आकाश के जईसन विराजमान बानी ।।५६-५७।।

अन्तराकाशबिम्बस्थमशेषोपाधिवर्जितम् ।
घटाकाश इव च्छिन्नं भावयेच्चिन्मयं शिवम्।।५८।।

भावार्थ : (जोगी के चाही कि ऊ) हृदयाकाश बिम्ब में रहेवाला सगरी उपाधि सन से रहित, चिन्मय शिवजी के घटाकाश के जईसन परिच्छिन्न रूप में भावना करें

---

१. अन्न, रस, रुधिर (खून), मांस, चर्बी, अस्थि (हड्डी), मज्जा आ वीर्य ई सात गो धातू बाड़न ।

(अर्थात् महाकाश घट से अवच्छिन्न होके भी आकाश ही बाटे अईसेही शिवजी हृदय से अवच्छिन्न होके भी शिवजी ही बानी अईसन भावना करे ।।५८।।

बिन्द्वाकाशस्थल - (८८)

यथाकाशो विभुर्ज्ञेयः सर्वप्राण्युपरि स्थितः।
तथात्मेत्युपमानार्थं बिन्द्वाकाशस्थलं विदुः।।५९।।

भावार्थ : बिन्द्वाकाशस्थल वर्णन— सगरी परानी सन के ऊपर रहेवाला आकाश जईसे व्यापक मानल जाला ओही तरह आतमा भी (सगरी परानी सन के देह के भीतर परिच्छिन्न रूप से रहके भी व्यापक बिया) ए तुलना के अरथ के विद्वान लोग बिन्द्वाकाशस्थल कहेला ।।५९।।

यथैको वायुराख्यातः सर्वप्राणिगतो विभुः।
तथात्मा व्यापकः साक्षात् सर्वप्राणिगतः स्वयम्।।६०।।

भावार्थ : जवना तरह एक ही वायु सगरी परानीलोग में रहेला आ व्यापक बाटे ओही तरह से एके गो आतमा साक्षात् स्वयं सगरी परानी लोग में रहेला आ व्यापक बाटे (अर्थात् परानीलोग के भीतर आ बाहर सब जगहां स्थित बाटे) ।।६०।।

यथा वह्नेरमेयात्मा सर्वत्रैकोऽपि भासते।
तथा शम्भुः समस्तात्मा परिच्छेदविवर्जितः।।६१।।

भावार्थ : जईसे अपरिमेय आग एक होवत भी सगरी जगहां पर भासित होले ओही तरह सबका आत्मसरूप शिवजी भी (एक होवत) अपरिसीम बानी।।६१।।

सर्वेषां देहिनामन्तश्चित्ततोऽयं प्रकाशते।
तस्मिन् प्रतिफलत्यात्मा शिवो दर्पणवद् विभुः।।६२।।

भावार्थ : सगरी जीव सन के भीतर चित्तरूपी जल परकाशित होला। जवना तरह ऐनक में ओही तरह ओ (चित्तरूपी जल) में आतमारूपी शिवजी प्रतिबिम्बित होनी (अथवा शिवजी आतमा के रूप में प्रतिबिम्बित होवेनी किन्तु चित्त के ऐनक आ शुद्ध जल के जईसन होवे के चाही) ।।६२।।

एको वशीकृतः संवित्प्रकाशात्मा परात्परः।
सर्वप्राणिगतो भाति तथापि विभुरुच्यते।।६३।।

भावार्थ : परात्पर एही से अवशीकृत् अर्थात् केहू के नियन्त्रण में ना रहेवाला अर्थात् सर्वतन्त्रस्वतन्त्र प्रकाशस्वरूप परमेसर सगरी परानीलोग में परकाशित हो रहल

बानी (अर्थात् अव्यापक जईसन दिख रहल बानी) तब भी ऊ व्यापक कहल जाला (ओकर देखाई देबेवाला व्यापकता ओकर उपाधि के बाटे) ।।६३।।

एक एव यथा सूर्यस्तेजसा भाति सर्वगः।
तथात्मा शक्तिभेदेन शिवः सर्वगतो भवेत्।।६४।।

भावार्थ : जईसे एक ही सूरूज अपना तेज से सब जगहां जाएवाला भासित होला ओही तरह परमातमा शिवजी भी अपना शक्तिभेद से सर्वव्यापी बानी ।।६४।।

महाकाशस्थल - (८९)

पिण्डाण्डस्थं महाकाशं न भिन्नं तद्वदात्मनः।
अभिन्नः परमात्मेति महाकाशस्थलं विदुः।।६५।।

भावार्थ : महाकाशस्थल वर्णन— जवना तरह पिण्ड अर्थात् देह आ अण्ड अर्थात् ब्रह्माण्ड (आ प्रकृताण्ड आ चाहे मायाण्ड) में रहेवाला आकाश परस्पर अलगा ना होला ओही तरह (जीवातमा से) परमातमा अभिन्न बानी। एकरा के जानल महाकाशस्थल कहल गईल बाटे ।।६५।।

यथा न भिन्नमाकाशं घटेषु च मठेषु च।
तथाण्डेषु पिण्डेषु स्थितो ह्यात्मा न भिद्यते।।६६।।

भावार्थ : जवना तरह घड़ा अथवा मठसन में रहेवाला अर्थात् ओकरा से अवच्छिन्न आकाश भिन्न ना होला ओही तरह ब्रह्माण्ड सन में आ (ब्रह्माण्ड के भीतर रहेवाला) व्यष्टि देह सन में रहेवाला आतमा भी अलगा नईखे ।।६६।।

अनिर्देश्यमनौपम्यमवाङ्मानसगोचरम्।
सर्वतोमुखसम्पन्नं सत्तानन्दं चिदात्मकम्।।६७।।

कालातीतं कलातीतं क्रमयोगादिवर्जितम्।
स्वानुभूतिप्रमाणस्थं ज्योतिषामुदयस्थलम्।।६८।।

शिवाख्यं परमं ब्रह्म परमाकाशलक्षणम्।
लिङ्गमित्युच्यते सद्भिर्यद्बिना न जगत्स्थितिः।।६९।।

भावार्थ : अनिर्देश्य, अतुलनीय, बानी आ मन के विषय ना होवेवाला, सर्वतोमुखी, सत्-चित्-आनन्दसरूप, काल से परे अर्थात् अड़तीस कलासन से रहित, उत्पत्ति आदि क्रम से रहित, आपन अनुभव ही जेकरा में परमान बाटे अईसन नक्षत्र आदि (सुरूज, चनरमा आदि) के जनम के मूल कारन, परमाकाशसरूप शिवजी

नामवाला परब्रह्म के सत्पुरुष लोग के द्वारा लिङ्ग कहल जाला। ओकरा बिना संसार के सत्ता संभव नईखे ॥६७-६९॥

परमाकाशमव्यक्तं प्रबोधानन्दलक्षणम्।
लिङ्गं ज्योतिर्मयं प्राहुर्लीयन्ते यत्र योगिनः॥७०॥

भावार्थ : जेकरा में जोगीलोग लीन हो जाले ओ परमाकाश अव्यक्त, चित् आनन्द सरूप ज्योतिर्मय तत्त्व के विद्वज्जन लिङ्ग कहेला लो ॥७०॥

संविदेव परा काष्ठा परमानन्दरूपिणी।
तामाहुः परमाकाशं मुनयो मुक्तसंशयाः॥७१॥

भावार्थ : परानन्दरूपिणी संवित् (ज्ञान) ही पराकाष्ठा (अर्थात् अन्तिम सीमा) बाटे। संशय से रहित मुनि लोग ओकरा के परमाकाश कहेला ॥७१॥

तरङ्गादि यथा सिन्धोः स्वरूपान्नातिरिच्यते।
तथा शिवाच्चिदाकाशाद् विश्वमेतन्न भिद्यते॥७२॥

भावार्थ : जवना तरह समुन्दर से उठेवाला लहर आदि समुन्दर के सरूप से अलगा ना होला ओही तरह से चिदाकाशरूपी शिवजी से जनमल ई संसार शिवजी से अलगा नईखे ॥७२॥

यथा पुष्पपलाशादि वृक्षरूपान्न भिद्यते।
तथा शिवात् पराकाशाज्जगतो नास्ति भिन्नता॥७३॥

भावार्थ : जवना तरह से (पेड़ के फूल, फल) पेड़ के रूप से अलगा ना होला ओही तरह जगत् पराकाशरूप शिवजी से अलगा नईखे ॥७३॥

यथा ज्योतींषि भासन्ते भूताकाशे पृथक् पृथक्।
तथा भान्ति पराकाशे ब्रह्माण्डानि विशेषतः॥७४॥

भावार्थ : जवना तरह से भूताकाश[१] में नछतर के समूह अलगा-अलगा चमकेला ओही तरह से पराकाश में ब्रह्माण्ड विशेष रूप से (अर्थात् असंख्य रूप से) घूमत रहेला ॥७४॥

निरस्तोपाधिसम्बन्धं निर्मलं संविदात्मकम्।
पराकाशं जगच्चित्रविलासालम्बभित्तिकाम्॥७५॥

भावार्थ : उपाधि सम्बन्ध से रहित निरमल संवित्सरूप आकाश संसार के चित्र-विचित्र विलास अर्थात् विस्तार के आधारभित्ति बाटे ॥७५॥

क्रियाप्रकाशस्थल - (९०)

शिवस्य परिपूर्णस्य चिदाकाशस्वरूपिणः।
आत्मत्वेनानुसन्धनात् क्रियाद्योतनवान् यमी।।७६।।

भावार्थ : क्रियाप्रकाशस्थल वर्णन— चिदाकाशसरूप परिपूरन शिवजी के आतमा के रूप में अनुसन्धान कईला से संजमी क्रियाप्रकाशवान् होले ।।७६।।

निष्कलङ्कचिदानन्दगगनोपमरूपिणः ।
शिवस्य परिपूर्णस्य वृत्तिश्चैतन्यरूपिणी।।७७।।

भावार्थ : निष्कलङ्क चिदानन्द आकाशरूप परिपूरन शिवजी के वृत्ति (अर्थात् हम शिवजी हईं ई भावना) चित्सरूप बाटे ।।७७।।

निष्कलङ्के निराकारे नित्ये परमतेजसि।
विलीनचित्तवृत्तस्य तथा शक्तिः क्रियोच्यते।।७८।।

भावार्थ : निष्कलंक निराकार नित्य आ परमतेजसरूप शिवजी में समाईल चित्तवृत्तिवाला (शिवजोगी) के ओही तरह के शक्ति क्रिया कहल जाले ।।७८।।

सर्वज्ञः सर्वकर्ता च सर्वगः परमेश्वरः।
तदैक्यचिन्तया योगी तादृशात्मा प्रकाशते।।७९।।

भावार्थ : परमेसर सब कुछु जानेवाला, सब कुछु करेवाला आ सब जगहां व्याप्त बानी। ऊहाँ के साथे ऐक्यभावना के द्वारा तादृशातमा (अर्थात् सब कुछुजानेवाला आ सब कुछु करेवाला) के रूप में परकाशित होला ।।७९।।

सर्वेन्द्रियाणां व्यापारे विद्यमानेऽपि संयमी।
प्रत्युन्मुखेन मनसा शिवं पश्यन् प्रमोदते।।८०।।

भावार्थ : संजमी शिवजोगी अपना सगरी इन्द्रियसन के सगरी व्यापार के विद्यमान भईला पर भी प्रत्युन्मुख (अर्थात् ओकरा ऊलटा स्थिति में स्थित) मन के द्वारा शिवजी के साक्षात्कार करत खुश होत रहेले ।।८०।।

कूटस्थमचलं प्राज्ञं गुणातीतं गुणोत्तरम्।
शिवतत्त्वस्वरूपेण पश्यन् योगी प्रमोदते।।८१।।

भावार्थ : कूटस्थ, अचल, प्रकृष्ट, ज्ञानवान् गुण सन से परे आ गुणेतर (अर्थात् पूरा ज्ञान वैराग्य आदि गुण सन से उत्कृष्ट) शिवतत्त्व के स्वरूप के द्वारा देखत (अर्थात्

कहल गईल गुनवाला शिवजी हमही हई ; अईसन समझेवाला जोगी आनन्दयुक्त रहेला) ॥८१॥

परात्मनि क्रिया सर्वा गन्धर्वनगरीमुखा।
प्रकाशत इति प्रोक्तं क्रियायास्तु प्रकाशनम्॥८२॥

भावार्थ : जब परमातमा में घटित होवेवाला सगरी क्रिया गन्धर्वनगरी के जईसन (तुच्छ) होके चमकेले त एकरा के क्रियाप्रकाशन कहल गईल बाटे ॥८२॥

भावप्रकाशस्थल - (९१)

तरङ्गाद्या यथा सिन्धौ न भिद्यन्ते तथात्मनि।
भावा बुद्ध्यादयः सर्वे यत्तद् भावप्रकाशनम्॥८३॥

भावार्थ : भावप्रकाशस्थल वर्णन— जवना तरह समुन्दर में ऊठेवाला लहर आदि (समुन्दर से) अलगा ना होला ओही तरह आतमा में उठेवाला बुद्धि आदि सब भाव (आतमा से अलगा ना ई) जवन बाटे ऊ भावप्रकाशन होला ॥८३॥

शिव एव जगत्सर्वं शिव एवाहमित्यपि।
भावयन् परमो योगी भावदोषैर्न बाध्यते॥८४॥

भावार्थ : ई सगरी संसार शिवजी के ही बाटे। हम भी शिव ही बानी अईसन भावना करेवाला परमजोगी संसार अथवा जनम के दोषसन से उपलिप्त ना होला ॥८४॥

शिवभावे स्थिरे जाते निर्लेपस्य महात्मनः।
ये ये भावाः समुत्पन्नास्ते ते शिवमयाः स्मृताः॥८५॥

भावार्थ : (सांसारिक विषय के वासना सन से) निर्लिप्त महात्मा शिवजोगी के भीतर जवन-जवन भाव जनम लेबेले ऊ सब के सब शिवमय ही मानल जाले ॥८५॥

अद्वितीयशिवाकारभावनाध्वस्तकर्मणा ।
न किञ्चिद्भाव्यते साक्षात् शिवादन्यन्महात्मना॥८६॥

भावार्थ : अद्वितीय शिवाकार के भावना से सगरी करम सन के नाश करेवाला महातमा शिवजोगी के प्रत्यक्ष रूप से शिवजी से अलगा ना त कुछऊ भी देखायी देला आ ना ही अनुभूत होला ॥८६॥

गलिताज्ञानबन्धस्य केवलात्मानुभाविनः।
यत्र यत्र इन्द्रियासक्तिस्तत्र तत्र शिवात्मता॥८७॥

भावार्थ : जेकर अज्ञान के बन्धन नाश हो गईल बाटे अईसन केवलातमा के अनुभव करेवाला शिवजोगी के जवन-जवन विषय सन में इन्द्रियसक्ति होला ओ-ओ विषय सन में शिवतत्त्व ही अनुभूत[१] होला (आ ओकरा खातिर आ चाहे जोगी के इच्छा पर सबका खातिर ओकरा में शिवजी ही दिखायी देबेनी) ॥८७॥

रागद्वेषादयो भावाः संसारक्लेशकारणम्।
तेषामुपरमो यत्र तत्र भावः शिवात्मकः।।८८।।

भावार्थ : राग, द्वेष आदि भाव संसाररूपी दुःख के कारन होले। जवना में ऊ नाश आ शान्त हो जईहे ओईमें शिवात्मक भाव आ जाला ॥८८॥

यथा सूर्यसमाक्रान्तौ न शक्नोति तमः सदा।
तथा प्रकाशमात्मानं नाविद्याक्रामति स्वयम्।।८९।।

भावार्थ : जवना तरह सूरूज के निकलला पर अन्हार ना रूक सकेला ओही तरह प्रकाशमान् आतमा के आगे अविद्या के खुद ही प्रहार ना होला ॥८९॥

ज्ञानप्रकाशस्थल - (९२)

मुख्यार्थेऽसम्भवे जाते लक्षणायोगसंश्रयात्।
तज्ज्ञानयोजनं यत्तदुक्तं ज्ञानप्रकाशनम्।।९०।।

भावार्थ : ज्ञानप्रकाशस्थल वर्णन— वाच्यार्थ के असम्भव अर्थात् बाधित भईला पर लक्षणा के सहायता से ओ ज्ञान के जवन जोजना बाटे ऊ ज्ञानप्रकाशन कहल गईल बाटे ॥९०॥

मुक्तस्य ज्ञानसम्बन्धो ज्ञेयाभावः स्वभावतः।
उपाधिसहितं ज्ञानं न भेदमतिवर्तते।।९१।।

भावार्थ : जीवमुक्त के ज्ञान सम्बन्ध अर्थात् लक्ष्यार्थरूप ज्ञान के समन्वय स्वाभाविक बाटे। एही से ज्ञेय के अभाव भी स्वाभाविक बाटे। जवन ज्ञान उपाधिरहित होवेला ओईमें भेद के अभाव ना रहेला अर्थात् भेद रहबे करेला ॥९१॥

ज्ञानमित्युच्यते सद्भिः परिच्छेदोऽपि वस्तुनः।
परात्मन्यपरिच्छेदे कुतो ज्ञानस्य सम्भवः।।९२।।

---

१. मीराबाई के पति राजा रतनसिंह मीरा के कृष्णभक्ति से खिसिया के ऊहाँ के मुवावे के खातिर पिटारा में साँप बन्द करके भेजले रहले। नंहईला के बाद मीराजी जब पिटारा खोलली तब ओईमें शालिग्राम के मूर्ति मिलल।

भावार्थ : विद्वान् लोग वस्तु के परिच्छेद के भी ज्ञान कहेले (घटत्वावच्छिन्न घट में घटत्वावच्छेद ही ज्ञान बाटे। ऊहे घट के अवच्छिन्न आ परिच्छिन्न करेला) परमातमा परिच्छेद से रहित बानी ऊहाँ में विषय-विषयी भाव अर्थात् सम्बन्ध कईसे सम्भव हो सकेला? ॥९२॥

ज्ञानस्याविषये तत्त्वे शिवाख्ये चित्सुखात्मनि।
आत्मैकत्वानुसन्धानं ज्ञानमित्युच्यते बुधैः।।९३।।

भावार्थ : ज्ञान के अविषयभूत चिदानन्दरूप शिव नामवाला तत्त्व के साथ आतमा के एकत्व के अनुसन्धान के विद्वान् लोग ज्ञान कहेला ॥९३॥

अपरिच्छिन्नमानन्दं सत्ताकारं जगन्मयम्।
ब्रह्मेति लक्षणं ज्ञानं ब्रह्मज्ञानमिहोच्यते।।९४।।

भावार्थ : ब्रह्म, अखण्ड, आनन्दरूप, सत्ताकार अर्थात् सत् रूप आ जगन्मय अर्थात् विश्वरूप बानी ए लछनवाला जे बानी ऊहे संसार में ब्रह्मज्ञान कहल जानी ॥९४॥

ब्रह्मज्ञाने समुत्पन्ने विश्वोपाधिविवर्जिते।
सर्वं संविन्मयं भाति तदन्यन्नैव दृश्यते।।९५।।

भावार्थ : विश्वरूप उपाधि से रहित ब्रह्मज्ञान के जनम भईला सब कुछ चिन्मय अर्थात् ज्ञानसरूप भासित होला। ओईसे भिन्न कुछऊ ना देखायी देला ॥९५॥

तस्माददृैतविज्ञानमपवर्गस्य कारणम्।
भावयन् सततं योगी संसारेण न लिप्यते।।९६।।

भावार्थ : एही कारन अद्वैतविज्ञान अपवर्ग अर्थात् मोक्ष के कारन बाटे ; अईसन हरदम भावना करेवाला जोगी संसार से लिप्त ना होला ॥९६॥

नित्ये निर्मलसत्त्वयोगिषु परे निर्वासने निष्कले
सर्वातीतपदे चराचरमये सत्तात्मनि ज्योतिषि।
संविद्व्योम्नि शिवे विलीनहृदयस्तद्भेदवैमुख्यतः
साक्षात् सर्वगतो विभाति विगलद्विश्वः स्वयं संयमी।।९७।।

भावार्थ : नित्य, निरमल, सत्त्वजोगी, लोग में पर अर्थात् प्रधान, वासनारहित, निष्कल, सर्वातीत, चराचरमय, सत्-सरूप, तेजोमय, चिदाकाशरूपी शिवजी में विलीन-हृदयवाला, भेदभावना से रहित, संसार के तिरस्कृत करेवाला, संजमी अर्थात् शिवजोगी खुदही साक्षात् सर्वव्यापी के रूप में परकाशित होला ॥९७॥

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्यसंवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ शरणस्थले दीक्षापादोदकस्थलादिद्वादशविधस्थल-प्रसङ्गो नाम एकोनविंशतितमः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि के शरणस्थल में दीक्षापादोदकस्थलादिद्वादशविधस्थलप्रसङ्ग नामवाला ऊनईसवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।१९।।



विंश: परिच्छेद: (बीसवाँ परिच्छेद)

लिंगस्थलांतर्गत

ऐक्यस्थल

अगस्त्य उवाच—

स्थलभेदास्त्वया प्रोक्ता: शरणस्थलसंश्रिता:।
ऐक्यस्थलगतान् ब्रूहि स्थलभेदान् गणेन्द्र मे।।१।।

भावार्थ : ऐक्यस्थल वर्णन— अगस्त्य मुनी कहनी— हे गणेश्वर! रऊवा शरणस्थल में आवेवाला (अवान्तर) स्थलभेद सन के बतलवनी। अब हमरा के ऐक्यस्थल में आवेवाला स्थलभेद सन के बतलाई ।।१।।

श्रीरेणुक उवाच—

स्थलानां नवकं चैक्यस्थलेऽस्मिन् प्रकीर्त्यते ।।२।।

तत्स्वीकृतप्रसादैक्यस्थलमादौ प्रकीर्तितम्।
शिष्टोदनस्थलं चाथ चराचरलयस्थलम्।।३।।
भाण्डस्थलं तत: प्रोक्तं भाजनस्थलमुत्तमम्।
अङ्गालेपस्थलं पश्चात् स्वपराज्ञस्थलं तत:।।४।।

भावाभावविनाशं च ज्ञानशून्यस्थलं तत:।
तदेषां क्रमशो वक्ष्ये शृणु तापस लक्षणम्।।५।।

भावार्थ : श्रीरेणुकाचार्यजी कहनी— ए ऐक्यस्थल में नव गो स्थल सन के चर्चा कईल जाई। पहिला स्वीकृतप्रसादैक्यस्थल कहल गईल बाटे। फेर शिष्टोदनस्थल, चराचरलयस्थल, भाण्डस्थल फेर भाजनस्थल कहल गईल बाटे। ओकरा बाद अङ्गालेपनस्थल फेर स्वपराज्ञस्थल फेर भावाभावविनाशस्थल आ अन्त में ज्ञानशून्यस्थल के वर्णन कईल गईल बाटे। हे तपस्वी मुनि ! अब क्रम से ए सब के लछन बतलावतानी। सुनी ।।२-५।।

स्वीकृतप्रसादिस्थल - (९३)

मुख्यार्थो लक्षणार्थश्च यत्र नास्ति चिदात्मनि।
विशृङ्खलतया तस्य प्रसाद: स्वीकृतो भवेत्।।६।।

भावार्थ : स्वीकृतप्रसादैक्यस्थल वर्णन— चिदातमा अर्थात् ज्ञानप्रकाश सम्पन्न जवना में मुख्यार्थ आ लक्ष्यार्थ अलगा-अलगा नईखे (अर्थात् दुनु अरथ एक ही हो गईल बाटे) ओकर प्रसाद पूर्णज्ञानप्रसाद के रूप में स्वीकार कईल गईल बाटे ॥ ६ ॥

मातृमेयप्रमाणादिव्यवहारे विहारिणीम्।
संवित्साक्षात्कृतिं लब्ध्वा योगी स्वात्मनि तिष्ठति।।७।।

भावार्थ : प्रमाता, प्रमेय आ प्रमाण आदि के बेवहार में रमन करेवाला अर्थात् मंजिल (ज्ञान) के साक्षात्कार पाके ज्ञानप्रकाशसम्पन्न शिवजोगी अपना सरूप में स्थित हो जाला ।।७।।

अद्वैतबोधनिर्धूतभेदावेशस्य योगिनः।
साक्षात्कृतमहासंवित्प्रकाशस्य क्व बन्धनम्।।८।।

भावार्थ : अद्वैत बोध के द्वारा द्वैत आवेश के हटावेवाला आ महासंवित् परकाश के साक्षात्कार करेवाला जोगी के बन्धन कहवाँ (अर्थात् ऊ मुक्त हो जाला) ।।८।।

चिदात्मनि शिवे न्यस्तं जगदेतच्चराचरम्।
जायते तन्मयं सर्वमग्नौ काष्ठदिकं यथा।।९।।

भावार्थ : जवना तरह से आग में डालल गईल काठ आदि तन्मय (अर्थात् आगसरूप) हो जाला ओही तरह चित्सरूप शिवजी के चढ़ावल ई सगरी जगत् (शिवमय हो जाला) ।।९।।

न भाति पृथ्वी न जलं न तेजो नैव मारुतः।
नाकाशो न परं तत्त्वं शिवे दृष्टे चिदात्मनि।।१०।।

भावार्थ : चिदातमा शिवजी के साक्षात्कार भईला पर पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश आ चाहे परतत्त्व सन के विलीन देखेवाला जोगी (सांसारिकता के मूलभूत छत्तीस तत्त्व सन से) लिप्त ना होला ।।१०।।

ज्योतिर्लिङ्गे चिदाकारे ज्वलत्यन्तर्निरन्तरम्।
विलीनं निखिलं तत्त्वं पश्यन् योगी न लिप्यते।।११।।

भावार्थ : अपना हृदय के) भीतर चित्-सरूप ज्योतिर्लिङ्ग के हमेशा परकाशित रहला पर सगरी तत्त्व सन के विलीन देखेवाला जोगी (सांसारिकता के मूलभूत छत्तीस तत्त्व सन से) लिप्त ना होला ।।११।।

अन्तर्मुखेन मनसा स्वात्मज्योतिषि चिन्मये।
सर्वानप्यर्थविषयान् जुह्वन् योगी प्रमोदते।।१२।।

भावार्थ : चिन्मय आत्मरूपी अर्थात् आग में सगरी विषय सन के अन्तर्मुखी मन से हवन करेवाला जोगी आनन्दित होत रहेला ॥१२॥

सच्चिदानन्दजलधौ शिवे स्वात्मनि निर्मलः।
समर्प्य सकलान् भुङ्क्ते विषयान् तत्प्रसादतः।।१३।।

भावार्थ : निर्मल जोगी सत्, चित्, आनन्दसरूप स्वात्मशिव में सगरी विषयसन के समरपन करके ओ (शिवजी) के किरिपा से ओकर भोग करेला ॥१३॥

शिष्टोदनस्थल - (१४)

प्रकाशते या सर्वेषां माया सैवोदनाकृतिः।
लीयते तत्र चिल्लिङ्गे शिष्टं तत्परिकीर्तितम्।।१४।।

भावार्थ : शिष्टोदनस्थल वर्णन— जवन माया सगरी (अर्थात् विज्ञानाकल, प्रलयाकल आदि सकल जीवसन) के प्रकाशित करेले (अर्थात् ओ-ओ देह इन्द्रियरूप में बेवहार के विषय बनेले) ऊ ओदन अर्थात् चाऊर जईसन बाटे। ओकर जवन ओ चित्सरूप शिवलिङ्ग में लय भईल शिष्ट कहल गईल बाटे ॥१४॥

जगदङ्गे परिग्रस्ते मायापाशविजृम्भिते।
स्वात्मज्योतिषि बोधेन तदेकमवशिष्यते।।१५।।

भावार्थ : माया के पाश अर्थाद माया के कला, विद्या, राग, काल आ नियति रूप पाँच कञ्चुक आ ओईसे जनमल प्रकृति से लेकर भूमि तक के तीस तत्त्वरूपी पाश से बन्हाईल जगद्रूपी शरीर के आत्मजोती में विलीन भईला पर खाली माया तत्त्व शेष बच जाले ॥१५॥

अखण्डसच्चिदानन्दपरब्रह्मस्वरूपिणः ।
जीवन्मुक्तस्य धीरस्य माया कैङ्कर्यवादिनी।।१६।।

भावार्थ : ई माया अखण्ड सत् चिद् आनन्द रूप परब्रह्म भईल आ जीवन्मुक्त शिवजोगी के दासी बनके रहेले ॥१६॥

विश्वसंमोहिनी माया बहुशक्तिनिरङ्कुशा।
शिवैकत्वमुपेतस्य न पुरः स्थातुमीहति।।१७।।

भावार्थ : संसार के मोह में डालेवाली आ असीम शक्ति से भरल-पूरल भईला के कारन निरंकुशा माया शिवैकत्व के पावल जोगी के आगे टिके के साहस ना करेले ।।१७।।

ज्योतिर्लिङ्गे चिदाकारे निमग्नेन महात्मना।
भुज्यमाना यथायोगं नश्यन्ति विषयाः स्वतः।।१८।।

भावार्थ : चिद्-रूप ज्योतिर्लिङ्ग में समाईल[१] महातमा शिवजोगी के द्वारा यथाजोग (अर्थात् अपना योग्यता आ क्रम के अनुसार) भोग कईल जाए वाला विषय खुद ही नाश हो जाला (अर्थात् जोगी के भीतर विलीन हो जाले) ।।१८।।

शब्दादयोऽपि विषया भुज्यमानास्तदिन्द्रियैः।
आत्मन्येव विलीयन्ते सरितः सागरे यथा।।१९।।

भावार्थ : शब्द आदि (रूप, रस, गन्ध आ स्पर्श) विषय जोगी के इन्द्रिय सन के द्वारा भुज्यमान होके आतमा में ओही तरह विलीन हो जाला जईसे नदी आदि समुन्दर में मिलके (विलीन हो जाले) ।।१९।।

अर्थजातमशेषं तु ग्रसन् योगी प्रशाम्यति।
स्वात्मनैवास्थितो भानुस्तेजोजालमशेषतः।।२०।।

भावार्थ : जोगी सगरी विषयग्राम के उपभोग करके आतमा में स्थित हो जाला जईसे कि सूरूज (सबके परकाशित करके अपना तेजोजाल के समेटके खुद ही शान्त हो जाला) ।।२०।।

चराचरलयस्थल - (९५)

लिङ्गैक्ये तु समापन्ने चरणाचरणे गते।
निर्देही स भवेद्योगी चराचरविनाशकः।।२१।।

भावार्थ : चराचरलयस्थल वर्णन— चर आ चाहे अचर जब लिङ्ग के साथे एक ही हो जाला तब ऊ जोगी देहरहित भईल चराचर के विनाश करेवाला हो जाला ।।२१।।

अनाद्यविद्यामूला हि प्रतीतिर्जगतामियम्।
स्वात्मैकबोधात्तन्नाशे कुतो विश्वप्रकाशनम्।।२२।।

---

१. जवना तरह से नदी सुभावे से सागर में मिलेले ओही तरह शिवजोगी के सागरसरूप आतमा में विषय खुद उपभुक्त होके लीन हो जाला।

भावार्थ : जगत् के भान अनादि अविद्या के कारन बाटे। (संसार के) अपना आतमा (अर्थात् शिवजी) के साथे ऐक्य के ज्ञान भईला पर ओ अविद्या के नाश भईला के बाद विश्व के आभासन कहवाँ? ॥२२॥

यथा मेघाः समुद्भूता विलीयन्ते नभस्थले।
तथात्मनि विलीयन्ते विषयाः स्वानुभाविनः।।२३।।

भावार्थ : जवना तरह आकाश में जनमल मेघ आकाश में ही विलीन हो जाला। ओही तरह स्वसरूप के अनुभव करेवाला शिवजोगी के आतमा में सगरी विषय विलीन हो जाले ॥२३॥

स्वप्ने दृष्टं यथा वस्तु प्रबोधे लयमश्नुते।
तथा सांसारिकं सर्वमात्मज्ञाने विनश्यति।।२४।।

भावार्थ : जवना तरह सपना में देखल गईल वस्तु जागला पर खतम हो जाला ओ तरह संसार के सब कुछु पदारथ आत्मज्ञान भईला पर बिला जाला ॥२४॥

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिभ्यः　परावस्थामुपेयुषः।
किं वा प्रमाणं किं ज्ञेयं किं वा ज्ञानस्य साधनम्।।२५।।

भावार्थ : जागलवाला, सपनावाला आ सुषुप्ति-अवस्था से परे अर्थात् तुरीय आ तुरीयातीत अवस्था के प्राप्त होवेवाला शिवजोगी के खातिर का परमान? का जाने जोग? आ काहे ज्ञान के साधन (अर्थात् जानेवाला, ज्ञान आ जाने जोग ई त्रिपुटी ज्ञान के लय हो जाला) ॥२५॥

तुर्यातीतपदं यत्तद् दूरं वाङ्मनसाध्वनः।
अनुप्रविश्य तद्योगी न भूयो विश्वमीक्षते।।२६।।

भावार्थ : जवन तुरीयातीत अवस्था बाटे ऊ बानी आ मन के पहुँच से परे बाटे। ओईमें प्रवेश करके जोगी विश्व के ओर देखेला ॥२६॥

नान्यत् पश्यति योगीन्द्रो नान्यज्जानाति किञ्चन।
नान्यच्छृणोति सन्दृष्टे चिदानन्दमये शिवे।।२७।।

भावार्थ : शिवजोगी जब चिदानन्दमय शिवजी के सम्यक् दर्शन (अर्थात् साक्षात्कार) कर लेला तब ऊ (शिवजी के अलावा अपना से अलगा) कवनो दोसर के ना देखेला, ना जानेला आ ना सुनेला अर्थात् मलशक्ति के नाश हो गईला से ओकरा मायिक रूप, रस आदि के अनुभव ना होला ॥२७॥

असदेव जगत्सर्वं सदिव प्रतिभासते।
ज्ञाते शिवे तदज्ञानं स्वरूपमुपपद्यते।।२८।।

भावार्थ : (शिवज्ञान के पहिले) ई सगरी असत् जगत् सत् जईसन प्रतीत होला, शिवजी के ज्ञान के भईला पर ऊ अज्ञान (अर्थात् असत् के सत् के बुझे के बुद्धि आ चाहे भेदात्मकज्ञान) सरूप के प्राप्त हो जाला काहे से कि ऊ खुदे चित् रूप होला ।।२८।।

भाण्डस्थल - (९६)

ब्रह्माण्डशतकोटीनां सर्गस्थितिलयान् प्रति।
स्थानभूतो विमर्शो यस्तद्भाण्डस्थलमुच्यते।।२९।।

भावार्थ : **भाण्डस्थल वर्णन**— सौ करोड़ ब्रह्माण्ड सन के सृष्टि, स्थिति आ प्रलय खातिर जवन स्थान जईसन आधार स्थल विमर्श बाटे ओकरा के भाण्ड स्थल कहल जाला ।।२९।।

विमर्शाख्या पराशक्तिर्विश्वोद्भासनकारिणी।
साक्षिणी सर्वभूतानां समिन्धे सर्वतोमुखी।।३०।।

भावार्थ : (ईश्वर के) विमर्श नामवाला पराशक्ति जवन कि विश्व के रचना के कारन बिया, सगरी भूतसन के साक्षिणी बनके सर्वतोमुखी होवत (अर्थात् सगरी आ विभिन्न रूपन में) परकाशित हो रहल बिया ।।३०।।

विश्वं यत्र लयं याति विभात्यात्मा चिदाकृतिः।
सदानन्दमयः साक्षात् सा विमर्शमयी कला।।३१।।

भावार्थ : जवना में सगरी संसार लीन हो जाला, जवना कारन आतमा चित् आ आनन्दमय सरूप में भासित होला ऊ साक्षात् विमर्शमयी कला बिया ।।३१।।

पराहन्तासमावेशपरिपूर्णविमर्शवान् ।
सर्वज्ञः सर्वगः साक्षी सर्वकर्ता महेश्वरः।।३२।।

भावार्थ : महेश्वर पराहन्ता के समावेश से परिपूर्ण विमर्शवाला, सबकुछु जानेवाला, सर्वव्याप्ती, साक्षी आ सबकर रचेवाला हो जाला ।।३२।।

विश्वाधारमहासंवित्प्रकाशपरिपूरितम् ।
पराहन्तामयं प्राहुर्विमर्शं परमात्मनः।।३३।।

भावार्थ : विश्व के आधारभूता जवन महासंवित् ओकरा पराकाश से विमर्श के विद्वान् लोग पराहन्तामय कहेले (आ चाहे जवन विश्व के आधारभूत महासंवित्

(महाज्ञान) के पराकाश से परिपूरन आ पराहन्तामय बाटे। विद्वान् लोग ओकरा परमातमा के विमर्श कहेला) ॥३३॥

विमर्शभाण्डविन्यस्तविश्वतत्त्वविजृम्भणः।
अनन्यमुखसम्प्रेक्षी मुक्तः स्वात्मनि तिष्ठति।।३४।।

भावार्थ : विश्व तत्त्व के विजृम्भा अर्थात् विस्तार के विमर्शरूपी भाण्ड अर्थात् पात्र में रख देबेवाला, अनन्यमुखसम्प्रेक्षी (अर्थात् दोसरा के अपेक्षा ना करेवाला) मुक्त शिवजोगी अपना सरूप में स्थित रहेला ॥३४॥

भाजनस्थल - (९७)

समस्तजगदण्डानां सर्गस्थित्यन्तकारणम्।
विमर्शो भासते यत्र तद्भाजनमिहोच्यते।।३५।।

भावार्थ : भाजनस्थल वर्णन— सगरी जगदण्डसन अर्थात् ब्रह्माण्ड सन के सृष्टि, स्थिति आ संहार के कारनभूत विमर्श जवना में बुझाला ओ संसार में ओकरा के भाजन कहल जाला (अर्थात् कला, विद्या, राग, काल आ नियति नाववाला पाँच गो कञ्चुक सन से ढँकाअईल चैतन्यरूप पुरुष के तीन गो मल जब खतम हो जाले तब ऊ भाजन कहलाला) ॥३५॥

विमर्शाख्या पराशक्तिर्विश्ववैचित्र्यकारिणी।
यस्मिन् प्रतिष्ठितं ब्रह्म तदिदं विश्वभाजनम्।।३६।।

भावार्थ : विश्व के विचित्र रचना करेवाली विमर्श नामवाली शक्ति जवना में रहेली ऊ ब्रह्म विश्व के भाजन कहल जाले ॥३६॥

अन्तःकरणरूपेण जगदङ्कुररूपतः।
यस्मिन् विभाति चिच्छक्तिर्ब्रह्मभूतः स उच्यते।।३७।।

भावार्थ : (परमशिव में समवेत) चित्शक्ति जगत् के अङ्कुर के रूप से अन्तःकरन अर्थात् मूल अहङ्कार के रूप में जवना में भासित होला ऊ (परशिव) ब्रह्मभूत कहल जाला ॥३७॥

यथा चन्द्रे स्थिरा ज्योत्स्ना विश्ववस्तुप्रकाशिनी।
तथा शक्तिविमर्शात्मा प्रकारे ब्रह्मणि स्थिता।।३८।।

भावार्थ : चनरमा में रहेवाली किरन जवना तरह सगरी वस्तुसन के परकाशित करेले ओही तरह ब्रह्म में रहेवाला विमर्शरूपा शक्ति प्रकार अर्थात् विशेषण के रूप में स्थित होके (विश्व के परकाशन) करेले ॥३८॥

अकार: शिव आख्यातो हकार: शक्तिरुच्यते।
शिवशक्तिमयं ब्रह्म स्थितमेकमहंपदे।।३९।।

भावार्थ : ('अहं' पद में) अकार शिव के बोधक बाटे, हकार शक्ति कहल जाला। एक तरह अहम् पद में शिवशक्तिमय एक ही ब्रह्म स्थित बानी ।।३९।।

अहन्तां परमां प्राप्य शिवशक्तिमयीं स्थिराम्।
ब्रह्मभूयंगतो योगी विश्वात्मा प्रतिभासते।।४०।।

भावार्थ : परम अर्थात् पूर्ण एही से स्थिर शिव-शक्तिमयी अहन्ता के पाके जोगी ब्रह्मसरूप भईल विश्व के रूप में परकाशित होला ।।४०।।

वृक्षस्थं पत्रापुष्पादि वटबीजस्थितं यथा।
तथा हृदयबीजस्थं विश्वमेतत् परात्मन:।।४१।।

भावार्थ : जवना तरह पेड़ में रहेवाला पत्ता, फूल (अपना स्फुट सत्ता के पहिले) बरगद के पेड़ में प्रच्छन्न रूप से रहेला ओही तरह परातमा अर्थात् भाजनस्थल से भरल शिवजोगी के हिरिदय बीज में ई संसार स्थिर रहेला ।।४१।।

अङ्गालेपस्थल - (९८)

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नं चिदानन्दमयं महत्।
यस्य रूपमिदं ख्यातं सोऽङ्गालेप इहोत्यते।।४२।।

भावार्थ : अङ्गालेपस्थल वर्णन— जवना के देश, काल आदि अवच्छेद से रहित चिदानन्दमय महान् ई रूप कहल गईल बाटे ऊ ईहवाँ अङ्गालेप कहल जाला ।।४२।।

समस्तजगदात्मापि संविद्रूपो महामति:।
लिप्यते नैव संसारैर्यथा धूमादिभिर्नभ:।।४३।।

भावार्थ : सगरी जगत्-सरूप होवत भी संविद्-रूप महामतिमान् शिवजोगी सांसारिकता से ओही तरह से परभावित ना होला जईसे कि धुआँ आदि से आकाश परभावित ना होला ।।४३।।

न विधिर्न निषेधश्च न विकल्पो न वासना।
केवलं चित्स्वरूपस्य गलितप्राकृतात्मन:।।४४।।

भावार्थ : प्रकृति के सगरी गुण सन से रहित खाली चित्-सरूप जोगी के खातिर ना विधि बाटे ना निषेध बाटे। ना विकल्प बाटे आ नाही वासना बाटे ।।४४।।

घटादिषु पृथग्भूतं यथाऽऽकाशं न भिद्यते।
तथोपाधिगतं ब्रह्म नानारूपं न भिद्यते।।४५।।

भावार्थ : जवना तरह घड़ा आदि में अलगा रहत आकाश (घटाकाश, मठाकाश, आदि मूलरूप में) अलगा ना रहेला ओही तरह (देह आदि अनेक) उपाधिसन से घेराईल एही से अनेक रूप ब्रह्म भी अलगा नईखी (अर्थात् एक ही बानी) ।।४५।।

अनश्वरमनिर्देश्यं यथा व्योम प्रकाशते।
तथा ब्रह्मापि चैतन्यमत्र वैशेषिकी कला।।४६।।

भावार्थ : आकाश जवना तरह नाश ना होवेवाला आ बिना निर्देश करे जोग अर्थात् अतुलनीय होके परकाशित होला ओही तरह ब्रह्म बानी। चैतन्य ए ब्रह्म में विशेष कला बाटे ।।४६।।

न देवत्वं न मानुष्यं न तिर्यक्त्वं न चान्यथा।
सर्वाकारत्वमाख्यातं जीवन्मुक्तस्य योगिनः।।४७।।

भावार्थ : जीवन्मुक्त जोगी ना देवता आ नाही आदमी, ना पंछी होला आ ना ही अऊरी कुछु। ऊ सर्वाकार कहल जाला ।।४७।।

स्वपराज्ञस्थल - (९९)

अप्रमेये चिदाकारे ब्रह्मण्यद्वैतवैभवे।
विलीनः किं नु जानाति स्वात्मानं परमेव वा।।४८।।

भावार्थ : स्वपराज्ञस्थल वर्णन— अप्रमेय चित्स्वरूप अद्वितीय ब्रह्म में विलीन शिवजोगी न अपना के जानेला आ नाही परमातमा शिवजी के ।।४८।।

यत्र नास्ति भिदायोगादहं त्वमिति विभ्रमः।
न संयोगो वियोगश्च न ज्ञेयज्ञातृकल्पना।।४९।।

न बन्धो न च मुक्तिश्च न देवाद्यभिमानिता।
न सुखं नैव दुःखं च नाज्ञानं ज्ञानमेव वा।।५०।।

नोत्कृष्टत्वं न हीनत्वं नोपरिष्टान्न चाप्यधः।
न पश्चान्नैव पुरतो न दूरे किञ्चिदन्तरे।।५१।।

सर्वाकारे चिदानन्दे सत्यरूपिणि शाश्वते।
पराकाशमये तस्मिन् परे ब्रह्मणि निर्मले।।५२।।

एकीभावमुपेतानां योगिनां परमात्मनाम्।
परापरपरिज्ञानपरिहासकथा कुतः।।५३।।

भावार्थ : जहवाँ भेद के जोग भईला से (अर्थात् जीव आ ब्रह्म में भेदबुद्धि भईला से) अहम् अईसन भरम नईखे (अथवा जोग अर्थात् जीव आ ब्रह्म के ऐक्य भईला से जहवाँ अहम् अईसन भेद अर्थात् भरम नईखे), ना संजोग बाटे, ना वियोग बाटे, ना जाने जोग बाटे आ नाही जानकार के कलपना बाटे। ना बन्धन बाटे आ नाही मोक्ष बाटे आ ना (अपना विषय में आ चाहे अऊरी जगहाँ) देवता के घमण्ड बाटे। ना सुख बाटे नाही दुःख बाटे, ना ज्ञान बाटे आ नाही अज्ञान बाटे, ना उत्कृष्टत्व बाटे आ नाही अपकृष्टत्व बाटे, ना ऊपर, ना नीचे, ना पीछे, ना आगे, ना दूर आ ना नजदीक के स्थिति बाटे। सर्वरूप चिदानन्द सत्य सरूप शाश्वत् पर आकाश अर्थात् चिदाकाशमय ओ निरमल ब्रह्म के साथे ऐक्यभाव के पावल महातमा जोगीलोग के विषय में पर-अपर परिज्ञान रूप परिहास के चर्चा कईसे हो सकेला ।।४९-५३।।

देशकालानवच्छिन्नतेजोरूपसमाश्रयात् ।
स्वपरज्ञानविरहात् स्वपराज्ञस्थलं विदुः।।५४।।

भावार्थ : देश काल के अवच्छेद से परे तेजस् रूप परब्रह्म के कारन आश्रयण अर्थात् सामरस्य आ स्वपर ज्ञान के अभाववाली शिवजोगी के अवस्था के विद्वान् लोग स्वपराज्ञस्थल कहेले ।।५४।।

भावाभावलयस्थल - (१००)

त्वन्ताहन्ताविनिर्मुक्ते शून्यकल्पे चिदम्बरे।
एकीभूतस्य सिद्धस्य भावाभावकथा कुतः।।५५।।

भावार्थ : भावाभावलयस्थल वर्णन— 'त्वम्' (तू) आ 'अहम्' (हम) भाव से रहित शून्यकल्प चिदाकाश में एकीभूत सिद्ध शिवजोगी के खातिर भाव आ अभाव के कथा कहवाँ से हो सकेला (अर्थात् ऊहवाँ ना भाव बाटे आ नाही अभाव बाटे) ।।५५।।

अहंभावस्य शून्यत्वादभावस्य तथात्मनः।
भावाभावविनिर्मुक्तो जीवन्मुक्तः प्रकाशते।।५६।।

भावार्थ : अहम् भाव आ आतमा के अभाव से खाली भईला के कारन भाव आ अभाव से विनिर्मुक्त जीवन्मुक्त परकाशित करेला ।।५६।।

सुखदु:खादिभावेषु नाभावो भाव एव वा।
विद्यते चित्स्वरूपस्य निर्लेपस्य महात्मन:।।५७।।

भावार्थ : निर्लेप अर्थात् पाप पुण्य आदि द्वन्द्व सन से परे महान् आतमावाला चित्-सरूप शिवजोगी के खातिर सुख, दु:ख आदि भाव सन के विषय में ना भाव रहेला आ नाही अभाव ।।५७।।

यस्मिन् ज्योतिषि चिद्रूपे दृश्यते नैव किञ्चन।
सद्रूपं वाप्यसद्रूपं भावाभावं विमुञ्चत:।।५८।।

भावार्थ : भाव आ अभाव के तियाग देबेवाला (अर्थात् द्वन्द्व सन से परे) चित-सरूप तेजोमय शिवजोगी के सद्-रूप आ चाहे असद्-रूप कुछऊ भी ना देखायी पड़ेला ।।५८।।

प्रतीयमानौ विद्येते भावभावौ न कुत्रचित्।
लिङ्गैक्ये सति यत्तस्माद्भावाभावलयस्थलम्।।५९।।

भावार्थ : जवना कारन शिवलिङ्ग के साथ एकत्व अर्थात् सामरस्य के पावल शिवजोगी के खातिर बुझायेवाला भाव-अभाव कही भी ना रहेले एही कारन (ऊ दशा) भावाभावलयस्थल कहल जाले ।।५९।।

ज्ञानशून्यस्थल - (१०१)

परापरसमापेक्षभावाभावविवेचनम् ।
ज्ञानं ब्रह्मणि तन्नास्ति ज्ञानशून्यस्थलं विदु:।।६०।।

भावार्थ : ज्ञानशून्यस्थल वर्णन— पर आ अपर के अपेक्षी भाव आ अभाव के विवेचन रूप में ज्ञान ब्रह्म में (अर्थात् परब्रह्म सरूप शिवजोगी) ना रहेला। एही कारन ई (विद्वान् लोग के द्वारा) ज्ञानशून्यस्थल कहल गईल बाटे ।।६०।।

जले जलमिव न्यस्तं वह्नौ वह्निरिवार्पितम्।
परे ब्रह्मणि लीनात्मा विभागेन न दृश्यते।।६१।।

भावार्थ : पानी में मिलावल गईल पानी, आग में डालल गईल आग जईसन परब्रह्म में लीन आतमा वाला शिवजोगी अलगा ना लऊकेला ।।६१।।

सर्वात्मनि परे तत्त्वे भेदशङ्काविवर्जिते।
ज्ञात्रादिव्यवहारोत्थं कुतो ज्ञानं विभाव्यते।।६२।।

भावार्थ : भेद के शङ्का से रहित विश्वरूप परतत्त्व में जानेवाला, जानेजोग आ ज्ञान के बेवहार से जनमल (त्रिपुटी) ज्ञान के अनुभव कहवाँ से होई ।।६२।।

निर्विकारं निराकारं नित्यं सीमाविवर्जितम्।
व्योमवत् परमं ब्रह्म निर्विकल्पतया स्थितम्।।६३।।

न पृथ्व्यादीनि भूतानि न ग्रहा नैव तारकाः।
न देवा न मनुष्याश्च न तिर्यञ्चो न चापरे ।।६४।।

तस्मिन् केवलचिन्मात्रसत्तानन्दैकलक्षणे।
त्वन्ताहन्तादिसंरूढं विज्ञानं केन भाव्यते।।६५।।

भावार्थ : विकार सन से शून्य, आकाररहित, नित्य, असीम, आकाश के जईसन सब जगहाँ व्याप्त, परम ब्रह्म निर्विकल्प रूप में वर्तमान बानी। पृथिवी आदि पाँच गो महाभूत, चनरमा सूरूज आदि (नव) गो ग्रह, (अश्विनी आदि) तारालोग, देवता, मानुस, पंछी आ चाहे अऊरी कुछु ना ही बुझाला। खाली सत्, चित् आनन्द सरूप ओ ब्रह्मरूप शिवजोगी में त्वम् (तू) आ अहम् (हम) आदि के भावना से दृढ़ ज्ञान (अर्थात् भेद ज्ञान) केकरा अनुभूत हो सकेला अर्थात् केहू के ना ।।६३-६५।।

ज्ञेयाभावाद्विशेषेण शून्यकल्पं विभाव्यते।
ज्ञातृज्ञेयादिभिः शून्यं शून्यं ज्ञानादिभिर्गुणैः।।६६।।

आदावन्ते च मध्ये च शून्यं सर्वत्र सर्वदा।
द्वितीयेन पदार्थेन शून्यं शून्यं विभाव्यते।।६७।।

भावार्थ : विशेषरूप से जाने जोग के अभाव भईला के कारन शून्य ज्ञान के अनुभव होला। ई अनुभव जानेवाला, ज्ञान आ जाने जोग आदि से खाली आ ज्ञान, इच्छा आदि गुण सन से शून्य होला। ई शून्य (ब्रह्म से अतिरिक्त केहू) दोसर पदारथ से खाली अनुभूत होला ।।६६-६७।।

केवलं सच्चिदानन्दप्रकाशाद्वयलक्षणम्।
शून्यकल्पं पराकाशं परब्रह्म प्रकाशते।।६८।।

भावार्थ : खाली सत्, चित् आनन्द परकाश आ अद्वितीय लछन वाला, शून्य जईसन पराकाश परब्रह्म परकाशित होवेनी ।। ६८।।

शून्यज्ञानादिसङ्कल्पे शून्यसर्वार्थसाधने।
ज्योतिर्लिङ्गे चिदाकारे स्वप्रकाशे निरुत्तरे।।
एकीभावमुपेतस्य कथं ज्ञानस्य सम्भवः।।६९।।

भावार्थ : जवन ज्ञान आदि संकल्प से खाली, सगरी पुरुषारथ साधन सन से रहित, निरुत्तर (अर्थात् सबका ले ऊपर) चित्-सरूप, स्वपरकाश ज्योतिर्लिङ्ग के साथे एक ही हो गईल ओकरा ज्ञान कहवाँ से होई? (काहे से कि ऊ त खाली ज्ञान सरूप हो गईल) ।।६९।।

यस्य कार्यदशा नास्ति कारणत्वमथापि वा।
शेषत्वं नैव शेषित्वं स मुक्तः पर उच्यते।।७०।।

भावार्थ : जेकरा ना त कार्यावस्था बाटे आ नाही कारणावस्था। जवन न शेष (अर्थात् अङ्ग) बाटे ना शेषी (अर्थात् अङ्गी) ऊ परमुक्त (अर्थात् श्रेष्ठ मुक्त) बाटे ।।७०।।

शिवैक्यस्थल

एतावदुक्त्वा परमप्रबोधमद्वैतमानन्दशिवप्रकाशम्।
देव्यै पुरा भाषितमीश्वरेण तूष्णीमभूद् ध्यानपरो गणेन्द्रः।।७१।।

भावार्थ : उपदेशोसंहार वर्णन— गणेश्वर रेणुकाचार्य ईश्वर (अर्थात् शिवजी) के द्वारा पहिले देवी पारबती के गुप्त रूप से उपदेश दिहल अद्वैत आनन्द शिवपरकाश करेवाला परम प्रबोध अर्थात् बढिया ज्ञान के ए तरह आ एतना उपदेश देके ध्यानस्थ होके चुप हो गईनी ।।७१।।

एवमुक्त्वा समासीनं शिवयोगपरायणम्।
रेणुकं तं समालोक्य बभाषे प्राञ्जलिर्मुनिः।।७२।।

भावार्थ : अईसन कहके (आसनी पर) बईठल शिवजोगी ओ रेणुकाचार्य जी के देख के अगस्त्य मुनि हाथ जोड़के बोलनी ।।७२।।

शिवयोगविशेषज्ञ शिवज्ञानमहोदधे।
समस्तवेदशास्त्रादिव्यवहारधुरन्धर ।।७३।।

आलोकमात्रनिर्धूतसर्वसंसारबन्धन ।
स्वच्छन्दचरितोल्लांस स्वप्रकाशात्मवच्छिव।।७४।।

अवतीर्णमिदं शास्त्रमनवद्यं त्वदाननात्।
श्रुत्वा मे मोदते चित्तं ज्योतिः पश्ये शिवाभिधम्।।७५।।

भावार्थ : हे शिवजोग के विशेष जानकार! हे शिवज्ञान के महासागर! हे समस्त वेदशास्तर आदि बेवहार के धुरन्धर! हे आलोकमात्र से दूर कईल सगरी संसाररूप के

बन्धनवाला! हे स्वच्छन्द चरितर से उल्लास से भरल! हे स्वपरकाशरूप शिवजी ! रऊवा मुँह से निकलल एगो निरमल शास्तर के सुनके हमार चित्त आनन्द से भर गईल। हम शिवजी नामवाला जोती के साक्षात्कार करत बानी ।।७३-७५।।

अद्य मे सफलं जन्म गतो मे चित्तविभ्रमः।
सञ्जाता पाशविच्छित्तस्तपांसि फलितानि च।।७६।।

भावार्थ : आज हमार जनम सफल हो गईल। हमरा मन के सन्देह दूर हो गईल। पाश कट गईल आ हमार तपस्या फलीभूत हो गईल ।।७६।।

इदानीमेव मे जातं मुनिराजोत्तमोत्तमम्।
इतः परं मया नास्ति सदृशो भुवनत्रये।।७७।।

भावार्थ : एही समय हमरा में मुनिश्रेष्ठता आ गईल। एकरा बाद तीनु भवन सन में हमरा जईसन केहू नईखे ।।७७।।

शास्त्रं तव मुखोद्गीर्णं शिवाद्वैतपरम्परम्।
मां विना कस्य लोकेषु श्रोतुमस्ति तपः शुभम्।।७८।।

भावार्थ : रऊवा मुँह से निकलल शिवाद्वयपरम्परा वाला शुभ शास्तर के सुने खातिर हमरा अलावा आ केहू के तपस्या शुभ हो सकेले ।।७८।।

तपसां परिपाकेन शङ्करस्य प्रसादतः।
आगतस्त्वं महाभाग मां कृतार्थयितुं गिरा ।।७९।।

भावार्थ : हे महाभाग! हमार तपस्या के परिपाक से शङ्करजी के किरिपा के कारन आप अपना बानी से हमरा के कृतकृत्य करे खातिर आईल बानी ।।७९।।

इति स्तुवन्तं विनयादगस्त्यं मुनिपुङ्गवम्।
आलोक्य करुणादृष्ट्या बभाषे स गणेश्वरः।।८०।।

भावार्थ : ए तरह से विनयपूर्वक स्तुति करत मुनिश्रेष्ठ अगस्त्य मुनि के किरिपामयी दृष्टि से देख के गणेश्वर रेणुकाचार्यजी कहनी ।।८०।।

अगस्त्य मुनिशार्दूल तपःसिद्धमनोरथ।
त्वां विना शिवशास्त्रस्य कः श्रोतुमधिकारवान्।।८१।।

भावार्थ : हे तपस्या के द्वारा सिद्धमनोरथवाला मुनिश्रेष्ठ अगस्त्य! रऊवा बिना शिवशास्तर के सुने के अधिकारी दोसर के हो सकेला? ।।८१।।

पात्रं शिवप्रसादस्य भवानेको न चापरः।
इति निश्चित्य कथितं मया ते तन्त्रमीदृशम्।।८२।।

भावार्थ : शिवजी के किरिपा के पात्र एगो रऊवा ही बानी जवन दोसर केहू नईखे— अईसन निश्चय करके हम ए तरह के तन्तर के रऊवा के उपदेश दिहनी ।।८२।।

स्थाप्यतां सर्वलोकेषु तन्त्रमेतत् त्वया मुने।
ईदृशं शिवबोधस्य साधनं नास्ति कुत्रचित्।।८३।।

भावार्थ : हे मुनिजी! रऊवा ए तन्तर के सब लोग में (आ चाहे सगरी लोक में) परचार, परसार आ स्थापन करी। शिवज्ञान के अईसन साधन कही नईखे ।।८३।।

रहस्यमेतत् सर्वज्ञः सर्वानुग्राहकः शिवः।
अवादीत् सर्वलोकानां सिद्धये पार्वतीपतिः।।८४।।

भावार्थ : सब कुछजानेवाला, सबका पर किरिपा करेवाला पारबतीजी के स्वामी शिवजी सगरी लोग के सिद्धि खातिर ए रहस्य (तन्त्रोपनिषत्) के बतलवनी ।।८४।।

तदिदं शिवसिद्धान्तसाराणामुत्तमोत्तमम्।
वेदवेदान्तसर्वस्वं विद्याचारप्रवर्तकम्।।८५।।

वीरमाहेश्वरग्राह्यं शिवाद्वैतप्रकाशकम्।
परीक्षितेभ्यो दातव्यं शिष्येभ्यो नान्यथा क्वचित्।।८६।।

भावार्थ : अट्ठाईस शैवागमन सन के तत्त्व सन में बढिया, वेद आ वेदान्त के सबकुछ, विद्याचार के प्रवर्तक, वीर माहेश्वर सन के द्वारा स्वीकार करे जोग, शिवाद्वैत के परकाशक ई शास्तर परीक्षा लिहल चेला सन के ही देबे के चाही। अऊरी तरह के लोग के कबो ना (देबे के चाही) ।।८५-८६।।

एतच्छ्रवणमात्रेण सर्वेषां पापसंक्षयः।
अवतीर्णं मया भूमौ शास्त्रस्यास्य प्रवृत्तये।।
प्रवर्तय शिवाद्वैतं त्वमपि ज्ञानमीदृशम्।।८७।।

भावार्थ : खाली एकरा के सुनला से सब लोग के पाप के नाश हो जाला। ए शास्तर के प्रवर्तन के खातिर हम ए पृथिवी पर अवतार लिहले बानी। रऊवा भी ए तरह के शिवाद्वैत ज्ञान के परचार करी ।।८७।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्यसंवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ लिङ्गस्थलान्तर्गत ऐक्यस्थले स्वीकृतप्रसादिस्थलादि-नवविधस्थलप्रसङ्गो नाम विंशतितमः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि ग्रन्थ में लिङ्गस्थलान्तर्गत ऐक्यस्थल में स्वीकृतप्रसादिस्थलादि-नवविधस्थलप्रसङ्ग नामवाला बीसवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।२०।।



एकविंश: परिच्छेद: (एकईसवाँ परिच्छेद)

विभीषणाभीष्टदान

इत्युक्त्वा पश्यतस्तस्य पुरस्तादेव रेणुक:।
अन्तर्दधे महादेवं चिन्तयन्नन्तरात्मना।।१।।

भावार्थ : विभीषण को अभीष्टदान— अईसन कहके रेणुक गणेश्वर अपना अन्तरातमा में महादेवजी के ध्यान करत अगस्त्य ऋषि के सामनही अन्तर्ध्यान हो गईनी ।।१।।

य इदं शिवसिद्धान्तं वीरशैवमतं परम्।
शृणोति शुद्धमनसा स याति परमां गतिम्।।२।।

भावार्थ : जवन ए वीरशैवधरम सम्मत शिवसिद्धान्त के शुद्ध मन से सुनेला ऊ परमगति के पावेला ।।२।।

स्वच्छन्दाचाररसिक: स्वेच्छानिर्मितविग्रह:।
आससाद पुरीं लङ्कां रेणुको गणनायक:।।३।।

भावार्थ : स्वच्छन्द आचरन में आनन्द के अनुभव करेवाला आ अपना इच्छानुसार देह धारन करेवाला गणेश्वर रेणुक (अन्तर्हित भईला के बाद) लङ्का पहुँचनी ।।३।।

समागतं महाभागं सर्वागमविशारदम्।
विभीषण: समालोक्य गेहं प्रवेशयन्निजम्।।४।।

भावार्थ : कामिक से लेके वातुल तक सगरी दिव्य आगम सन में विशारद ओ महाभाग रेणुकाचार्यजी के आईल देखके विभीषणजी ऊहाँ के अपना घर में परवेश करवनी ।।४।।

भद्रासने निजे रम्ये निवेश्य गणनायकम्।
अर्घ्यपाद्यादिभि: सर्वैरुपचारैरपूजयत्।।५।।

भावार्थ : अपना बहुते सुन्दर सिंहासन पर गणेश्वर के बईठा के (विभीषनजी) अरघ, पाद्य आदि सगरी उपचार सन से ऊहाँ के पूजा कईनी ।।५।।

पूजितेन प्रसन्नेन रेणुकेन निरूपितः।
निषसाद तदभ्याशे स निजासनमाश्रितः।।६।।

भावार्थ : पूजा भईला से खुश रेणुकाचार्यजी द्वारा आदेश के पा के विभीषनजी ऊहाँ के लगही अपना आसन पर बईठ गईनी ॥६॥

आबभाषे गणेन्द्रं तं कृताञ्जलिर्विभीषणः।
मानुषाकारसम्पन्नं साक्षाच्छिवमिवापरम्।।७।।

भावार्थ : एकरा बाद आदमी के आकार धारन कईल साक्षात दोसर शिवजी के जईसन गणेश्वर से विभीषनजी हाथ जोड़के कहनी ॥७॥

रेणुक त्वं गणाधीश शिवज्ञानपरायण।
अवतीर्णं महीमेनामिति सम्यक् श्रुतं मया।।८।।

भावार्थ : हे शिवज्ञानपरायण गणेश्वर रेणुक! रऊवा ए धराधाम पर अवतार लिहले बानी अईसन हम भलीभाँति सुनले बानी ॥८॥

मद्भाग्यगौरवादद्य समायास्त्वं पुरीमिमाम्।
कथं भाग्यविहीनानां सुलभाः स्युर्भवादृशाः।।९।।

भावार्थ : हमरा महाभाग्य से रऊवा ए सगरी (लङ्का) में आईल बानी। भाग्यहीन लोग के रऊवा जईसन लोग कईसे सुलभ हो सकेला ॥९॥

मत्समो नास्ति लोकेषु भाग्यातिशयवत्तया।
यस्य गेहं स्वयं प्राप्तो भवान् साक्षान्महेश्वरः।।१०।।

भावार्थ : ए संसार में हमरा जईसन अतिशय भागशाली केहू नईखे। जेकरा घरे साक्षात् महेश्वरसरूप रऊवा खुदही पधरले बानी ॥१०॥

कृतार्था मे पुरी ह्येषा कृतार्थो राक्षसान्वयः।
जीवितं च कृतार्थं मे यस्य त्वं दृष्टिगोचरः।।११।।

भावार्थ : जेकरा आगे रऊवा लऊकत बानी ऊ हमार लंकापुरी आ ई राछसकुल आ हमार जीवन (आज) धन्यधन्य हो गईल ॥११॥

इति ब्रुवाणं कल्याणं राक्षसेन्द्रं गणेश्वरः।
बभाषे सस्मितो वाणीं विश्वोल्लासकरीं शुभाम्।।१२।।

भावार्थ : अईसन कहेवाला कल्यानयुक्त (आ चाहे अईसन कल्याणयुक्त बचन कहेवाला) राछस के राजा से गणेश्वर धीमा मुस्कान के साथे विश्व के खुश करेवाला शुभ बानी बोलनी ॥१२॥

विभीषण महाभाग जाने त्वां धर्मकोविदम्।
त्वां विना कस्य लोकेषु जायते भक्तिरीदृशी।।१३।।

भावार्थ : हे महाभागशाली विभीषनजी! रऊवा के धरम के जानेवाला के रूप में ही हम जानेनी । ए लोक में रऊवा अलावा अऊरी केहू में ए तरह के भक्ति हो सकेला? ॥१३॥

समस्तशास्त्रसारज्ञं सर्वधर्मपरायणम्।
अध्यात्मविद्यानिरतमाहुस्त्वां राक्षसेश्वर।।१४।।

भावार्थ : हे राछस सन के स्वामी ! (विद्वान् लोग) रऊवा के सगरी शास्तर के तत्त्व के जानेवाला, सगरी धरम के परायन आ अध्यात्मविद्या में निरत रहेवाला कहेला लो ॥१४॥

त्वदीयधर्मसम्पत्तिं श्रुत्वाहं विस्मिताशयः।
व्रजन् कैलासमचलं त्वदन्तिकमुपागतः।।१५।।

भावार्थ : रऊवा धरमाचरन प्रवृत्ति के सुनके आश्चर्यचकित होके हम कैलास परबत से होके रऊवा लगे अईनी ॥१५॥

प्रीतोऽस्मि तव चारित्रैः शोभनैर्लोकविश्रुतैः।
दास्यामि ते वरं साक्षात् प्रार्थयस्व यथेप्सितम्।।१६।।

भावार्थ : हम राऊर लोकविश्रुत सुन्दर चरितर सुनी के खुश बानी । हम रऊवा के साक्षात वरदान देम । जवन चाही तवन माँगी ॥१६॥

इति प्रसादसुमुखे भाषमाणे गणेश्वरे।
प्रणम्य परया प्रीत्या व्याजहार विभीषणः।।१७।।

भावार्थ : खुशी से भरल गणेश्वरजी के अईसन कहला पर विभीषनजी परम प्रसन्नता के साथे परनाम करके बोलनी ॥१७॥

आगमानुग्रहादेव भवतः शिवयोगिनः।
दुर्लभाः सर्वलोकानां समपद्यान्त सम्पदः।।१८।।

भावार्थ : रऊवा जईसन शिवजोगी के अईलारूपी किरिपा से ही सगरी लोग के दुर्लभ सम्पत्ति मिलेला ॥१८॥

तथापि प्रार्थनीयं मे किञ्चिदस्ति गणेश्वर।
सुकृते परिपक्वे हि स्वयं सिद्ध्यति वाञ्छितम्।।१९।।

भावार्थ : तब भी हे गणेश्वरजी ! हमार कुछु परार्थना बाटे । पुण्य के पाक गईला पर जवन चाहल जाला ओकर सिद्धि हो ही जाला ॥१९॥

रावणो हि मम भ्राता माहेश्वरशिखामणिः।
अदृष्टशत्रुसम्बाधं शशास हि जगत्त्रयम्।।२०।।

भावार्थ : हमरा भाई रावन जवन शिवभक्त लोग में शिखामनि के जईसन श्रेष्ठ रहले आ जेकरा लगे शत्रु जईसन कवनो बाधा ना रहे, ऊ तीनुलोक पर शासन भी कईले ॥२०॥

यस्य प्रतापमतुलं सोढुमक्षमशक्तयः।
इन्द्रादयः सुराः सर्वे राज्यलक्ष्म्या वियोजिताः।।२१।।

भावार्थ : जेकर अतुल परताप के सहे में असमर्थ इन्द्र आदि सगरी देवगण (जेकरा द्वारा) राजलछिमी से रहित कर दिहल गईले ॥२१॥

स तु कालवशेनैव स्वचरित्रविपर्ययात्।
रणे विष्ण्वतारेण रामेण निहतोऽभवत्।।२२।।

भावार्थ : ऊ पराकरमी रावन काल के परभाववश अपना विपरीत चरितर के कारन विसनुजी के अवतारभूत श्रीराम के द्वारा जुद्ध में मारल गईले ॥२२॥

स तु रामशराविद्धः कण्ठस्खलितजीवितः।
अवशिष्टं समालोक्य मामवादीत् सुदुःखितः।।२३।।

भावार्थ : श्रीराम के बाण सन से पूरा बन्हाईल एही से कण्ठ में आ गईल परान वाला ऊ रावन बचल (अर्थात् रावनवंश में खाली बचल) हमरा के देख के दुःखीं होके बोलले ॥२३॥

विभीषण विशेषज्ञ महाबुद्धे सुधार्मिक।
अवशिष्टोऽसि वंशस्य रक्षसां भाग्यगौरवात् ।।२४।।

भावार्थ : हे धरम के आचरन करेवाला महाबुद्धिमान् विशेष जानकार ! अर्थात् विशेष ज्ञानवाला विभीषन ! राछस सन के महाभाग से खाली रऊवा राछस सन के वंश में बचल बानी ॥२४॥

वयमज्ञानसम्पन्ना महत्सु द्रोहकारिणः।
ईदृशीं तु गतिं प्राप्ता दुस्तरा हि विधिस्थितिः।।२५।।

भावार्थ : अज्ञानी, महान् लोग के विरोध करेवाला हम ए तरह के गति के पा लेहनी। भाग के स्थिति के उल्लंघन नईखे कईल जा सकत ।।२५।।

नवकं लिङ्गकोटीनां प्रतिष्ठाप्यमिह स्थले।
इति सङ्कल्पितं पूर्वं मया तदवशिष्यते।।२६।।

भावार्थ : हम पहिले ई संकलप कईले रहनी कि ए लंका नगरी में नव करोड़ शिवलिंग सन के स्थापना करेम। अभी ओईमें कुछ बच गईल बाटे ।।२६।।

कोटिषट्कं तु लिङ्गानां मया साधु प्रतिष्ठितम्।
कोटित्रयं तु लिङ्गानां स्थापनीयमतस्त्वया।।२७।।

भावार्थ : छह करोड़ लिंग के हम भलीभाँति (परान) परतिष्ठा कईनी। एकरा बाद तीन करोड़ लिंग सन के स्थापना रऊवा करे के बाटे ।।२७।।

इति तस्य वचः श्रुत्वा दीनबुद्धेर्मरिष्यतः।
तथा साधु करोमीति प्रतिज्ञातं मया तथा।।२८।।

भावार्थ : दीनबुद्धि आ मरेवाला ऊ रावन के बात सुनके हम ओईसने भलीभाँति करेम अईसन परतिज्ञा कईनी ।।२८।।

युगपच्छिवलिङ्गानां कोटित्रयमनुत्तमम्।
प्रतिष्ठाप्यं यथाशास्त्रमिति मे निश्चयोऽभवत्।।२९।।

भावार्थ : फेर निश्चय कईनी कि तीन करोड़ बढिया से बढिया शिवलिङ्ग सन के हम एक साथे शास्तरविधि से स्थापना करेम ।।२९।।

लिङ्गकोटित्रयस्येह युगपत् स्थापनाविधौ।
अविदन्नेकमाचार्यमहमेवमवस्थितः ।।३०।।

भावार्थ : तीन करोड़ शिवलिङ्गसन के स्थापना करे में समरथ एगो आचार्यजी के ना जानला के कारन हम ईहाँ (लंका में) ए तरह (अर्थात् बिना लिंगस्थापना के) पड़ल बानी ।।३०।।

शिवशास्त्रविशेषज्ञ शिवज्ञाननिधिर्भवान्।
आचार्यभावमासाद्य मम पूरय वाञ्छितम्।।३१।।

भावार्थ : रऊवा शिवजी के शास्तर सन के विशेष जानकार आ शिवज्ञान के खजाना बानी। आचार्य पद के स्वीकार करके हमार इच्छा के पूरन करी ॥३१॥

तस्येति वचनं श्रुत्वा राक्षसेन्द्रस्य धीमतः।
तथेति प्रतिशुश्राव सर्वज्ञो गणनायकः।।३२।।

भावार्थ : बुद्धिमान् राक्षस के राजा विभीषनजी के ए वचनावली के सुनके सब कुछु जानेवाला गणेश्वर ओईसने होई ई परतिज्ञा कईनी ॥३२॥

ततः सन्तुष्टचित्तस्य पौलस्त्यस्येष्टसिद्धये।
कोटित्रयं तु लिङ्गानां यथाशास्त्रं यथाविधि।।
त्रिकोट्याचार्यरूपेण स्थापितं तेन तत्क्षणे।।३३।।

भावार्थ : सन्तुष्ट चित्त विभीषनजी के इच्छा प्राप्ति के खातिर तीन करोड़ आचार्य के रूप में रेणुक जी तीन करोड़ शिवलिङ्ग सन के शास्तर आ विधिविधान के अनुसार जल्दीये स्थापना कर देहनी ॥३३॥

तादृशं तस्य माहात्म्यं समालोक्य विभीषणः।
प्रणनाम मुहुर्भक्त्या पादयोस्तस्य विस्मितः।।३४।।

भावार्थ : विभीषनजी ओ रेणुकाचार्यजी के ओ तरह के महिमा के देखके आश्चर्यचकित हो गईनी आ बार-बार भक्तिपूर्वक ऊहाँ के चरनन में परनाम करे लगनी ॥३४॥

प्रणतं विनयोपेतं प्रहृष्टं राक्षसेश्वरम्।
अनुगृह्य स्वमाहात्म्याद् रेणुकोऽन्तर्हितोऽभवत्।।३५।।

भावार्थ : विनय से युक्त, खुश आ नमस्कार कईल राक्षसेश्वर के ऊपर किरिपा करके रेणुकाचार्य अपना महिमा से अन्तर्हित हो गईनी ॥३५॥

विभीषणोऽपि हृष्टात्मा रेणुकस्य प्रसादतः।
शिवभक्तिरसासक्तः स्थिरराज्यमपालयत्।।३६।।

भावार्थ : रेणुकाचार्यजी के किरिपा से विभीषनजी भी खुशमनवाला आ शिवभक्तिरस से आप्लावित होके स्थिर राज्य के रक्षा में लाग गईनी ॥३६॥

रेणुकोऽपि महातेजाः सञ्चरन् क्षितिमण्डले।
प्रच्छन्नश्च प्रकाशश्च परमाद्वैतभावितः।।३७।।

कांश्चिद् दृष्टिनिपातेन करुणारसवर्षिणा।
अपरानुपदेशेन शिवाद्वैताभिमर्शिना।।३८।।

अन्यांश्च सहवासेन समस्तमलहारिणा।
कृतार्थयन् जनान् सर्वान् कृतिनः पक्वकर्मिणः।।३९।।

दर्शयित्वा निजाधिक्यं शिवदर्शनलालसः।
खण्डयित्वा दुराचारान् पाषण्डान् भिन्नदर्शनान्।।४०।।

यन्त्रमन्त्रकलासिद्धान् विमतान् सिद्धमण्डलान्।
विजित्य स्वप्रभावेण स्थापयित्वा शिवागमान्।।
आजगाम निजावासं कोल्लिपाक्यभिधं पुरम्।।४१।।

भावार्थ : महातेजस्वी रेणुकाचार्यजी भी पृथ्वीमण्डल पर घूमत, कबो परगट, कबो बिलाईल, परम अद्वैत भाव से भावित हो कुछु के करुना पूरन दृष्टि से किरिपा करत, कुछ के शिवाद्वैतविषयक उपदेश देत, अऊरी लोग के सगरी मल के हरन करेवाला सहवास से धनधन्य करत, पक्वकर्ममलाशय वाला सुकृतीजन लोक के आपन आधिक्य दिखाके कृतारथ करत, भिन्न दर्शन वाला, पाखण्डी दुराचारी सन के खण्डन करके, जन्तर-मन्तर कला में सिद्ध विरोधी सिद्ध मण्डल सन के आपन परभाव से जीत के शैवागम के स्थापना करके शिवजी के दर्शन के इच्छा से अपना आवास कोल्लिपाक्य नामक नगर में आ गईनी ।।३७-४१।।

तत्र सम्भावितः सर्वैर्जनैः शिवपरायणैः।
सोमनाथाभिधानस्य शिवस्य प्राप मन्दिरम्।।४२।।

भावार्थ : ऊहाँ शिवपरायन सगरी भक्तलोग के द्वारा सम्मानित होके रेणुकाचार्यजी सोमनाथ नामवाला शिवजी के मन्दिर गईनी ।।४२।।

पश्यतां तत्र सर्वेषां भक्तानां शिवयोगिनाम्।
तन्वानो विस्मयं भावैस्तुष्टाव परमेश्वरम्।।४३।।

भावार्थ : ऊहाँ पर देखेवाला सगरी शिवजोगी भक्त लोग के आश्चरज के बढ़ावत ओ भाव सन से परमेसर के स्तुति कईनी (आ चाहे भक्तिभाव सन के भक्त लोग के आश्चरज के बढ़ावत खुद ही शिवजी के स्तुति कईनी) ।।४३।।

देव देव जगन्नाथ जगत्कारणकारण।
ब्रह्मविष्णुसुराधीशवन्द्यमानपदाम्बुज ।।४४।।

भावार्थ : रेणुकाचार्य के द्वारा कईल गईल स्तुति— हे देवदेव, जगन्नाथ, संसार के कारनभूत माया आ परकीरति आदि के कारन, ब्रह्मा बिसनु आ सुराधीश अर्थात् इन्द्र के द्वारा रऊवा चरन कमल के वन्दना कईल जाला ।।४४।।

संसारनाटकभ्रान्तिकलानिर्वहणप्रद ।
समस्तवेदवेदान्तपरिबोधितवैभव ।।४५।।

भावार्थ : रऊवा संसारनाटकरूपी भरम के कला के निर्वहन करेवाला आ सगरी वेद वेदान्त के द्वारा पूर्णतया बोधितवैभव वाला बानी ।।४५।।

संसारवैद्य सर्वज्ञ सर्वशक्तिनिरङ्कुश।
सच्चिदानन्द सर्वस्व परमाकाशविग्रह।।४६।।

भावार्थ : रऊवा संसाररूपी रोग के वैद्य, सब कुछु जानेवाला, सर्वशक्ति, निरङ्कुश, सत् चित् आनन्दसरूप, सर्वस्व तथा पराकाशरूपी देहवाला बानी ।।४६।।

समस्तजगदाधारज्योतिर्लिङ्गविजृम्भण ।
सदाशिवमुखानेकदिव्यमूर्तिकलाधर ।।४७।।

भावार्थ : सगरी संसार के आधार आ ज्योतिर्लिंग के परकाशक (आ चाहे सगरी जगत् के आधारभूत ज्योतिर्लिंग के परकाशक) आ सदाशिव प्रमुख अनेक दिव्य मूर्ति सन के कलाकार बानी ।।४७।।

गुणत्रयपदातीत मलत्रयविनाशन।
जगत्त्रयविलासात्मन् श्रुतित्रयविलोचन।।४८।।

भावार्थ : सत्त्व आदि तीनों गुणों के स्तर के ऊपर स्थित, आणव आदि तीनु मल के विनाश करेवाला, त्रैलोक्य के रूप में चलेवाला (सृष्टि आदि) पाँच गो कृत्य खेल के आनन्द लेबेवाला आ ऋग्वेद, यजुर्वेद आ सामवेद नामवाला तीनुवेदरूपी त्रिनेत्र वाला बानी ।।४८।।

पाहि मां परमेशान पाहि मां पार्वतीपते।
त्वदाज्ञया मयैतावत्कालमात्रं महीतले।।
अचारि भवदुक्तानामागमानां प्रसिद्धये।।४९।।

भावार्थ : हे परमेश्वर! हमार रक्षा करी। हे पारबती पति! हमार त्राण करी। रऊवा आज्ञा से हम एतना समय तक पृथ्वीतल पर रऊवा द्वारा कहल गईल आगम सन के परसिद्धि (अर्थात् परचार परसार) के खातिर विचरन कईनी ।।४९।।

अतः परं स्वरूपं ते प्राप्तुकामोऽस्मि शङ्कर।
अन्तरं देहि मे किञ्चिदनुकम्पाविशेषतः।।५०।।

भावार्थ : हे शंकरजी ! एकरा बाद हम राऊर सरूप के पावे के चाहतानी। विशेष किरिपा करके हमरा के तनी-सा छुट्टी दी ।।५०।।

इत्युक्ते गणनायकेन सहसा लिङ्गात् ततः शाङ्करात्
वत्सागच्छ महानुभाव भवतो भक्त्या प्रसन्नोऽस्म्यहम्।
इत्युच्चैरगदाद् वचस्तनुभृतामाश्चर्यमासीत्तदा
दिव्यो दुन्दुभिराननाद गगने पुष्पं ववर्षुर्गणाः।।५१।।

भावार्थ : गणेश्वर के अईसन कहला पर अचानके शिवलिङ्ग से ऊँचा स्वर में बानी निकलल— 'हे वत्स! आव। हे महानुभाव! हम तहार (नवधा) भक्ति से खुश बानी।' ओ समय सब मानुस लोग के आश्चरज हो गईल। आकाश में देवदुन्दुभि बाजे लागल आ देवता लो फूल के बरषा कईल ।।५१।।

श्रुत्वा लिङ्गाद् वचनमुदितं शाङ्करं सानुकम्पं
संहृष्टात्मा गणपतिरथो ज्योतिषा दीप्यमानः।
जातोत्कण्ठैः परमनुचरैर्योगिभिः स्तूयमानो
ज्योतिर्लिङ्गं परमनुविशत् स्वप्रकाशं तदानीम्।।५२।।

भावार्थ : लिङ्ग से निकलल किरिपा से युक्त शाङ्करवचन के सुनके गणेश्वरजी के मन खुश हो गईल। जोती से ऊ दीव्यमान हो ऊठनी। परम-उत्कण्ठायुक्त अनुचरभूत जोगीलोग के द्वारा स्तुयमान ओ समय परम ज्योतिर्लिंग में परवेश कर गईनी ।।५२।।

लीने तस्मिन् शाङ्करे स्वप्रकाशे
दिव्याकारे रेणुके सिद्धनाथे।
सर्वो लोको विस्मिताभूत्तदानीं
शैवी भक्तिः सप्रमाणा बभूव।।५३।।

भावार्थ : दिव्य आकारवाला सिद्धनाथ रेणुकाचार्यजी के ओ स्वपरकाश शांकर लिंग में लीन हो गईला पर ओ समय सब लोग आश्चर्यचकित हो गईल आ शैवी भक्ति (प्रत्यक्ष रूप से) परमाणित हो गईल ।।५३।।

श्रीवेदागमवीरशैवसरणिं श्रीषट्स्थलोद्यन्मणिं
श्रीजीवेश्वरयोगपद्मतरणिं श्रीगोप्यचिन्तामणिम्।

श्रीसिद्धान्तशिखामणिं लिखयिता यस्तं लिखित्वा परान्
श्रुत्वा श्रावयिता स याति विमलां भुक्तिं च मुक्तिं पराम्।।५४।।

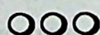
भावार्थ : फलश्रुति वर्णन— श्रीवेदागम वीरशैव सिद्धान्त के अनुसरन करेवाला, मङ्गलकारी छहो स्थल सन के उगत (अर्थात् चमकत) हुई मणि, जीव अऊरी ईश्वर के जोगरूपी कमल के सूरूज, गोप्यचिन्तामनि रूप श्रीसिद्धान्तशिखामणि के लिखेवाला जवन मनुष्य एकरा के लिखी आ चाहे जे लिखवाई आ चाहे लिखके सुनाई आ चाहे खुदही सुनी ऊ निरमल भोग आ पर मोक्ष के पाई ।।५४।।

ॐ तत्सत् इति श्रीशिवगीतेषु सिद्धान्तागमेषु शिवाद्वैतविद्यायां शिवयोगशास्त्रे श्रीरेणुकागस्त्यसंवादे वीरशैवधर्मनिर्णये श्रीशिवयोगिशिवाचार्यविरचिते श्रीसिद्धान्तशिखामणौ विभीषणाभीष्टवरप्रदानप्रसङ्गो नाम एकविंशतितमः परिच्छेदः।

ॐ तत्सत् श्रीशिवगीता के अन्तर्गत सिद्धान्तागम सन में शिवाद्वैतविद्या के अन्तर्गत शिवयोगशास्त्र में श्रीरेणुकागस्त्यसंवाद में वीरशैवधर्म के निर्णय में श्री शिवयोगि शिवाचार्य विरचित श्रीसिद्धान्तशिखामणि ग्रन्थ में विभीषणाभीष्टवरप्रदानप्रसङ्ग नामवाला एकईसवाँ परिच्छेद समाप्त भईल ।।२१।।



।। श्रीसिद्धान्तशिखामणी ग्रंथ समाप्त ।।







समीक्षा

परमेश्वर शिव इस सृष्टि के आदिदेव माने गये हैं। स्वयंभू शिव के द्वारा प्रोक्त वचन शैवागम कहलाते हैं। शैवागमों के उत्तरभाग में वर्णित सिद्धान्त वीरशैवमत कहलाता है। श्रीसिद्धान्त-शिखामणि सनातन वीर शैव धर्म का धर्मग्रन्थ है। अट्ठाईस शैवागमों के आधार पर श्रीशिवयोगी शिवाचार्य ने इसकी रचना की है। शैवागमों तथा लिङ्गपुराणादि में वर्णित षट्स्थल सिद्धान्त का १०१ स्थलों में विस्तार से विवेचन इस ग्रन्थ में किया गया है। एकोत्तरशतस्थलों का यह एक अपूर्व ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ केवल धार्मिक ग्रन्थ ही नहीं है अपितु एक दार्शनिक महाकाव्य भी है। इसमें सृष्टि के प्रत्येक तत्त्वों का समुचित विवेचन किया गया है। इसकी महाकाव्यत्व की समीक्षा भी हो चुकी है। इस ग्रन्थ के महत्त्व को ध्यान में रखते हुये ही काशी जगद्गुरु डॉ. टी. गणेशन (तमिल), कर्णाटक गुलबर्ग के डॉ. चन्द्रशेखर कपाड़े (मराठी गद्य), वाराणसी के डॉ. राधेश्याम चतुर्वेदी (हिन्दी), बेन्गलुरु के डॉ. एम. शिवकुमार स्वामी (अंग्रेजी), मैसूर के विद्वान् जी० राजशेखरैय्या (संस्कृत) वाराणसी के डॉ. प्रभुनाथ द्विवेदी (अवधी पद्य), वाराणसी के डॉ. हरिप्रसाद अधिकारी (नेपाली), अहमदाबाद की श्रीमती करुणा त्रिवेदी (गुजराती), यूक्रेन देश की कुमारी यूलिया कौशाद गौरी (रसियन भाषा) ने अनुवाद कार्य किया है। इसी उपक्रम में महास्वामीजी ने मुझे भोजपुरी भाषा में अनुवाद करने का आशीर्वाद प्रदान किया है। बिहार और उत्तरप्रदेश में बोली जानेवाली प्रमुख भाषाओं में भोजपुरी भी है (काशी में भी भोजपुरी बोली जाती है)। संस्कृत भाषा से भोजपुरी अनुवाद भी एक विनूतन कार्य है। इस प्रकार के अनुवाद से भारतवर्ष की सांस्कृतिक एकता भी प्रदर्शित होगी। सम्प्रति वीरशैव मत दक्षिण भारत में प्रमुख रूप से प्रचलित है अत: उत्तर भारत के लोग अपनी बोले जानेवाली भाषा में इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ का अनुवाद होने से इस सिद्धान्त से परिचित होंगे। श्रीसिद्धान्त शिखामणि का यह भोजपुरी अनुवाद लोकोपयोगी हो; ऐसी भगवान् विश्वनाथ से प्रार्थना है।

प्रवीण कुमार द्विवेदी
शोध छात्र, विशिष्ट संस्कृत अध्ययन केन्द्र
जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली-६७

शैव भारती शोध प्रतिष्ठान
डी.३५/७७, जंगमवाडीमठ, वाराणसी - २२१००१

ISBN : 978-93-82639-15-2

Price : Rs. 300.00